प्रकाशक—

नाथूराम प्रेमी,

हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालय,

हीराबाग, बम्बई नं० ४.

प्रथम बार

मार्च, १९४०

मुद्रक—

रघुनाथ दिपाजी देसाई,

न्यू भारत प्रिंटिंग प्रेस,

६, केळेवाडी, गिरगाव मुंबई

प्रकाशकका वक्तव्य

सर यदुनाथ सरकार जैसे संसार-प्रसिद्ध इतिहासकारका परिचय देना य उनकी अमर कृतियोंके वारेमें कुछ लिखना सूर्यको दीपक दिखानेके समान होगा। सत्तर वर्षके इस तपस्वीने अपने अथक परिश्रमद्वारा भारतीय इतिहासके विभिन्न कालोंका ठीक ठीक इतिहास लिखने और तत्कालीन घटनाओं तथा परिस्थितियोंपर पूरा पूरा प्रकाश डालनेका जीवनभर भरसक प्रयत्न किया और आज भी वह उसी लगन और उत्साहके साथ अपने कार्यमें लगा हुआ है। पाँच मोटी मोटी जिल्दोंमें औरंगजेवका इतिहास लिखनेके वाद उन्होंने इर्विन लिखित 'लेटर मुग़ल्ज़' नामक अपूर्ण ग्रन्थका सम्पादन किया, और अव 'फाल आफ दी मुग़ल एम्पायर' शीर्षक बृहत् ग्रन्थकी रचना कर रहे है जिसके तीन खण्ड तो प्रकाशित हो चुके है और अन्तिम चौथा खण्ड जल्द ही तैयार हो जावेगा। इनके सिवाय और भी कई ग्रन्थ सर यदुनाथकी लेखनीसे निकल चुके है और उन्होंने सम्पादन तो न जाने कितनोंका किया है।

सर यदुनाथ सत्रहवीं और अठारहवीं शताब्दीके भारतीय इतिहासके आचार्य कहे जा सकते है। इन्हीं दो शताब्दियोंने दक्षिणी भारतमें मराठोंकी नवीन सत्ताका उत्थान और साथ ही उसका पतन और अन्त भी देखा। सर यदुनाथने मराठोंके इतिहासका पूरा पूरा अध्ययन किया है, निष्पक्ष दृष्टिसे मराठोंके नेताओंकी ठीक ठीक योग्यताको कूता है और उनकी विफलताओंको खोजकर उनके सच्चे कारणोंको ढूँढ़ निकाला है। सर यदुनाथने अँग्रेजीमें शिवाजीकी जीवनी भी लिखी है जो अपने ढंगकी एक ही है। देश-विदेशके विद्वानोंने उसकी मुक्त कण्ठसे प्रशंसा की है। उसके तृतीय संस्करणपर रायल एशियाटिक सोसायटीकी वम्बईवाली शाखाने उन्हें 'जेम्स केम्वेल सुवर्णपदक' देकर सम्मानित किया था।

स्वयं बंगाली-भाषा-भाषी होते हुए भी सर यदुनाथ हिन्दीके बडे ही हिमायती है। उनके विचारानुसार हिन्दी भाषा ही राष्ट्र-भाषा हो सकती है। वे स्वयं हिन्दी लिख-पढ लेते है और हिन्दीमें भाषण भी दे लेते हैं। बरसोंसे आपकी इच्छा थी कि मेरे अंग्रेजी 'शिवाजी' का हिन्दी संस्करण भी प्रकाशित हो, तदनुसार आपने स्वयं ही उसका संक्षिप्त एवं संशोधित हिन्दी संस्करण तैयार किया जो 'विशाल भारत'में क्रमशः प्रकाशित होता रहा। उसीको हम आज पुस्तकाकार प्रकाशित कर रहे हैं। इधर पिछले दस वर्षोंमें जो जो नई ऐतिहासिक खोजें हुई है उनको भी इस ग्रन्थमें सम्मिलित कर दिया गया है जिससे इस संस्करणका महत्त्व बहुत बढ़ गया है। जहाँतक हम जानते हैं, हिन्दीमें अबतक शिवाजीका ऐसा सच्चा और प्रामाणिक जीवनचरित्र प्रकाशित नहीं हुआ है। आशा है कि हिन्दी-भाषा-भाषी इस ग्रन्थका हृदयसे स्वागत करेंगे।

हम सर यदुनाथके बहुत ही कृतज्ञ हैं कि उन्होंने ऐसे ग्रन्थ-रत्नको प्रकाशित करनेका हमें अवसर दिया। यदि हमारे पाठकोंने सहयोग दिया तो हम सर यदुनाथके अन्य ग्रन्थोंके भी हिन्दी संस्करण प्रकाशित करनेका प्रयत्न करेंगे।

—नाथूराम प्रेमी

भूमिका

शिवाजीके नामसे कौन परिचित नहीं ? किसे शिवाजीके स्वातंत्र्य-युद्धका पता नहीं ? शिवाजीकी वीरताकी कहानियाँ तो घर घर प्रचलित हैं। परन्तु उनकी महत्ताका ठीक ठीक तौल करना, —उनकी सफलताका सच्चा महत्त्व आँकना कोई आसान बात नहीं है।

इन पिछले पैंतीस बरसोंमें हमें शिवाजीसम्बन्धी बहुत-सी नई महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक सामग्री प्राप्त हुई है जिससे उनके चरित्र, जीवन और कार्यपर बहुत-सा नया प्रकाश पड़ता है। इस सबके अध्ययनके बाद शिवाजीके सम्बन्धमें आजतककी प्रचलित बहुत-सी धारणाओंको त्याग करना हमें अत्यावश्यक प्रतीत होता है। यह सोचना कि शिवाजी एक चतुर शक्तिशाली डाकू या एक सफल विद्रोही-मात्र थे अब असम्भव है। एक निरे डाकू या कोरे धर्मान्ध व्यक्तिके लिए नये राज्यकी स्थापना करना संभव नहीं; उसके लिए कुशल राजनीतिज्ञकी जरूरत होती है। चौदह वर्षोंमे ही शिवाजीने एक स्वाधीन राज्यकी स्थापना करके स्वयंको एक स्वतन्त्र 'छत्रपति' शासक घोषित कर दिया था। हमारे प्राचीन ऋषियोंके विचारानुसार उनमें दैवी अंश अवश्य था जो 'नराणां नराधिपः' के रूपमें प्रकट हुआ।

शिवाजीने अपने युगकी तीन बड़ी भारतीय शक्तियोंके,—मुगल साम्राज्य, बीजापुर राज्य और पुर्तगालियोंके लगातार विरोध और अगणनीय कठिनाइयोंका सामना करते हुए भी अपना एक स्वतन्त्र राज्य स्थापित कर उसे सुदृढ़ बनाया। परन्तु क्या वे एक राष्ट्रका निर्माण कर सके थे ? कोई डेढ शताब्दी तक मराठोंका पूर्णतया जातीय राज्य रहा जिसपर न तो

विदेशियोका प्रभाव ही था और न उनका कोई हस्तक्षेप ही। परन्तु इस दीर्घकालीन हिन्दू-पद-पातशाहीके अन्तर्गत रहकर भी मराठे एक राष्ट्रके रूपमे संगठित न हो पाए। अधिक तो क्या, अपने छोटेसे देशमे ही या अपनी जातिमे भी वे राष्ट्रीय भावनाका संचार न कर सके।

आजके ही समान १७ वीं शताब्दीमे भी जाति-भेदका भारतीय जीवनपर अकथनीय प्रभाव था, उसके सामने देश या धर्मकी विशेष पूछ न थी। कुलीनता या उच्च घरानोकी मर्यादाकी भावनाने इन छोटी छोटी जातियोमे भी अनेकानेक उपविभाग उत्पन्न कर दिए थे। परन्तु राष्ट्र-निर्माणके लिए यह आवश्यक है कि जाति-भेद, सप्रदायोका प्राधान्य और कुलीनताके अत्यधिक महत्त्वको मिटाया जावे। जातीय शिक्षा और जातिके नैतिक उत्थानके लिए लगातार कोशिश किए बिना किसी भी जाति या राष्ट्रके लिए अपना अस्तित्व बनाए रखना संभव नहीं। परन्तु मराठे शासकोने इन सब बहुत आवश्यक बातोकी ओर न कभी ध्यान ही दिया, और न समाजमे ही किसीने इस ओर कभी प्रयत्न किया।

स्वय मराठा जातिमें भी न तो राष्ट्रीय भावना पाई जाती थी और न देशभक्ति ही देखनेको मिलती थी। निरन्तर विरोध और शताब्दियोकी मार-काटके उस युगमें जब एकके बाद दूसरे राज्यका जल्दी जल्दी उत्थान और पतन हो रहा था, यदि किसी वस्तुका स्थायित्व था तो केवल जमीनका। नवीन विजेताओने प्रायः पुराने शासकोकी दी हुई जागीरों, जमींदारियो या दान-पत्रोसे कोई छेड़छाड न की। इसी आर्थिक नींवपर मराठा समाज स्थित था, और मराठोंके लिए स्वदेशकी अपेक्षा उनका ‘ वतन ’ (=उनकी अपनी जायदाद) अधिक प्यारा और महत्त्वपूर्ण था। अतएव उनके वतनको छीन लेनेवाले या वतनपर लगान बढा देनेवाले स्वदेशी शासककी अपेक्षा वे ऐसी विदेशी सत्ताको अधिक पसन्द करते थे जो उनके वतनको बनाए रखनेको तैय्यार हो।

इन सब कठिनाइयोंके होते हुए भी शिवाजीने एक स्वाधीन राज्यकी नींव डाली, और कुछ कालके लिए ही क्यों न हो, उन्होंने महाराष्ट्रके अपने प्रदेशमें शान्ति और सुव्यवस्था स्थापित की।

शिवाजीके घरानेकी सत्ताका अन्त हो गया, उनका स्थापित किया हुआ राज्य भी नष्ट हो गया, फिर भी उनके जन्मसे कोई तीन शताब्दी बाद आज जब इतिहासकार भारतीय इतिहासकी विविध प्रवृत्तियोंपर एक दृष्टि डालता है तो उसे शिवाजीकी वह उच्च-कोटिकी योग्यता देखनेको मिलती है जो पंजाब-केसरी रणजीतसिंहसे लेकर अब तकके अन्य किसी भी हिन्दू शासकमें नहीं पाई जाती। शिवाजीका नाम आज भी नवीन स्फूर्ति पैदा करता है, और उनका आदर्श भविष्यमें भी हमारे नवयुवकोंमें नवीन आशाका संचार करता रहेगा।

शिवाजी एक आदर्श गृहस्थ, अनुकरणीय शासक और अद्वितीय राज्य-निर्माता थे, और इसी कारण संसारके महान् पुरुषोंमें उनकी गणना की जाती है। उनके व्यक्तिगत जीवनमें न तो कोई दुर्गुण ही हमें मिलता है और न आलस्यका नाम ही हम उनमें पाते हैं। एक शासक और संगठन-कर्ताके रूपमें उन्होंने अनोखी कुशलता बताई। धार्मिक असहिष्णुताके उस युगमें भी उन्होंने अन्य धर्मानुयायियोंके प्रति अनुकरणीय उदारता दिखाई।

कुछ थोड़ेसे ही आवश्यक परिवर्तनोंके बाद शिवाजीके आदर्श आज भी हमारे लिए आदर्शका काम दे सकते हैं। प्रजा शान्तिसे रहे, राज्यमें धर्म या जातिके कारण ही किसी व्यक्तिको न तो कोई असुविधा ही हो और न कोई हानि ही पहुँचे; शासन शुद्ध, उपकारी, प्रगतिशील एवं सुदृढ हो; जहाजी बेड़ोंसे व्यापारकी उन्नति हो; सुशिक्षित एवं सुसज्जित सेना देशकी रक्षा करे,—इन्हीं सारी बातोंका उन्होंने प्रयत्न किया। उन्होंने क्रियाशील नीतिद्वारा अपने देशकी उन्नति की और उसे कर्म-निष्ठ बनाया।

शिवाजी मराठा जातिके निर्माता थे, और साथ ही मध्यकालीन भारतके सर्वश्रेष्ठ रचनात्मक-प्रतिभा-सम्पन्न व्यक्ति भी। राज्योंका

अन्त हो जाता है, साम्राज्य बन बन-कर छिन्न भिन्न हो जाते हैं, महान् घरानोंका नाम-लेवा भी नहीं रह जाता है, परन्तु तब भी शिवाजीके समान वीर राजाओंकी सुस्मृति सारे जन-समाजके लिए एक अमूल्य वसीयतके रूपमें रह जाती है और पतित राष्ट्रके लिए वह आशा-किरण बन कर प्रकट होती है।

और इसी आशासे प्रेरित होकर मैं आज अपनी लिखी हुई शिवाजीकी जीवनीका यह सशोधित हिन्दी संस्करण प्रकाशित कर रहा हूँ। कोई दस वर्ष पहले ही यह तैयार हो चुका था, और इसके विभिन्न अध्याय एक एक करके 'विशाल भारत' मे छप भी चुके थे। हिन्दीके प्रसिद्ध प्रकाशक श्रीयुत नाथूरामजी 'प्रेमी'के सहयोगसे ही आज यह संस्करण पुस्तकाकार प्रकाशित हो रहा है। इन पिछले वर्षोंमे भी बहुत कुछ नई ऐतिहासिक खोजे हुई हैं, और इस संस्करणकी प्रेस-कापी तैयार करते समय उन सब नवीनतम खोजोंके परिणामोका भी इस ग्रन्थमे समावेश कर दिया गया है जिससे इस सस्करणका महत्त्व बहुत बढ गया है। अन्तमे मुझे यह लिखते हर्ष होता है कि मेरे प्रिय शिष्य महाराजकुमार डाक्टर रघुवीर सिंहकी असीम चेष्टा और सतत यत्नके बिना यह ग्रन्थ तैयार नहीं हो सकता था।

मै चाहता हूँ कि हमारे शिवाजी जैसे धीर-वीर आदर्शरूप पूर्व पुरुषोकी प्रामाणिक जीवनियोका घर घर प्रचार हो, छोटे-बड़े सब उन्हें पढें और उनसे प्रेरित होकर देश और राष्ट्रको उन्नति-पथकी ओर ले जावे। अतएव मैंने इस बातका भरसक प्रयत्न किया है कि इस ग्रन्थकी भाषा ऐसी सरल और सीधी हो कि स्कूलमे पढने वाला दस-बारह बरसकी उम्रका लड़का भी उसे आसानीसे समझ सके।

कलकत्ता
१४ फरवरी, १९४०

—यदुनाथ सरकार

विषय-सूची

१	महाराष्ट्र देश और मराठा जाति	१
२	शिवाजीका अभ्युदय	१३
३	मुगलों और बीजापुरके साथ शिवाजीकी पहली लड़ाई	३६
४	शिवाजीका दक्षिण महाराष्ट्रमें प्रवेश ...	५३
५	जयसिंह और शिवाजी : संघर्ष तथा सन्धि ...	७५
६	औरंगजेबके साथ शिवाजीकी मुलाकात और आगरेसे उनका निकल भागना	९३
७	शिवाजीकी स्वाधीन राज्य-स्थापना ...	११७
८	शिवाजीका राज्याभिषेक	१३९
९	छत्रपति शिवाजीका दक्षिण-विजय ...	१५१
१०	शिवाजीकी सामुद्रिक शक्ति	१७२
११	कनाड़ामे मराठा प्रभाव	१९०
१२	शिवाजीकी जीवन-संध्या	२०१
१३	शिवाजीका राज्य और उनकी शासन-प्रणाली...	२१८
१४	शिवाजीके गुरु और शिव-परिवार ...	२३२
१५	इतिहासमे शिवाजीका स्थान	२४२
	परिशिष्ट (१) घटनावली और महत्त्वपूर्ण तारीखें	२५९
	परिशिष्ट (२) ऐतिहासिक सामग्री ...	२७६
	अनुक्रमणिका	२७९

ब्रिटिश म्यूजियममें सुरक्षित तसवीर

हालेण्डमें प्रकाशित तसवीर

शिवाजी

पहला अध्याय

महाराष्ट्र देश और मराठा जाति

सन् १९३१ की मर्दुमशुमारीसे मालूम होता है कि सारे भारतके ३५ करोड़ लोगोंमेसे दो करोड़से भी ज्यादा नर-नारी मराठी भाषा बोलते है। इनमेसे एक करोड़से कुछ अधिक बम्बई इलाकेमे, क़रीब आधे करोड़ मध्यप्रदेश और बरारमे तथा बत्तीस लाख निज़ामके राज्यमे रहते है। वर्तमान् बम्बई प्रान्तके आधे बाशिन्दोकी, मध्यप्रदेशके एक-तिहाई लोगोकी और निज़ाम-राज्यके एक तिहाई लोगोकी मातृ-भाषा मराठी है। यह भाषा दिनपर दिन फैलती जा रही है। इसका कारण यही है कि मराठी साहित्य बढा-चढ़ा है एवं बढ़ रहा है, और मराठा-जाति भी तेज़ और उन्नतिशील है।

खास महाराष्ट्र देश कहनेसे दक्षिण-भारतके पठारके पश्चिम-

प्रान्तका क़रीब अट्ठाईस हज़ार वर्ग-मीलका प्रदेश समझा जाता था; अर्थात् नासिक, पूना और सतारा ये तीनों ज़िले पूरे, अहमदनगर तथा शोलापुर ज़िलोंका कुछ हिस्सा; उत्तरमे ताप्ती नदीसे लेकर दक्षिणमे कृष्णा नदीकी पहली शाखा वर्णा नदी तक और पूर्वमे सीना नदीसे लेकर पश्चिमकी ओर सह्याद्रि (पश्चिमी घाट) के पहाड़ों तक। सह्याद्रि पार होकर अरब-समुद्र तक फैली हुई जो लम्बी ज़मीन है, उसके उत्तरके आधे हिस्सेको कोकण कहते हैं और उसके दक्षिणके भागको कनाड़ा और मलाबार कहते हैं। इसी कोकण-प्रदेशके थाना, कोलाबा और रत्नागिरी नामके तीन ज़िले और इन्हीं ज़िलोंसे लगा हुआ सावन्तवाड़ी नामका देशी राज्य, यों कुल मिलाकर यह सारा प्रदेश क़रीब दस हज़ार वर्ग-मीलका है। यहाँके बहुतेरे लोग आजकल मराठी बोलते है, परन्तु ये सब लोग जातिके मराठा नहीं हैं।

खेती-बारी और ज़मीनकी हालत

महाराष्ट्र देशमें पानी कम बरसता है और वह भी ठिकानेसे नहीं, इस कारण यहाँ अन्न कम उपजता है। किसान साल-भर मेहनत करके किसी तरह पेट भरने मात्रके लिए फसल तैयार करता है। किसी किसी साल इतनी भी फसल तैयार नहीं होती। सूखी पहाड़ी ज़मीनमें धान पैदा नहीं होता, तथा जौ और गेहूँ भी बहुत कम होते है। इस देशकी खास फसल और साधारण लोगोंके खानेकी चीज़े केवल जुआर, बाजरा और मक्का हैं। कभी कभी पानी न पड़नेके कारण सारी फसल सूख जाती है और ज़मीनका ऊपरी भाग जलकर धूलके रंग-सा हो जाता है; कोई भी चीज़ हरी नहीं बचती, और अनगिनती औरत-मर्द, गाय-बछड़े भूखों मर जाते हैं। इसी

कारण दक्षिणमें अकाल पड़नेकी बातें बहुत सुनते हैं।

यह देश पहाड़ों और जंगलोंसे ढका हुआ है। यहाँ उपज कम होनेसे लोगोकी संख्या भी बहुत कम है। उत्तर-दक्षिणमें सह्याद्रि पहाड़की चोटियाँ आसमान तक ऊँची समुद्रकी तरफ जानेका रास्ता रोक रही हैं। इसी सह्याद्रिकी बहुत-सी शाखाएँ पूरबकी ओर निकली हुई है। इस प्रकार यह देश अनेक छोटे-छोटे हिस्सोमे बँटा हुआ है। हरएक हिस्सेमें तीन ओर पहाड़ोंकी दीवारें हैं और बीचमें पूरबकी ओर मुँह करके तेज़ बहनेवाली एक पुरानी नदी है। इन्हीं टुकड़े-टुकड़े हुए ज़िलोमे मराठे लोग एकान्तवास करते थे। बाहर संसारमे क्या हो रहा है, इसकी उन्हें कुछ भी खबर न थी। इन लोगोके पास न धन-धान्य था, न वैसा कोई कारीगरीका पेशा था, न व्यापारियोका झुण्ड था और न राह-चलतोके मनको खींचनेवाली बढ़ी-चढ़ी राजधानी ही थी; परन्तु भारतके पश्चिम समुद्रके बन्दरों तक पहुँचनेके लिए इसी देशको पार कर जाना पड़ता था।

पहाड़ी क़िले

इसी एकान्तवासके कारण मराठा जाति आपसे आप स्वाधीनता-प्रिय हुई और अपनी जातिके विशेषत्वकी रक्षा कर सकी। इस देशमें स्वयं प्रकृति देवीने अनेक पहाड़ी क़िले तैयार कर दिये हैं, जिनमें आश्रय लेकर मराठे सहजमे बहुत दिन तक अपनी रक्षा कर बहुत-से चढ़ाई करनेवालोंको बाधा दे सकते थे; जिससे आखिरकार इनके थके-माँदे शत्रुको खिन्न होकर लौट जाना पड़ता था।

पश्चिम-घाटकी श्रेणीके अनेक पहाड़ोकी चोटियोंका प्रदेश समतल और आस-पास बहुत दूर तक ढलवाँ है, परन्तु इनके ऊपर बहुतसे

झरने हैं। पहलेके ज़मानेमे इन पहाड़ोंसे ट्रैप (Trap) पत्थरके गिरनेसे बहुत बड़ा बेसाल्ट (Basalt)—खड़ी दीवार अथवा स्तूपाकार बाहर निकला है। वह फोड़ा वा खोदा नहीं जा सकता। पहाड़की चोटीपर पहुँचनेके लिए पहाड़में सीढ़ियाँ काटनेसे और रास्ता रोकनेके लिए दो-चार दरवाज़े बनानेहीसे एक-एक अलग-अलग क़िला तैयार हो जाता था, जिसमें कोई खास मेहनत करने या धन खर्च करनेकी ज़रूरत नही होती थी। इस प्रकारके क़िलेमें रहकर पाँच सौ सैनिक भी बीस हजार शत्रुओंको बहुत दिन तक रोके रख सकते थे। ऐसे अनगिनती किलोंसे यह देश भरा हुआ है, इस कारण तोपोंके बिना महाराष्ट्र देशको जीतना संभव नहीं।

इस जातिका मेहनतीपन और सादगी

जिस देशकी यह दशा हो, वहाँ कोई भी व्यक्ति आलसी नहीं रह सकता; पुराने महाराष्ट्र देशमे कोई भी बेकार नहीं रहता था। दूसरेकी कमाईके ऊपर कोई भी जीवन बसर नहीं करता था; गाँवका ज़मींदार (पटेल या प्रधान) भी सरकारी काम करनेके बाद अपना अन्न आप उपार्जन करता था। देशमे धनियोंकी संख्या बहुत कम थी और वे भी कारोबार करनेवालोंमेंसे होते थे। ज़मींदारोंकी बड़ाई नकद जमाके लिए उतनी नहीं होती थी, जितनी कि अन्न और सैन्य-संग्रहके लिए होती थी।

इस तरहके समाजमें हरएक स्त्री-पुरुषको शारीरिक परिश्रम किये बिना चारा नहीं; उसमें कोई भी शौकीन या नाज़ुक-मिजाज व्यक्ति नहीं रह सकता। प्रकृति देवीके कठोर शासनमे सबको सादे ढंगसे किसी प्रकार जीवन-निर्वाह करना पड़ता था, इसीलिए उन लोगोंके वास्ते

भोग-विलास तो दूर रहा, एकाग्रचित्तसे उपार्जित ज्ञान, बारीक कारीगरी, यहाँ तक कि सभ्यता भी असंभव बातें थीं। मराठोंकी प्रधानताके कालमे इन विजेता मराठोंके व्यवहारको देखनेसे उत्तर-भारतवासियोको ये घमण्डी, मदोन्मत्त, उजड्ड, सभ्यताहीन और कुछ हद तक जंगली मालूम होते थे।

उनमेसे बड़े लोग भी कला-कौशल, बारीक कारीगरी, हिलमिल कर रहने और भलमनसाहतपर बहुत ही कम ध्यान देते थे। यह सच है कि अठारहवीं शताब्दीमें भारतके बहुतसे प्रान्तोंमें मराठे राज्य करते थे, परन्तु उन लोगोंकी बनवाई हुई कोई अच्छी इमारत, सुन्दर चित्र या उमदा हस्तलिखित किताब नही मिलती।

मराठोंका जातीय चरित्र

महाराष्ट्र देश सूखा और स्वास्थ्यप्रद है। इस प्रकारके जल-वायुका गुण भी कम नहीं है। इसी कठोर जीवनके कारण मराठोंके स्वभावमें अपने आपपर भरोसा रखना, साहस, मेहनत, ढोंग-रहित सीधा-सादा व्यवहार, समाजमे सबके साथ एक-सा बर्त्ताव, और हरएक आदमीको अपनी इज़्ज़तका ख़याल, तथा स्वाधीन रहनेकी इच्छा इत्यादि, बड़े-बड़े गुण उत्पन्न हुए थे। सातवीं सदीमें चीनके यात्री हुयान्‌चुयाङ्‌ने अपनी ऑखो मराठोंको इस प्रकार देखा था—"इस देशके रहनेवाले तेज़ और लड़ाकू है, ये उपकारको कभी नहीं भूलते और अपकार करनेवालेसे उसका बदला लेना चाहते हैं। कोई तकलीफ़में हो और मदद चाहे तो वे अपना सर्वस्व त्याग करनेको तैयार हो जाते हैं, और अपमान करनेवालेको बिना मारे नहीं छोड़ते है। बदला लेनेके पहले वे शत्रुको चेतावनी भी देते है।"

जिस समय यह बौद्ध यात्री भारतमे आया, उस समय मराठे दाक्षिणात्यके मध्य-भागमें खूब फैले हुए और धन-जन-पूर्ण राज्यके अधिकारी थे। उसके बाद चौदहवीं सदीमे मुसलमानोंकी विजयके कारण वे लोग स्वराज्य खोकर दाक्षिणात्यके पश्चिमी पहाड़ो और जंगलोंमें रहने लगे। इस प्रकार ग़रीबी हालतमें वे एक कोनेमे पड़े रहे। इस निर्जन प्रदेशके जंगल, ऊसर ज़मीन और जंगली जानवरोंके साथ लड़ते-लड़ते धीरे-धीरे ये लोग सभ्यता और उदारता तो खो बैठे, परन्तु साथ ही उनमे साहस, होशियारी और कष्ट सहन करनेकी काफ़ी शक्ति आ गई। मराठी सेना साहसी, तक़लीफ बर्दाश्त करनेवाली और परिश्रमी होती है। रातको चुपचाप छापा मारना, शत्रुके लिए जाल फैलाकर छिपा रहना, अफ़सरका मुँह न ताकते हुए अपनी बुद्धिके बलपर तकलीफ़से बचना और लड़ाईकी चाल बदलनेके साथ-साथ पैतरा बदलनेकी खूबी आदि—एक साथ इतने गुण अफ़ग़ान और मराठा-जातिको छोड़ एशिया महाद्वीप-भरमे और किसी दूसरी जातिमें नहीं पाये जाते।

सामाजिक समान-भाव

धनी और सभ्य समाजमे जिस तरह नाना प्रकारका जात-पाँतका बखेड़ा और ऊँच-नीचका भेद पाया जाता है, सोलहवीं शताब्दीके सीधे-साधे ग़रीब मराठोंमे वैसा कुछ नहीं था। वहाँ धनीका मान या पद दरिद्रीसे बहुत ऊँचा नहीं होता था। ग़रीबसे ग़रीब आदमी सैनिक भी था और कहीं खेतीका भी काम करता था, इसलिए वह भी बराबर इज्ज़तका हक़दार समझा जाता था। वे आगरे और दिल्लीके अकर्मण्य भिखमंगोंके या पराये मत्थे खानेवाले खुशामदी

टट्टुओंका-सा घृणित जीवन व्यतीत करनेसे बचे रहते थे, क्योंकि इस देशमे ऐसे आदमियोंको खिलाने-पिलानेवाला कोई न था। पुरानी चाल और ग़रीबीके कारण मराठा-समाजमे औरते न घूँघट डालती थीं और न अन्त:पुरमे ही रहती थी। स्त्रियोके स्वाधीन होनेका फल यह हुआ कि महाराष्ट्रमे जातीय शक्ति खूब बढ़ गई, और सामाजिक जीवन अधिक पवित्र और सरस हो गया। इस देशके इतिहासमें बहुत-सी काम करनेवाली बहादुर औरतोके नाम भी पाये जाते है। केवल वे ही घराने जो क्षत्रिय होनेका दावा रखते थे, अपनी स्त्रियोंको घरके भीतर परदेमे रखते थे। इसके विपरीत ब्राह्मणोके घरकी स्त्रियाँ भी परदेमे नहीं रहती थीं, बहुत-सी तो घोड़ेपर चढ़नेमे उस्ताद थीं।

देशके धर्मने भी इस समाजकी समानताको बढ़ाया। ब्राह्मण लोग शास्त्र-ग्रन्थोको अपने हाथमे रखकर धर्म-संसारके प्रभु हो बैठे थे, परन्तु नये-नये धार्मिक फिरके उठ खड़े हुए, जिन्होने देशमें लाखो नर-नारियोंको सुझाया कि आदमी अच्छे चाल-चलनके बलसे ही पवित्र होता है—जन्मके कारणसे नहीं, सिर्फ क्रिया-कर्म करनेसे मुक्ति नहीं होती, मुक्ति होती है भीतरी भक्ति-भावसे। इन सब नये धर्मोने भेद-बुद्धिकी जड़ काट दी। उनका मुख्य स्थान था इस देशका प्रधान तीर्थ—पंढरपुर। जिन साधु और सुधारकोंने इस भक्ति-मन्त्रसे देशवासियोमे नया प्राण डाला, उनमे बहुत-से अशिक्षित और अब्राह्मण—दर्जी, बढ़ई, कुम्हार, माली, मोदी, हज्जाम, यहाँ तक कि मेहतर—भी थे। आज तक भी वे लोग महाराष्ट्रमे भक्तोके दिलपर अधिकार जमाए बैठे है। तीर्थ-तीर्थमें सालाना मेलेके दिन

अगणित संख्यामें इकट्ठे होकर मराठे अपनी जातीय एकता और हिन्दू-धर्मकी एकप्राणताका अनुभव करते है। जाति-भेद तो कायम रहा, परंतु गाँव-गाँवमे ज़िले-ज़िलेमे भेद-बुद्धि कम होने लगी।

साधारण लोगोंका साहित्य और भाषा

मराठोका जन-साहित्य भी इस जातीय एकता-बन्धनमे सहायक हुआ। तुकाराम, रामदास, वामन पण्डित और मोरोपन्त प्रभृति सन्त-कवियोके सरल मातृ-भाषामे रचित गीत और नीति-वचन घर-घर पहुँचे। " दक्षिण देश और कोकणके हरएक शहर और गॉवमे, खासकर बरसातके समय, धार्मिक मराठा गृहस्थ घरके बाल-बच्चो और बन्धुवर्ग-सहित भक्ति-भावसे श्रीधर कविकी 'पोथी' का पाठ सुनते हैं। बीच-बीचमे कोई हॅसता है, तो कोई दुःखकी साँस लेता है और कोई रोता है। जब चरम करुणरसका वर्णन आता है और श्रोता एक साथ दुःखसे रो उठते हैं, तब तो पढ़नेवालेकी आवाज़ भी नहीं सुन पड़ती। "

" पुरानी मराठी कवितामे गम्भीर अर्थवाले लम्बे लम्बे सुन्दर पद नहीं थे, मनको उछालनेवाली वीणाकी झंकार नहीं थी, बातोंका दाव-पेच नहीं था, परन्तु उनके बजाय था अनपढ़ जन-साधारणका प्रिय पद्य 'पोवाड़ा' अर्थात् 'कथा'। इससे जातीयताका भाव जाग उठा है। दाक्षिणात्यकी समतल भूमि, सह्याद्रिकी गहरी तराई, पहाड़ोंकी ऊँची चोटियों और गाँव-गाँवमे दरिद्र 'गोन्धाली' (चारण) घूमते हैं। आजकल भी वे उन्हीं पुराने ज़मानेकी घटनाओको लेकर कि किस प्रकार उनके पुरखोंने हथियारके ज़ोरसे सारे भारतको जीता था, परन्तु आखिरमें समुद्र-पारसे आये हुए विदेशियोंसे हारकर तितर

बितर हो अपने देशको भाग आये थे, 'कथा' और 'कहानी' कहते है। गाँवके लोग भीड़ लगाकर इस कहानीको सुनते है। कभी तो तन्मय होकर चुप हो रहते है और कभी आनन्दके उल्लासमें उन्मत्त हो जाते है।" (एकवर्थ)

मराठा जन-साधारणकी भाषा आडम्बरशून्य, कर्कश और निरी काम-काजकी भाषा है। इसमें उर्दूकी कोमलता, शब्द-रचनाका दाव-पेंच, भाव-प्रकाशकी विचित्रता, सभ्यता और अमीरी कुछ भी नहीं है। मराठे स्वाधीनता, समानता और प्रजातंत्र-प्रिय थे, इस बातका प्रमाण उनकी भाषामें पाया जाता है; उनकी भाषामें 'आप' कह कर कोई किसीको नहीं पुकारता था—सबके सब 'तुम' कहकर पुकारते थे।

इस प्रकार सत्रहवीं शताब्दीके मध्यमें महाराष्ट्रकी भाषा, धर्म, विचार और जीवनमें एक आश्चर्यजनक एकता और समानताकी सृष्टि हुई थी। केवल राष्ट्रीय एकताकी कमी थी, उसे भी पूरा कर दिया शिवाजीने। उन्होंने ही पहले पहल जातीय स्वराज्य स्थापित किया। उन्होंने दिल्लीपर शासन करनेवालोंको अपने देशसे निकाल बाहर करनेके लिए जिस युद्धका सूत्रपात किया था, उसीमें बहाए गए खूनसे उनके नाती-पोतोंके समयमें जाकर मराठोंमें एकता उत्पन्न हो गई। अन्तमे पेशवाओंके शासन-कालमें सारे भारतके राज-राजेश्वर (सम्राट्) बननेके उद्योगके फलस्वरूप जो जातीय गौरवका ज्ञान, जातीय ऐश्वर्य, तथा जातीय उत्साह जाग उठा, उसने शिवाजीके व्रतको पूर्ण कर दिया। न जाने कितनी भिन्न भिन्न जातियाँ एक साँचेमें ढलकर एक मराठा जाति, एक राष्ट्रके (Nation) रूपमे संगठित हो

गई। भारतके और किसी भी प्रदेशमें ऐसा नहीं हुआ।

खेतिहर और लड़ाकू जाति

'मराठा' कहनेसे बाहरके लोग जाति (नेशन) या जन-संघका अर्थ समझते है, परन्तु महाराष्ट्रमे इस शब्दका अर्थ एक विशेष जाति है, समग्र महाराष्ट्रवासी नेशन नहीं। इसी मराठा-जाति तथा उनके नज़दीकी कुटुम्ब, कुनबी-जातिके बहुतसे लोग खेतिहर, सिपाही या चौकीदारीका काम करते है। सन् १९३१ ई० की गिनतीमें मराठा-जाति पचास लाख और कुनबी लोग पचीस लाख थे। इन्हीं दो जातियोको लेकर शिवाजीकी सेना तैयार की गई थी, यद्यपि अफ़सरोंमे बहुत-से ब्राह्मण और कायस्थ भी थे।

"मराठा (अर्थात् खेतिहर) जाति सीधी सादी, खुले दिलकी, स्वाधीन बुद्धिवाली, उदार और भली होती है। यह भलाई करनेवालोंका विश्वास करती है, बहादुर और बुद्धिमान् होती है, बीती हुई बड़ाईको याद करके घमण्डके मारे फूल जाती है। ये लोग मुर्गी और मांस खाते है, शराब और ताड़ी पीते है, परन्तु नशेबाज़ नहीं होते। बम्बई-प्रान्तके रत्नागिरि ज़िलेकी मराठा-जातिके जितने लोग फौज़मे भर्ती होते है, उतने और किसी जातिके नहीं होते। बहुत-से लोग पुलिस या हरकारेका काम भी करते है। कुनबियोकी तरह मराठे भी शान्त और भलेमानस होते है, क्रोधी बिलकुल नहीं होते, बल्कि अधिकतर साहसी और रहमदिल होते है। ये कम-खर्च, नम्र, और धार्मिक होते है। सबके सब कुनबी आजकल खेती करनेवाले हो गये है। वे दृढ़, शान्त, मेहनती, कायदेसे चलनेवाले, देवी-देवताओंके भक्त और चोरी-डकैती या अन्य अपराधोंसे दूर रहते है। उनकी औरतें भी

मर्दोंकी तरह मज़बूत और कष्ट सहनेवाली होती हैं। इन लोगोंमें विधवा-विवाहकी भी प्रथा है।" (बम्बई गेज़ेटियर)

यहाँतक तो मराठोंके गुणकी बात हुई, अब उनके कुछ दोषोंको भी सुनिए—

मराठोंके चरित्रके दोष

मराठोंकी राज-शक्ति विदेशकी लूटके बलपर जीवित थी। मालिक-का व्यवहार नौकरोंके बर्तावको देखकर मालूम होता है। शिवाजीके जीवन-कालमें भी उनके ब्राह्मण अफसर घूस माँगते और वसूल करते थे।

मराठे लोग अपने शासनकी नींव सुदृढ़ आर्थिक आधारपर नहीं रख सके, इसीसे उनका राज अधिक दिनोंतक नहीं टिक सका। इस जातिमे एक भी आदमी बड़ा महाजन, बनिया, कारोबार चलानेवाला, यहाँतक कि सरदार या ठेकेदार तक नहीं हुआ। मराठा राज-शक्तिकी खास कसर थी धनके बन्दोबस्त करनेकी कमज़ोरी। इनके राजा हमेशा कर्ज़दार रहते थे। वक्तपर और अच्छी तरहसे राज्यका खर्च चलाना तथा राज-काजकी बागडोरको ठीक रखना, उन सबोंके लिए असंभव था।

परन्तु आजकलके मराठा एक बेजोड़ धनके धनी है। सिर्फ़ तीन पुश्त पहले उनकी जातिने लड़ाईके सैकड़ो मैदानोंमे मौतका सामना किया था; राजकालके दूत-कर्म और सन्धि-सम्बन्धी विचार तथा षड्यन्त्रके जालमें वह लिप्त थी; मालगुज़ारी और आमद-ख़र्चका प्रबन्ध करती थी; उसे साम्राज्यसम्बन्धी अनेक बातोंकी चिन्ता करनी पड़ती थी। उन लोगोंने भारतके जिस इतिहासकी सृष्टि की है, हम लोग आज उसी

भारतके बाशिन्दे हैं। इस सब कीर्ति-गाथाकी याद आनेपर आज भी मराठोंके हृदयमें अवर्णनीय तेजका संचार हो जाता है। तीव्र बुद्धि, धैर्य, श्रमशीलता, सीधा-सादा चाल-चलन, मनुष्य-जीवनके ऊँचे आदर्शके अनुसरण करनेकी प्रबल इच्छा, जो उचित समझते हैं उसे ही करनेकी दृढ़ प्रतिज्ञा, त्यागकी अभिलाषा, चरित्र-बलकी दृढ़ता और सामाजिक एवं राष्ट्रीय समानतामे विश्वास—इन सब गुणोंमे मराठोंके मध्यम श्रेणीके लोग भारतकी किसी दूसरी जातिसे कम नहीं है, बल्कि अनेक बातोंमें बढ़े-चढ़े है। काश इसके साथ साथ इन लोगोंमें अंग्रेज़ोंकी तरह संगठन और प्रबन्ध करनेकी चतुराई, एक साथ काम करनेकी शक्ति, लोगोंसे काम लेने और उनको वशमे रखनेकी ताक़त, दूरदृष्टि, और अपार लोकव्यवहार-बुद्धि (Common Sense) रहती, तो आज भारतके इतिहासका स्वरूप दूसरा ही होता।

दूसरा अध्याय

अभ्युदय

भोंसले-वंश

शिवाजीके उत्थानके साथ ही आजकलके मराठोंके जातीय जीवनका भी आरंभ होता है। उन्होंने ही बलहीन, अप्रसिद्ध और बिखरे हुए लोगोंको इकट्ठा करके उन्हें शक्ति प्रदान की तथा उन्हें राष्ट्रीय एकतामे गूँथकर हिन्दुओंके इतिहासमें एक नई सृष्टि-रचना की। यह बात उनकी व्यक्तिगत कीर्तिकी द्योतक है, जिसका प्रमाण उनके आदि-पुरुषोंके इतिहास और उनकी पुश्तैनी पूँजीको खोजकर देखनेसे पाया जाता है। बहुत तेज़ बहनेवाली नदीकी नाईं उनकी उत्पत्ति एक अज्ञात और अन्धकारमय छोटे स्थानसे ही हुई थी।

'मराठा' जातिकी जिस शाखामें शिवाजीका जन्म हुआ था, उसकी उपाधि 'भोंसले' थी। इन भोंसलोंका परिवार दाक्षिणात्यमे अनेक जगह फैला हुआ है। वे राजपूतोंके वंशोंकी तरह एक ही पुरखोंकी सन्तान न थे; और न वे किसी एक मुखियाके अधीन रहते थे; हरएक आदमी अपने अपने परिवारको लेकर अपने गाँवमे रहता था। न वे किसी एक अधिपतिका ही कहा मानते थे और एक ही वंशके होते हुए भी वे एक दूसरेसे अधिक मिलते-जुलते न थे। यद्यपि मध्य-युगके इतिहासमे मराठा-जातिके दो-चार धनिकों, बड़े आदमियों अथवा ज़मींदारोंके नाम पाये जाते है, तथापि साधा-

रणातः इन लोगोंका जाति-पेशा खेती और पशु-पालन था। सोलहवीं शताब्दीके शुरूमें बहमनी-साम्राज्यके टूटनेके समय और उसके सौ वर्ष बाद अहमदनगरके निज़ामशाही राज-वंशके जल्द ही नष्ट हो जानेसे मराठोंको एक बड़ा-भारी मौक़ा मिला। देशकी राजनैतिक अवस्थाके कारण मराठा खेतिहरोंके बहुत-से बलवान्, चतुर और तेज़ पुरुषोंने हल छोड़कर तलवार पकड़ी, और फ़ौजी पेशा अख्तियार कर वे ज़मींदार और राजा बनने लगे। एक कृषकका पुत्र किस तरह धीरे धीरे डाकुओंका सरदार, किरायेकी फौजका अफसर, राजदरबारका इज्ज़तदार सामन्त और आखिरमें स्वतंत्र राजाके पदको प्राप्त कर सकता है—इसके सबसे बड़े उदाहरण हैं स्वयं शिवाजी।

शिवाजीके पुरखे

ईसाकी सोलहवीं शताब्दीके मध्यमे बाबाजी भोंसले पूना ज़िलेके हिंगनी और देवलगाँव नामक दो गाँवोंके पटेलका काम करते थे। गाँवके अन्य किसानोंके खेतोंमे उपजे हुए अन्नका एक हिस्सा उनको पटेलीके कामके वेतन-स्वरूप मिलता था। इसके सिवा वे अपनी कुछ निजी खेती भी करते थे। इन्हीं दो उपायोंसे उनकी गृहस्थी चलती थी। उनके मरनेके बाद उनके दो लड़के मालोजी और बिठोजी पड़ोसियोंसे अनबन होनेके सबबसे बाल-बच्चोंसहित गाँव छोड़कर विख्यात एलोरा पहाड़के नीचे विरुल गाँवको चले गये। वहाँपर खेतीसे कम आमदनी देख वे सिन्धखेड़के ज़मींदार और अहमदनगर राज्यके सेनापति लखूजी यादवरावके पास जाकर मामूली घुड़सवारोंकी फ़ौजमें नौकरी करने लगे। हरएकको बीस रुपये मासिक तनख्वाह मिलती थी।

शाहजी और जीजाबाई

यादवराव भी भोसलोंके ही समान जातिके मराठा थे। मालोजीके बड़े लड़के शाहजी देखनेमें बड़े सुन्दर थे। यादवराव उस बालकको बहुत प्यार करते थे और अपने साथ उसे अन्तःपुरमें ले जाया करते थे। एक समय होलीके दिन यादवराव अपनी बैठकमे भाई-बन्धु और नौकर-चाकरोंके साथ नाच-गानका आनन्द ले रहे थे। एक तरफ गोदमें पाँच वर्षके बालक शाहजीको और दूसरी तरफ अपनी तीन वर्षकी लड़की जीजाबाईको बैठाकर, उन दोनोंके हाथोमे उन्होंने अबीर दिया, और दोनों बच्चोंको होली खेलते देख हँसते हुए कहा—"भगवानने लड़कीको कैसी सुन्दरी बनाया है। शाहजी भी रूप-रंगमे इसीके सदृश है। ईश्वर योग्यको योग्यके साथ मिलावे।"

यादवरावने हँसीमें यह बात कही थी, परन्तु मालोजी झट खड़े होकर ज़ोरसे बोले—"आप सब लोग गवाह हैं। यादवराव आज अपनी लड़कीको मेरे लड़केके साथ वाग्दत्ता कर चुके।" यह बात सुनते ही यादवराव खिन्न-मन हो लड़कीका हाथ पकड़ अन्तःपुरको चल दिये, और अन्य दिनोकी तरह शाहजीको अपने साथ नहीं ले गये।

यादवरावकी स्त्री गिरिजाबाई बड़ी बुद्धिमती, तेज़ एवं बहादुर रमणी थीं। सन् १६३० ई० में जिस समय निज़ामशाहने विश्वासघात करके भरे दरबारमे उनके स्वामीका खून किया, उस समय गिरिजाबाई इस महान् दुःख-संवादको सुनकर ज़रा भी नहीं घबराई, वरन् उसी समय बाल-बच्चो, नौकर-चाकर तथा धन-सम्पत्ति ले घोड़ेपर सवार हो, राजधानी छोड़कर बाहर निकलीं और दल-बलके साथ बाकायदे कूच करते हुए निरापद स्थानमें जा पहुँचीं। शत्रु-पक्ष न तो

उन्हें क़ैद ही कर सका और न उनकी सम्पत्ति ही लूट सका। मुसलमान इतिहास-लेखकोंने उनकी इस समयकी स्थिर बुद्धि और साहसकी खूब प्रशंसा की है। होलीकी मजलिसमें जो जो बातें हुई थीं, उन्हें सुन गिरिजाबाई गुस्सेमें आकर पतिसे बोलीं—"....क्या इसी दरिद्री, आवारा, मामूली घुड़सवारके लड़केके साथ मेरी लड़कीका सम्बन्ध होगा? ब्याह तो बराबरीके घरोंमे ही होता है। आपने कैसा, मूर्खोंका-सा काम किया है! उनकी इस अनुचित बातका माकूल जवाब क्यों नहीं दिया? उन्हे धमकाया क्यों नहीं?"

मालोजीकी उन्नति

यादवरावने दूसरे ही दिन दोनो भाइयोको तनख्वाह दे उन्हें नौकरीसे बर्खास्त कर दिया। विवश होकर मालोजी और विठोजी विरुल गाँवको लौट आये और फिर खेती करने लगे। एक दिन रातको मालोजी खेतके अन्नकी चौकीदारी कर रहे थे, उस समय उन्होंने एक बड़े साँपको एक बिलसे बाहर आते हुए और फिर उसी बिलमें घुसते हुए देखा। पुराना साँप ज़मीनमे गड़े हुए धनकी रखवाली करता है, ऐसा विश्वास उस समय बहुतसे देशोमे प्रचलित था। मालोजीको यह बिल खोदनेसे उस जगह सोनेकी मुहरोसे भरी हुई लोहेकी सात कढ़ाहियॉ मिलीं। *

---

* बादमें लोग ऐसा कहने लगे कि मालोजी देवताओंके बड़े भक्त थे। एक दिन माघ महीनेकी रातको खेतमें पहरा देते हुए उन्होंने देखा कि जमीनसे श्रीदेवी (लक्ष्मी अर्थात् शिवानी) निकलीं और चमकते हुए गहनेसे शोभित हाथ उनके मुख और पीठपर फेरकर बोलीं—" बच्चा! आशीर्वाद देती हूँ। यह बिल खोदनेसे सात कढ़ाही-भर अशरफियॉ मिलेंगी। वह मैंने तुमको दान दीं। तेरे वंशकी सत्ताईसवीं पीढी तक राजपद चलेगा। तेरी सब इच्छाएँ पूर्ण होंगी।"

इतने दिनों बाद मालोजीको अपनी उच्चाकांक्षाओंको पूर्ण करनेका साधन प्राप्त हुआ। यह गुप्त धन चमारगुण्डा गाँवके एक विश्वासी महाजनके पास रखकर, उन्होंने उसमेंसे कुछ खर्च करके घोड़े, ज़ीन, हथियार और तम्बू आदि खरीदे। फिर एक हज़ार घुड़सवारोंकी फौज तैयार की, और उसके सेनापति बन फलटन गाँवके निम्बाल-कर-वंशके ज़मींदारके साथ मिलकर लूट-पाट करना आरम्भ कर दिया। थोड़े ही दिनोंमें उनका बल और नाम इतना बढा कि शेष-प्राय निज़ामशाही सुलताननें उनको अपनी सरकारी सेनामें भर्ती करके सेनापतिकी उपाधि दे दी। मालोजी अब मामूली घुड़सवार या किसान न रहे। वे अब यादवरावकी बराबरीके एक अच्छे रईस हो गये और तब यादवरावने अपनी लड़की शाहजीके साथ ब्याह दी। सम्भवतः यह विवाह सन् १६०४ मे हुआ।

धन-वृद्धिके साथ साथ मालोजीने लोगोंकी भलाई और दान-धर्म आदिके अनेक काम किये। मन्दिर बनाने और ब्राह्मणोंको भोजन देनेके सिवा उन्होंने सतारा ज़िलेके उत्तरी भागमे महादेव पहाडके ऊपर चैत्रके महीनेमे शिवजीके दर्शनके लिए आये हुए लाखों यात्रियोंका जल-कष्ट दूर करनेके लिए पत्थर काटकर एक बड़ा तालाब खुदवाया। कहते हैं कि महादेवजीने प्रसन्न होकर उन्हे स्वप्नमे यह वर दिया था कि 'हम तुम्हारे वंशमे अवतार लेकर देवता और ब्राह्म-णोंकी रक्षा करेंगे और दक्षिण देशका राज्य तुम्हे देगे।'

धन और मानका सुख भोगकर मालोजी कुछ समयके बाद स्वर्ग-वासी हुए। उनके बाद उनकी ज़मींदारी और फ़ौजका संचालन उनके छोटे भाई विठोजीने किया। विठोजीके मरनेपर (अनुमानतः सन्

२

१६२७ ई० में) शाहजी पुश्तैनी सम्पत्तिके हक़दार और भोंसले-वंशकी सेनाके नायक हुए। यह दल इतने दिनोंमे वढते बढते दो ढाई हज़ार आदमियोका हो चुका था।

शाहजीका उत्थान

सन् १६२६ ई० मे निज़ामशाही राज्यका चतुर मन्त्री मलिक अम्बर अस्सी वर्षकी उम्रमें मर गया, और उसका पुत्र फतह खाँ वज़ीर हुआ। इसके एक वर्षके भीतर ही दिल्लीके बादशाह जहाँगीर और बीजापुरके सुलतान इब्राहीम आदिलशाहकी भी मृत्यु हो गई। दक्षिणमे वडा भारी गोलमाल हुआ और लड़ाई छिड़ गई।

इतिहासमे शाहजीके कामका ज़िक्र पहलेपहल सन् १६२८ ई० मे पाया जाता है। उस साल वे फतह खाँकी आज्ञासे सेना लेकर मुग़ल-राज्यके पूर्व खानदेश प्रदेशको लूटने गये थे, परन्तु उस जगहके मुगल सेनापतिके बाधा देनेपर वे लौटनेको मजबूर हुए। सन् १६३० ई० में अहमदनगर राज्य अन्तिम साँसें ले रहा था। दरबारमें रोज़ दलबन्दीके झगड़े, लड़ाई और ख़ूनखराबियाँ होने लगीं। राज-काजमे गोलमाल और राज्य-भरमे अंधेर शुरू हो गया। शाहजीने इसी मौकेपर अपने लिए राज्य जीतना शुरू कर दिया। कभी वे मुग़लोंका साथ देते, कभी बीजापुर राज्यके आदिलशाहके साथ हो जाते और कभी फिर निज़ामशाहकी नौकरी करने लगते थे। आखिर सन् १६३३ ई० मे मुग़लोंने निज़ामशाहीकी राजधानी दौलताबादको जीतकर सुलतानको कैद कर दिया।

उस समय शाहजीने इसी वंशके एक बालकको 'निज़ामशाह' नाम देकर मुकुट पहनाया; और खुद सर्वेसर्वा बनकर तीन बरस

तक पूना और दौलताबादके इर्द-गिर्द शासन किया। परन्तु सन् १६३६ ई० में मुगलोंके साथ लड़ाईमे हारनेपर उन्हें सब छोड़छाड़कर बीजापुर सरकारके यहाँ नौकरी करनेको मजबूर होना पड़ा।

शिवाजीका जन्म और बाल्य-काल

जीजाबाईके गर्भसे दो पुत्र जनमें—शम्भूजी* (सन् १६२३ में) और शिवाजी (सन् १६२७ ई० में)। दूसरे लड़केके जन्मसे पहले जीजाबाई जुन्नर शहरके नज़दीक शिवनेरके पहाड़ी क़िलेमें रहती थीं। उन्होंने अपनी होनेवाली सन्तानकी मंगल-कामनाके लिए क़िलेकी अधिष्ठात्री देवी 'शिवा-भवानी' की मनौती मानी थी। इसी कारण लड़केका नाम रखा 'शिव' जो दक्षिणियोंके उच्चारणके अनुसार 'शिवा' हो गया।

सन् १६३० से १६३६ ई० तकका काल शाहजीने लड़ाई-झगड़ों, कठिनाईयो और अपनी हालतके हेर-फेरमें ही काटा। इसके कारण उनको बहुत जगह घूमना पड़ा। उनकी स्त्री और दोनों लड़के शिवनेरके किलेमे आश्रय लेकर रहते थे। सन् १६३६ ई०मे मुगलोके साथ उनकी लड़ाई खतम हो गई। उस समय यद्यपि उन्होंने बीजापुर राज्यकी नौकरी कर ली थी, परन्तु वे महाराष्ट्रमें अधिक नहीं रहे। वे मैसूर देशमे अपनी नई जागीर बसाने चले गये। वहाँ वे अपनी दूसरी स्त्री तुकाबाई मोहिते और उसके लड़के व्यंकोजी (उर्फ़ एकोजी) को लेकर रहने लगे। पहली स्त्री और उसके लड़केको मानो उन्होने त्याग ही दिया। वे उन लोगोंको खाने पीनेके खर्चके लिये उसी

---

* शम्भूजी तरुण अवस्थामे कनकगिरिके किलेपर आक्रमण करते समय मारे गये। इतिहास इनके सम्बन्धमें मूक है।

ज़िलेकी एक छोटी-सी जागीर देकर चले गये थे। जीजाबाई अब वयस्क हो गई थीं, उनकी उम्र उस समय ४१ वर्षकी थी। मेरा अनुमान है कि नवयौवना सुन्दरी सौतके आनेसे वे स्वामीके सुहागसे वंचित हो गई थीं। जन्मसे लेकर दस वर्षकी आयु तक शिवाजीने अपने पिताको बहुत कम देखा था, और उसके बाद तो बाप-बेटे दोनो बिलकुल ही अलग हो गये।

शिवाजीकी मातृ-भक्ति और धर्म-शिक्षा

पतिके प्रेमसे वंचित होनेके कारण जीजाबाईका मन धर्मकी ओर झुका। वह पहले भी धर्मप्राणा थीं, पर अब तो एकदम संन्यासिनीके समान रहने लगीं। फिर भी वक्तपर ज़मीदारीके ज़रूरी काम-काज किया करती थीं। माताके इन धार्मिक भावोका प्रभाव उनके पुत्रके बाल-हृदयपर पड़ा। शिवाजी अकेलेमे बढ़ने लगे। उनके पास न तो कोई साथी ही था, न भाई, न बहिन और न पिता ही। इस निर्जन जीवनके कारण मा-बेटेमें बहुत घनिष्ठता हो गई। शिवाजीकी स्वाभाविक मातृ-भक्ति आगे चलकर एकदम देव-भक्ति तुल्य हो गई।

शिवाजीने बचपनसे ही अपना काम अपने आप करना सीखा। उन्हे किसी दूसरेकी आज्ञा अथवा सलाह लेनेकी ज़रूरत नहीं पड़ी। इस प्रकार जीवनके आरम्भहीसे उन्होने ज़िम्मेदारी उठाना और खुद काम करनेका तजुर्बा हासिल किया।

प्रसिद्ध पठान बादशाह शेरशाहका लड़कपन भी ठीक शिवाजीके समान रहा था। दोनो ही मामूली जागीरदारके लड़के थे; दोनों सौतेली माके प्रेममे मुग्ध पिताकी अवहेलनामे पले थे; दोनोने वन और जंगलोंमे घूमकर, किसानों और डाकुओंके साथ हेल-मेल करके

देश और आदमियोंका यथार्थ अनुभव प्राप्त किया था । दोनोने चरित्रकी दृढता, मेहनत करना, अपने ऊपर भरोसा रखना—यह सब अपने आप ही सीखा था, दोनोने पुश्तैनी जागीरके काम-काजकी देख-भालसे ही अपने भावी राज्य-शासनका ज्ञान प्राप्त किया था; दोनोके चरित्र और बुद्धि बहुत कुछ मिलती जुलती थीं और दोनो ठीक एक-सी घटनाओंके बीच होकर बढ़े थे ।

पूनेकी हालत

आजकल पूना शहर बम्बई-प्रदेशकी दूसरी राजधानी है । वह मराठोंकी शिक्षा, सभ्यता और उच्च अभिलाषाओंका केन्द्र है, परन्तु सन् १६३७ ई०मे जिस समय बालक शिवाजी वहाँ रहनेके लिए आये थे, उस समय पूना एक छोटा-सा गाँव था और उसकी हालत बड़ी बुरी थी । छः वर्षकी लगातार लड़ाईके कारण देश उजाड़ हो गया था । अनेको हमला करनेवाले बारबार आकर गाँव लूटते, जला देते और लूट-मार, मार-काट करके चले जाते थे । उनके चले जानेके बाद इस अन्धेर खातेका लाभ उठाकर आसपासके डाकुओंके सरदार अपना कब्ज़ा जमा लेते थे ।

रोज़-रोज़की लड़ाई, मार-काट, गोलमाल और बहुतसे आदमियोंके मारे जानेसे आसपासके पहाड़ोके जंगलोमे भेड़ियोका वंश खूब बढ़ा, और उनके मारे पूना ज़िलेके गाँवोमे भेड़ो, और बच्चोकी जान आफतमे थी; डरके मारे खेती-पातीका काम बन्द-सा ही हो रहा था ।

दादाजी कोण्डदेव

सन् १६३७ ई० मे जब शाहजी बीजापुरकी नौकरी स्वीकार करके मैसूर जाने लगे, उस समय उन्होने दादाजी कोण्डदेव नामक

एक भले चालचलनवाले चतुर ब्राह्मणको पूनाकी जागीरका कार्य-कर्त्ता नियुक्त करके कहा—" मेरी पहली स्त्री और पुत्र शिवाजी शिवनेरके किलेमें हैं। उनको पूनेमे लाकर उनकी देख-रेख करो। " तदनुसार कोण्डदेवने वैसा ही किया। *

शाहजीकी पूनेकी जागीरकी मालगुज़ारी कागज़ोंके अनुसार चालीस हज़ार होण (प्रायः डेढ़ लाख रुपये) थी, परन्तु उस समय उसमें उपज बहुत कम थी। दादाजी कोण्डदेव ज़मींदारीके काममे बड़े पक्के थे। उन्होने सह्याद्रि-पर्वतकी चोटियोमें रहनेवाले पहाड़ियोंको इनाम देकर आसपासके भेड़ियोके झुंडका नाश कराया। उन लोगोको अपने हाथमे लेकर उन्होने पहले तो बहुत थोड़ी मालगुज़ारीपर उन्हें ज़मीन दी और फिर धीरे-धीरे मालगुज़ारी बढानेका तय करके उन्हे नीचेकी तराइयोमे रहने और खेती करनेके लिए भी राजी कर लिया। इस तरहसे देशमे लोगोंकी बस्ती और उसके साथ-साथ खेतीका काम भी शीघ्रतासे बढ़ने लगा।

शान्ति-रक्षाके लिए उन्होने कितने ही स्थानीय लोगोको पहरेदार बनाकर जगह-जगहपर थाने स्थापित कर दिये। दादाजीकी कड़ी देख-रेख और पक्षपातहीन न्यायके कारण देशमे डाकू और बदमाशोंका नाम तक न रहा। उनकी न्यायप्रियताके सम्बन्धमें एक कथा प्रचलित है। उन्होने 'शाहजी-बाग़' के नामसे एक फलोका बगीचा लगाया था। उन्होने इस बातकी कड़ी आज्ञा दे रखी थी कि उस बग़ीचेके पेड़ोंकी पत्ती भी तोड़नेसे अपराधीको सज़ा मिलेगी। एक

---

* दो वर्ष बाद (१६३६ ई०) जीजाबाई और शिवाजी दादाके साथ शाहजीके पास बंगलोर गये, परन्तु उन्होंने उन लोगोको फिर पूना भेज दिया।

दिन भूलकर स्वयं उन्होंने एक आम तोड़ लिया; पर नियमकी बात याद आनेपर वे अपने आपको दण्ड देनेके लिए अपने अपराधी हाथको काटनेको तैयार हो गये। परन्तु दूसरे लोगोंने उनको ऐसा करनेसे रोका। इसके बाद वे इस कसूरको याद रखनेके लिए हमेशा एक लोहेकी जंजीर पहना करते थे!

शिवाजी लिखना-पढ़ना नहीं जानते थे, परन्तु इससे उनकी कोई हानि नहीं हुई। अकबर, हैदरअली, रणजीतसिंह—हिन्दुस्तानके ये तीन कर्मवीर शासक भी निरक्षर थे। उस समय मध्ययुग था, और अकसर लोग अनपढ़ होते थे। उस जमानेमे पोथीकी इस विद्याका अभाव होते हुए भी शिवाजीका मन अन्धकारपूर्ण और अकर्मण्य नहीं रह सका, और न उनकी व्यवहार-कुशलताहीमे कुछ कमी हुई। कारण यह था कि शिवाजीने रामायण और महाभारतकी कथाओं, और पुराणोंके पाठ और कीर्तनको सुन-सुनकर भारतके प्राचीन ज्ञान, धर्म तथा कथाओंके मर्मकी अच्छी जानकारी प्राप्त कर ली थी। उन्होंने इन्हीं कथाओंको सुनकर राज-नीति, धर्म-नीति, रण-चातुरी और राज-काजकी पद्धति सीखी थी। जिस जगह कथा-कीर्तन होता, वहाँ वे जरूर जाते और तन्मय होकर सुनते थे। यदि कोई हिन्दू सन्यासी या मुसलमान पीर आता था, तो वे उसके पास जाकर अपनी भक्ति प्रकट करते और उससे धर्मोपदेश लेते थे। इसीसे शिक्षाका यथार्थ फल जो होना चाहिए था, वह उन्हे सम्पूर्ण-रूपसे उपलब्ध हुआ था।

मावले जाति

पूना जिलेके पश्चिम भागमे, सह्याद्रि-पर्वतके ऊपर होकर गई हुई ९० मील लम्बी और १२ से लेकर २४ मील तक चौड़ी जमीनका

एक प्रदेश है। उसका नाम ' मावल '* अर्थात् सूर्यास्तका देश या पश्चिम है। यह प्रान्त बहुत ऊँचा-नीचा है। वह खड़े ढालू और ऊँचे टीलोंसे भरा है। उसके नीचे टेढ़ी-मेढ़ी और गहरी तराई फैली हुई है। इस नीचेकी समतल भूमिपर छोटे बड़े अनेक पहाड़ एक दूसरेपर सिर उठाये खड़े हैं। उनके ऊँचे-ऊँचे स्थानोंपर कसौटी पत्थरकी अनेक बड़ी-बड़ी चट्टानें हैं। यह प्रदेश जगह-जगहपर पहाड़ों और जंगलोंसे घिरा है। वृक्षोंके नीचे घनी झाड़ियाँ, लताएँ और पेड़-पत्ते हैं, जो चलनेवालोंका रास्ता रोकते हैं।

इसी मावल-प्रदेशके उत्तरकी ओर कोली नामक एक पुरानी असभ्य डाकुओंकी जाति रहती थी और दक्षिणमें मराठे किसान रहते थे। मावलके मराठोंके शरीरमें कुछ पहाड़ी जातिका रक्त मिला हुआ है। ये देखनेमें तो दुबले, पतले और काले होते हैं, परन्तु भीतरसे बड़े गठीले और फुर्तीले होते हैं। इस देशकी हवा सूखी और हलकी है, और दक्षिणकी अन्य जगहोंकी अपेक्षा यह स्थान कम गरम है। मावलकी आबहवा शरीरके बलको बढ़ानेवाली है।

शिवाजीके मावले बन्धुगण

दादाजीने मावल देशको अपने कब्जेमें कर लिया। उन्होंने बहुत-से गाँवोंके तहसीलदारों (देशपाण्डों) को भी अपने अधीन कर लिया। जिन्होंने उनका शासन स्वीकार नहीं किया, उन्हें उन्होंने लड़कर खतम कर दिया। इस प्रकार उस प्रान्तमें अमन-चैन स्थापित करनेका

---

*मराठी भाषामें 'मावळणे' (infinitive) क्रियापदका अर्थ, 'अस्त होना' है। इस पर्वतमय देशको उत्तरमें ' डांग ', बीचमें अर्थात् ठेठ महाराष्ट्रमें ' मावळ ', और दक्षिणमें अर्थात् कर्णाटकमें ' मल्लाड़ ' कहते हैं।

फल यह हुआ कि मावलके सब गाँव पूनाके अधिकारीके लिए धन और जनसे सहायता देनेको तैय्यार हो गये। शिवाजीके प्रायः सभी अच्छेसे अच्छे सिपाही इसी मावल देशके निवासी थे। यही उनको लड़कपनके साथी और अत्यन्त स्वामि-भक्त नौकर मिले थे। इन्हीं लोगोंके साथ बालक शिवाजी पश्चिमी घाटके पहाड़ो, वनो, जंगलों, नदीके तटो और तराइयोंमे घूमा-फिरा करते थे। वे धीरे-धीरे कष्ट-सहिष्णु और बडे मेहनती हो गये, और उन्हें देश और देशवासियोका बड़ा अच्छा ज्ञान हो गया। शिवाजीकी बढ़तीसे मावल ज़मींदारो और मज़बूत किसानोंके कार्य-क्षेत्रकी सीमा सम्पूर्ण दक्षिणमे फैल गई और साथ ही साथ उन्हे अपने धन, बल और कीर्तिकी वृद्धि करनेका बड़ा भारी सुयोग भी मिला। ये ग़रीब देहाती लोग, जो देशके एक कोनेमे बन्द निर्जीवसे पड़े थे, शिवाजीकी लड़ाइयों और लूट-पाटमे सम्मिलित होकर सेनापति और अन्य सम्भ्रान्त पदोको प्राप्त करने लगे। फल यह हुआ कि उनकी उच्चाकांक्षाओंके साथ साथ उनमे राज्याभिलाषा भी जाग्रत हो गई। वे खुल्लमखुल्ला हेल-मेल बढ़ाकर उनके भाई-बन्दोके समान हो गये। फरासीसी सेनाकी दृष्टिमे जिस प्रकार नेपोलियन एक साथ भाई, नेता और देवताके समान था, उसी प्रकार मावलोके लिए शिवाजी थे।

शिवाजीका स्वाधीन-जीवन-प्रेम

दादाजी तथा अन्यान्य ब्राह्मण लोग जो रामायण, महाभारत तथा अन्य शास्त्र पढते थे, उसे सुन-सुनकर शिवाजीका बाल हृदय-विकसित हुआ। अपनी संन्यासिनी तुल्य माताका उदाहरण देखकर और उनके उपदेश सुनकर शिवाजीके मनमे सात्विक भाव, दृढ़ता और धर्म-प्रेम

उत्पन्न हुआ, और स्वाधीन जीवनके लिए उनका मन तरसने लगा। किसी मुसलमान राजाके अधीन सेनापति बनकर धन और सुखकी लालसामे जीवन बिताना उन्हे दासताके समान बुरा मालूम पड़ने लगा, और उन्होने ऐसे जीवनसे घृणा करना सीखा। स्वाधीन राजा होना ही उनके जीवनका एकमात्र लक्ष्य था। समस्त हिन्दू-जातिके उद्धार करने और उसकी रक्षा करनेकी इच्छा उनके मनमें बहुत पीछे उत्पन्न हुई थी।

दादाजी कोण्डदेव जमींदारके चतुर दीवान और धार्मिक गृहस्थ थे। उनके मनमे कोई ऊँची अभिलाषा या महान् आदर्श न था और न वे सुदूर भविष्यकी बात ही सोच सकते थे।

अगस्त, सन् १६४४ ई० के एक आदिलशाही फ़रमानसे मालूम होता है कि उस समय शाहजी विनष्ट अहमदनगर राज्यके परगने और गढ़ जीतकर, छोटा-सा ही क्यों न हो, अपना एक स्वाधीन राज्य स्थापित करनेका प्रयत्न कर रहे थे। इसी कारणसे आदिल-शाहने उनको विद्रोही घोषित किया; और जब शाहजीने अपने प्रधान कर्मचारी दादाजी कोण्डदेवको कोण्डानाकी तरफ विजय करनेके लिए भेजा, तब आदिलशाहने भी दादाजीके विरुद्ध दो सेनापतियोको भेजा। बादमें जब कोण्डाना क़िला, जो अब सिंहगढ़के नामसे प्रसिद्ध है, शाहजीके अधिकारमे आया, तब उन्होने वह क़िला अपने पुत्र शिवाजीको दे दिया। बीजापुरी दरबारके साथ शाहजीके झगड़ेका गूढ़ कारण उनकी स्वाधीन होनेकी यह इच्छा ही थी।

युवक शिवाजीका पहला स्वाधीन काम

सन् १६४७ ई० में दादाजीका देहान्त हो गया। उसी समयसे,

जब उनकी उम्र केवल बीस वर्षकी ही थी, शिवाजी खुदमुख्तार हो गए। इस बीचमे शिवाजीने युद्ध-विद्या और जमींदारी चलानेका काम अच्छी तरह सीख लिया था; स्थानीय रैयत और फौजके साथ अच्छी तरह घनिष्ठता भी स्थापित कर ली थी। अपनी बुद्धिसे काम लेने तथा अन्य लोगोको कब्जेमें रखकर उनसे काम करानेका भी उन्हे खूब अभ्यास हो गया था। उनके तत्कालीन नौकर बड़े स्वामि-भक्त और होशियार थे। उस समय श्यामराज नीलकण्ठ रांचेकर उनके पेशवा या दीवान थे; बालकृष्ण दीक्षित मजमूयेदार (हिसाब लिखनेवाले) थे; सोणाजीपन्त दबीर (चिट्ठी लिखनेवाले), और रघुनाथ बल्लाल कोर्डे सबनीस (फौजको तनख्वाह देनेवाले) थे। इन लोगोको शाहजीने पहले ही भेज दिया था।

सन् १६४६ ई० मे बीजापुर राज्यके बुरे दिन प्रत्यक्ष दिखाई देने लगे। सुलतान मुहम्मद आदिलशाह—जिन्होने बहुत दिनो तक इज्जतके साथ राजपाट चलाया था, कई प्रदेश भी जीते थे—एकाएक बीमार पड़ गये। उनके बचनेमे शंका होने लगी। यद्यपि वे उसके बाद भी दस वर्ष तक जीवित रहे, परन्तु वे अधमरी या मृतकके समान अवस्थामें ही रहे। साधारण लोगोका कहना था कि एक फकीर साधु शाह हाशिम उलुवीने मन्त्रके बलसे अपने जीवनकी दस वर्ष आयु राजाको दान दे दी थी। उसी उधार ली हुई आयुसे वे किसी प्रकार दस वर्ष तक जीवित रहे। इन दस वर्षोमे राजा निर्जीव गुड्डेके समान थे। बड़ी बेगम साहिबा राज-काज चलाने लगीं। राज्यके केन्द्रसे जीवन-शक्ति लुप्त हो गई।

यह शिवाजीके लिए बड़ा-भारी सुयोग था। इसी साल उन्होने

बाजी पासलकर, येशाजी कंक और तानाजी मालसुरेको कुछ मावले सिपाहियोके साथ भेज बीजापुर राज्यके पक्षके किलेदारको भुलावा देकर तोरणा* नामक किला दखल कर लिया। वहाँके शाही खज़ानेमे दो लाख होण जमा थे, जो शिवाजीके हाथ लगे। तोरणासे पाँच मील दक्षिण-पूर्वमे इसी पहाड़की दूसरी चोटीपर उन्होने राजगढ नामक एक नया किला तैयार किया, और उसके नीचे क्रमसे तीन जगह ज़मीनको समतल बनाकर दीवारोसे घेरकर 'माची' अर्थात् रक्षित-ग्राम बनाये।

प्रथम राज्य-विस्तार

दादाजी कोण्डदेवकी मृत्युके उपरान्त शिवाजी सबसे पहले अपने पिताकी उस प्रदेशमे फैली सब जागीरोंको संगठित करके एकछत्र राज्य स्थापित करनेका प्रयत्न करने लगे। पूनासे अठारह मील उत्तरमे चाकण किलेके मालिक फिरंगजी नरसालाने शिवाजीकी प्रभुताको स्वीकार किया। दक्षिण-पूर्व दिशामे बारामती और इन्दापुर नामक छोटे थानोके कर्मचारियोने भी शिवाजीकी अधीनता मंजूर की।

इसके बाद शिवाजी बीजापुर राज्यकी भूमि छीनकर अपने राज्यकी सीमा बढ़ाने लगे। पूनासे ग्यारह मील दक्षिण-पश्चिममें कोण्डानेका किला बीजापुरके सुलतानका था। इस किलेके अफसरने घूँस लेकर किला शिवाजीके सुपुर्द कर दिया।

शाहजी बीजापुरमें क़ैद

सन् १६४८ ई० के छः माह बीतते बीतते शिवाजीने अपना अधिकार बहुत दूर तक जमा लिया था। ठीक उसी समय एक नई

---

* पूनासे २५ मील दक्षिण-पश्चिममें है।

आपत्तिने उनके मार्गमें बाधा डाल दी। पचीसवीं जुलाईको बीजापुरके सेनापति मुस्तफाखाँकी आज्ञासे उनके पिता शाहजी जिंजी किलेके बाहर कैद कर लिये गये, और उनकी समस्त फौज और जायदादको सरकारने ज़ब्त कर लिया। बहुत दिन बादके लिखे हुए इतिहासमें इस घटनाका कारण झूठा बनाकर लिखा गया है। बीजापुरके सुलताननें शिवाजीको दबानेके लिए शाहजीको कैद किया था और धमकाकर कहा था कि यदि शिवाजी वशमे होना न चाहे, तो कैदखानेके दरवाजेको ईंटोसे चुनवाकर शाहजीको जीते जी गाड़ दिया जायगा। परन्तु उस समयके सरकारी फारसी इतिहास (ज़हूर-बिन-ज़हूरी-कृत ' मुहम्मद आदिलशाहके राज-काजके विवरण ') से मालूम पड़ता है कि बीजापुरकी सेना जब बहुत दिनो तक लड़नेपर भी जिंजीका किला न ले सकी और उसे खाने-पीनेकी तकलीफ हुई; तब शाहजी, प्रधान सेनापतिके हुक्मके विरुद्ध, अकाल पड़नेका कारण बता लड़ाईको छोड़कर, अपनी जागीरको लौट जानेके लिए तैयार हो गये। प्रधान सेनापति नवाब मुस्तफाखाँने देखा कि किलेको घेरना तो दूर रहा, अगर शाहजीको भागनेसे न रोका जायगा, तो आपसमे मार-काट शुरू हो जायगी। ऐसी अवस्थामे उन्होने बुद्धिमानी कर बिना लड़ाई किये ही शाहजीको कैद कर लिया और उनकी सब जायदाद ज़ब्त कर ली। उस गोलमालमे एक दमड़ीकी भी लूट-खसोट नहीं होने पाई।

उन्नीसवीं शताब्दीमे लिखे हुए मराठी-ग्रन्थोसे मालूम होता है कि मुस्तफाखॉके इशारेसे मुधोल गॉवके जागीरदार बाजीराव घोरपड़ेने शाहजीको अपने डेरेमे बुलाकर विश्वासघातसे कैद कर लिया। इसी

अन्यायका बदला लेनेके लिए कई वर्ष बाद शाहजीने शिवाजीको आज्ञा देकर मुधोलके इस घोरपड़ेके वंशका प्रायः विनाश कराके ही छोड़ा परन्तु एक दूसरे फारसी इतिहास 'बुसातीन्-ए-सलातीन्' से, जो अधिक विश्वसनीय है, हम लोगोको मालूम होता है कि यह बात सच नहीं है। इस पुस्तकमे शाहजीकी कै़दका हाल इस प्रकार लिखा है—"शाहजीके न माननेपर नवाब मुस्तफाखाँने उनको गिरफ्तार करनेका निश्चय किया। एक दिन बहुत सबेरे बाजीराव घोरपड़े और यशवन्तराव (असद्खानी) को अपनी अपनी फौ़ज तैय्यार कर शाहजीके खेमेकी तरफ भेजा। शाहजी रात-भर नाच-गानका आनन्द लेकर सबेरे सो गये थे। इन दोनों रावोका आना और उनका उद्देश्य जानकर शाहजी चकरा गये और घोड़ेपर सवार हो खेमेसे अकेले ही भागे। बाजीरावने उनके पीछे अपना घोड़ा छोड़ा और उनको पकड़कर नवाबके सामने उपस्थित किया।.... आदिलशाहने यह खबर सुनकर कै़दीको राजधानीमें लानेके लिए अफजलखाँको, और उनकी जायदादकी ज़िम्मेवारीके लिए एक खोजाको जिंजी भेजा।" शाहजीको बीजापुर ले जाकर कुछ दिन सेनापति अहमद खाँके घरमें कै़द रखा गया।

शाहजीका नजरबन्दीसे छूटना

शिवाजी बड़ी आपदमें पड़े। पिताको बचानेके लिए उन्हें बीजापुरके अधीन होना पड़ेगा, इस प्रकारकी अधीनता स्वीकार करनेपर नये जीते हुए सब इलाके लौटा देने होंगे, इतना सब किया-कराया परिश्रम व्यर्थ होगा। इस कारण दोनों तरफसे बचनेके लिए उन्होंने राज-नीतिकी कूट चाल चली। बलवान पराक्रमी मुग़ल-

सम्राट् बीजापुरका शत्रु था। साथ ही बीजापुरके राजामें इतनी हिम्मत न थी कि वह उसका हुक्म न मानता, इसलिए शिवाजीने समीपस्थ मुग़ल-प्रदेशके शासनकर्ता शाहज़ादे मुरादबख़्शके यहाँ दर्ख़्वास्त की कि यदि बादशाह शाहजीके पुराने कसूर (अर्थात् सन् १६३३-३६ ई० तक बादशाहके विरुद्ध लड़ना) माफ़ कर दे और भविष्यमें शाहजी और उनके लड़कोंकी रक्षा करनेको राजी हो, तो शाहज़ादेके अभयपत्र भेजनेपर शिवाजी मुग़ल फौजमे सम्मिलित होकर बादशाहकी नौकरी स्वीकार कर लेगे। परन्तु कई महीने तक लिखा-पढ़ी और दूत भेजनेके बाद शाहजहाँने शिवाजीकी प्रार्थना नहीं सुनी। बीजापुर-राज्यके सेनापति अहमदखाँके अनुरोध करनेपर और बंगलोर, कोण्डाना और कन्दर्पी—इन तीन क़िलोके समर्पण करनेपर आदिल-शाहने १६ मई सन् १६४६ ई० के दिन शाहजीको छोड़ दिया। ५ मई सन् १६४६ ई० को मुहम्मद आदिलशाहके एक बेटा पैदा हुआ था; इसी जन्मोत्सवकी खुशीमें ११ रोज बाद शाहजीको छुटकारा मिल गया। उसके बाद कुछ दिन तक उन्होने मैसूरके विद्रोही जमींदारों (पोलीगरो) के विरुद्ध लड़कर उन लोगोंको फिरसे बीजापुरके अधीन किया, और वे मद्रास प्रान्तमे बीजापुर राज्यके जागीरदार हो गये।

शाहजी जमानतपर छूटे थे, इसलिए वे कहीं फिरसे विपत्तिमें न पड़ जायँ, यह विचारकर शिवाजी सन् १६५० से १६५५ ई० तक शान्त रहे। बीजापुर-सरकारको उन्होने किसी प्रकार भी नाराज़ नहीं किया।

परन्तु इसी समय उन्होंने पुरन्दरके क़िलेको अपने अधीन कर लिया। यह क़िला 'नीलकण्ठ नायक' उपाधिवाले एक ब्राह्मण-वंशकी

जागीरमे था। उस समय इस क़िलेमे नीलोजी, शंकराजी और पिलाजी नामक तीन भाई शामिल रहते थे और वे तीनो उसके बराबरीके साझीदार थे। बड़े भाई नीलोजी बड़े कंजूस और मतलबी थे। वे अन्य दो भाईयोका हक़ और अधिकार स्वयं दबाये बैठे थे और उन्हे कुछ भी नहीं देते थे, इसलिए दुःख पाकर उन दोनों भाइयोने अपनी पुश्तैनी सम्पत्तिके बटवारेके लिए शिवाजीकी सहायता ली।

दो-तीन पुश्तसे शिवाजीकी इस कुटुम्बके साथ मैत्री थी, और पुरन्दर पूनेसे केवल नौ कोस दूर था। दिवालीके दिन शिवाजी मेहमान बनकर पुरन्दरके किलेमे गये। तीसरे दिन दोनो छोटे भाइयोंने बड़े भाईको बाँधकर शिवाजीके सामने हाज़िर किया। शिवाजीने उन तीनो भाइयोको क़ैदकर किलेपर अपना कब्जा जमा लिया और वहाँ मावलोकी फौज तैनात कर दी। परन्तु कुछ दिन बाद उन लोगोके जीवन-निर्वाहके लिए उन्हे चामली गॉव दे दिया, और पिलाजीको अपनी फ़ौजमे नौकरी दे दी।

शिवाजीका जावलीपर अधिकार

सतारा ज़िलेके उत्तर-पश्चिमके कोनेमे सुप्रसिद्ध महाबलेश्वर पहाड़से पॉच छः मील पश्चिमकी ओर जावली नामक ग्राम है। सोलहवीं शताब्दीके प्रारम्भमे मोरे नामक एक मराठा घरानेने बीजापुरके प्रथम सुलतानसे जावली परगना जागीरके रूपमे पाया था। उसने धीरे धीरे आसपासके प्रदेशपर अधिकार जमाकर, प्रायः सम्पूर्ण सतारा ज़िले तथा कोकणके कुछ हिस्सेमे अपना राज्य स्थापित किया। एक बार मोरेने अपने हाथसे एक शेर मारा था, इसलिए उसकी वीरतासे प्रसन्न होकर बीजापुर-सुलतानने उसे 'चन्द्रराव' की उपाधि प्रदान की। यही

उपाधि वंशपरंपरासे मोरे-वंशके ज्येष्ठ पुत्र धारण करते चले आये थे। बड़ा भाई जावलीका मालिक होता था और छोटे भाइयोंको नज़दीकके गाँव दिये जाते थे।

आठ पुश्तसे युद्ध और लूट-खसोटके द्वारा मोरे लोगोंके भाण्डारमे बहुत धन संचय हो गया था। उनके अधीन बारह हज़ार पैदल सेना थी। ये सब सैनिक मावलोंके जाति-भाई थे। पर्वतोमे रहनेके कारण सब बलवान् और साहसी थे। इस कारण उस समय जावली राज्य प्रायः सम्पूर्ण सतारा ज़िलेमें फैला हुआ था। इसके पश्चिमकी ओर समुद्रसे चार हज़ार फीटकी ऊँचाईपर सह्याद्रि पहाड़ खड़ा है और पूरबकी ओरकी तराई घने जंगलो और पत्थरोसे भरी पड़ी है। यह पेड़ोंसे छाई हुई पथरीली ज़मीन पश्चिममे ६० मील चौड़ी है। इसको पारकर उस तरफ कोंकण जानेके लिए आठ घाटियाँ पार करना पड़ती हैं। इनमेंसे दो ही ऐसी है जिनमें बैल-गाड़ी चल सकती है।

यही जावली देश दक्षिण और पश्चिमकी ओर शिवाजीके राज्य-विस्तारकी राह रोके हुए था, अतः उन्होने एक दिन रघुनाथ बल्लाल कोरडेसे कहा, "चन्द्ररावको मारे बिना राज्य नहीं मिलेगा। यह काम तुम्हारे सिवा कोई दूसरा नहीं कर सकता। हम तुम्हे दूत बनाकर उसके पास भेजते है।" रघुनाथ राज़ी हो गये और शिवाजीकी ओरसे सुलहकी बातचीत करनेके बहाने एक सौ पचीस चुने हुए सिपाहियोको साथ ले जावली जा पहुँचे।

इस घटनाके तीन-चार वर्ष पूर्व कृष्णाजी मोरे नामक व्यक्ति चन्द्ररावकी पदवी ग्रहण कर राजा हुआ था। रघुनाथ पहले दिन तो मामूली शराफ़तकी बातचीत कर डेरेपर लौट आये और चन्द्र-

रावकी बेखबरीका उल्लेख करके अपने मालिकको फौज लेकर जावलीके नज़दीक रहनेके लिए लिखा, ताकि मोरेका खून होनेके बाद जावलीपर चढाई करनेमें देरी न हो। दूसरी बार मुलाकात एकान्तमे हुई। रघुनाथने बातचीत शुरू करके अकस्मात् छुरा निकाला, चन्द्रराव तथा उनके भाई सूर्यरावको मारकर खतम कर दिया; और फिर दौड़कर फाटकके बाहर हो गये। बेचारे द्वारपाल लोग चकराकर हक्का-बक्कासे रह गये और वे उसे कुछ भी बाधा न दे सके। जिन सिपाहियोने उनका पीछा किया वे भी हारकर लौट गये। रघुनाथ वनमे एक पूर्व-निर्दिष्ट स्थानमे जाकर छिप रहे।

शिवाजी भी नज़दीक ही छिपे थे। मोरेकी हत्याका समाचार सुनते ही उन्होने जावलीपर धावा कर दिया। जावलीके नेता-हीन सिपाही छः घटेतक बहादुरीके साथ लड़े परन्तु अन्तमें उन्होंने (१५ जनवरी सन् १६५६ ई० को) किला खाली कर दिया। चन्द्ररावके दो लड़के और परिवारवर्ग कैद कर लिये गये, लेकिन उनके कुछ निजी आदमियो तथा काम-काजके मुखिया हनुमन्तराव मोरेने उनके नौकर-चाकरोंको इकट्ठा किया, और वे एक नज़दीकके गाँवमे आत्म-रक्षाका उपाय करने लगे। शिवाजीने देखा कि हनुमन्तकी हत्याके बिना जावलीका कंटक दूर नहीं होगा, अतः उन्होने शंभूजी कावजी नामक एक मराठा योद्धाको दूतके बहाने हनुमन्तके पास भेजा। मुलाकातके समय कावजीने हनुमन्तका खून कर दिया। इस प्रकार सम्पूर्ण जावली प्रदेश शिवाजीके हाथ आ गया। अब उनको दक्षिणमे कोल्हापुर तक और पश्चिममे रत्नागिरी ज़िलों-पर अधिकार जमानेका मौका मिला। जावली राज्यपर अधिकार

जमानेसे शिवाजीको सताराका पश्चिमी प्रदेश, जिसमें ६० मील लम्बी पहाड़ी भूमि और तराई है, मिल गया। इससे एक बड़ा भारी लाभ यह हुआ कि अब उन्हें मावलोंकी सेना एकत्रित करनेके लिए दुगुना क्षेत्र मिल गया। इसके सिवा मोरे लोगोकी फौज़, हाकिम आदि तथा उनकी आठ पीढ़ियोंसे जमा की हुई प्रचुर धन-राशि भी शिवाजीके हाथ लगी।

मोरे-वंशके कुछ लोग नहीं पकड़े जा सके। वे ही शिवाजीसे बदला लेनेके लिए सन् १६५६ ई० में जयसिंहके सहायक हुए।

शिवाजीका नया किला

जावली गाँवसे दो मील पश्चिमकी ओर शिवाजीने प्रतापगढ़ नामक एक नया किला बनवाया और वहीं भवानीकी मूर्तिकी प्रतिष्ठा करवाई, क्योंकि आदि भवानी देवीका मन्दिर बीजापुर राज्यके अन्तर्गत तुलजा-पुरमें था। प्रतापगढ़की यही भवानी शिवाजीकी इष्टदेवी हुईं। वहाँ वे अनेकों बार दर्शन करने गये और बहुत-सा धन दान किया। जावली जीतनेके बाद अप्रैल १६५६ ई० में शिवाजीने रायगढ़ नामका एक बड़ा किला मोरेके हाथसे छीन लिया। यहीं बादमें उनकी राजधानी हुई। चौबीसवीं सितम्बरको उन्होंने अपने सौतेले मामा शम्भूजी मोहितेके पास दशहरेकी भेंटके बहाने जाकर उन्हें अकस्मात् कैद कर लिया। शम्भूजी शाहजीकी आज्ञासे सुपे परगनेके हाकिम थे। उन्होंने शिवाजीके अधीन काम करनेसे इनकार कर दिया, इसपर शिवाजीने अपने पिताके पास उन्हें भेजकर सुपे परगने-पर कब्ज़ा कर लिया। इधर ता० ४ नवम्बर सन् १६५६ ई० को वहाँके सुलतान मुहम्मद आदिलशाहके मरनेपर बीजापुरमें जो गड़बड़ी मची, शिवाजीने उससे भी बहुत लाभ उठाया।

महीनेके मध्यमें अपने पास बुला लिया, और कुछ दिन बाद ही मुगलोंके अधीन दाक्षिणात्यके दक्षिण-पश्चिम भाग (अर्थात् महाराष्ट्रके हिस्से) पर चढ़ाई कर दी। उस जगह मुगलोंकी फ़ौज कम थी और फ़ौजी अफ़सर आलसी और बेख़बर थे।

शिवाजीकी आज्ञासे मीनाजी भोंसले और काशी नामक दो मराठा सरदारोंने भीमा नदी पार करके मुगलोंके चमारगुण्डा और रायसीन नामक परगनोंके गाँवोंको लूट लिया, और अहमदनगर शहरके आसपास तक आतंक फैला दिया। स्वयं शिवाजीने भी तीसवीं अप्रेलको अँधेरी रातमें रस्सीकी सीढ़ी (मराठी नाम 'माळा') लगाकर उत्तर-पूना ज़िलेमे दीवार लाँघकर जुन्नर शहरके भीतर प्रवेश किया और पहरेवालोंको मार डाला। यहाँसे वे तीन लाख होंण (बारह लाख रुपये), दो सौ घोड़े और बहुत कीमती गहने तथा कपड़े आदि लूटकर लौट आये।

यह खबर सुनते ही औरंगज़ेबने उस ओर बहुत-सी फ़ौज रवाना कर दी, और वहाँके अधिकारियोंको कड़ी चेतावनी दी। अहमदनगरके क़िलेदार मुल्तफतखाँने बाहर आकर कई एक छोटी-मोटी लड़ाइयोंके बाद मीनाजीको चमारगुण्डा थानेसे भगा दिया। इधर राव कर्ण और शाइस्ताखाँके आनेसे शिवाजीने जुन्नर परगनेमें बहुत दिन तक रहना निरापद न समझा, अतः वे वहाँसे चलते बने और अहमदमगर ज़िलेमे (मई महीनेके अन्तमें) जा पहुँचे। परन्तु वहाँ औरंगज़ेब-द्वारा भेजी हुई फ़ौजको लेकर नासिरीखाँ शीघ्र ही आ धमका और उसने ऊपर अकस्मात् धावा करके शिवाजीको (४ जूनको) घेर लिया। इस युद्धमें बहुत-से

मराठे मारे गये, जो बचे वे सब जान लेकर भागे।

अब मुग़ल अफ़सर अपने राज्यकी दक्षिण-पश्चिम सरहदपर जगह जगह सिपाहियोकी गारद बैठाकर देशकी रक्षा करने लगे। बीच बीचमें वे तेज़ीसे मराठोके राज्यमे घुसकर लोगोको लूटते, गाँवोंमें आग लगाते, रैयतों और गाय-बछड़ोको पकड़ लाते और फिर भागकर अपनी अपनी जगह लौट जाते। औरंगज़ेबके अच्छे बन्दो-बस्त और मज़बूत शासनके कारण शिवाजी उसको और कोई हानि न पहुँचा सके। इसी बीच वर्षा आरम्भ हो गई; अतः दोनों पक्षोंने जून, जुलाई और अगस्तके महीने अपने अपने सीमान्तोपर बैठकर बिताये।

औरंगज़ेबके साथ सन्धि

सितम्बरमे बीजापुर राज्यने औरंगज़ेबके साथ सन्धि कर ली। अब शिवाजी किसके ज़ोरपर लड़े? उन्होने भी मुग़ल राज्यकी अधी-नता कबूल कर नासिरीखाँके पास दूत भेजा। नासिरी खाँने शिवाजीकी प्रार्थनाको औरंगज़ेबके पास पहुँचाया, पर वहाँसे कोई ठीक जवाब न मिला। उसके बाद शिवाजीने अपने दूत रघुनाथ बल्लाल कौरडेको सीधा औरंगज़ेबके पास भेजा और औरंगज़ेबने अन्तमें (जनवरी सन् १६५८ ई० में) शिवाजीको विद्रोहके लिए क्षमा कर दिया; और मराठा प्रदेशपर उनका अधिकार स्वीकार कर उसी आशयका एक पत्र उन्हें लिखा। इधर शिवाजीने भी प्रतिज्ञा की कि वे मुग़ल-सीमाकी रक्षा करेंगे, अपने पाँच सौ घुड़सवारोकी फ़ौज औरंगज़ेबकी मातहतीमें लड़ाईके समय भेजेंगे और सोनाजी पण्डितको अपना दूत बनाकर शाहज़ादेके दरबारमें रखेंगे।

लेकिन औरंगज़ेब शिवाजीके ऊपर सचमुचमें विश्वास न कर सका। वह उस समय दिल्लीके सिंहासनपर दख़ल जमानेके लिए उत्तर-भारतकी ओर जा रहा था। जाते समय दक्षिणमें अपनी फ़ौजोको शिवाजीके ऊपर कड़ी नज़र रखनेके लिए कह गया। उसने मीर जुमलाको (दिसम्बर १६५७ ई० में) लिखा था "नासिरीखाँके चले आनेसे यह प्रान्त खाली हो गया है। ख़बरदार रहना, वह कुत्तेका बच्चा मौक़ेकी तलाशमे है।" उसने आदिल-शाहको लिखा कि "इस देशकी रक्षा करना। शिवाजीने इस देशके कितने ही क़िलोंपर चोरीसे दख़ल कर लिया है। उसको उन सबसे हटा दो, और अगर शिवाजीको नौकर रखना चाहो तो उसे कर्नाटकमें जागीर दो, ताकि वह बादशाही राज्यसे अलग रहे और उपद्रव न कर सके।"

शिवाजीका उत्तर-कोंकण जीतना

परन्तु सन् १६५८ और १६५९ ई० के दो वर्षमें मुग़ल शाहज़ादे दिल्लीके सिंहासनके लिये आप ही युद्धमें फँसे रहे, इसलिए शिवाजीको इस ओरसे कुछ भी डर न रहा। इधर पिछले युद्धमें किसके दोषसे बीजापुरवाले मुग़लोसे हारे, इस बातको लेकर बीजापुरके मंत्री और फ़ौजी अफ़सरोमें बड़ी भारी हुज्जत होने लगी। प्रधान मंत्री ख़ान मुहम्मदका राजधानीमे खून हो गया। इस गड़बड़ीसे लाभ उठाकर शिवाजी अपना राज्य मनमाना बढ़ाने लगे। पश्चिमी घाट (सह्याद्रि पर्वतश्रेणी) पार कर वे उत्तर-कोंकण,—वर्तमान थाना ज़िलेमें जा घुसे और बीजापुरके हाथसे कल्याण और भिवंडी नामक दो शहर छीन लिये। वहाँ उन्हे बहुत माल हाथ लगा (२४ अक्टूबर सन् १६५७)।

बीजापुरके अधीन मुल्ला अहमद नामक एक अरब जातिका रईस इस कल्याण-प्रदेशपर शासन करता था। शिवाजीके सेनापति आवाजी सोनदेवने इस देशपर अधिकार करते समय मुल्ला अहमदकी खूबसूरत नौजवान पुत्र-वधूको कैद कर लिया, और भेट-स्वरूप शिवाजीके पास भेज दिया, परन्तु शिवाजीने वन्दिनीकी ओर केवल एक ही बार देखकर कहा—"आह! यदि मेरी मा भी इसीके समान होती, तो कैसे आनन्दकी बात होती! मेरा भी चेहरा कैसा सुन्दर होता!" इस प्रकार शिवाजीने उस युवतीको मा कहकर सम्बोधन किया और उसे कपड़ो तथा गहनो सहित उसके ससुरके पास इज्ज़तके साथ बीजापुर भेज दिया। उस युगमें यह एक नई बात हुई जिसे सुनकर सब लोग अचंभित हो गये।

इसके बाद शिवाजीने कल्याण और भिवण्डीके उत्तरमें माहुली क़िलेपर (जनवरी सन् १६५८ ई० मे) अधिकार कर लिया। इस तरह उत्तर कोकण दख़ल करके उन्होंने धीरे धीरे दक्षिणके कोलाबा ज़िलेके कुछ हिस्सोपर भी अधिकार कर लिया, और वहाँ बहुतसे क़िले बनवाये। कल्याणके उत्तरमें पोर्तुगीज़ लोगोके दामन-प्रदेशके कई गाँवोको लूटकर शिवाजीकी सेनाने आसिरी क़िलेमे सदाके लिए अड्डा जमा दिया। उसी समय शिवाजीने कल्याणके पास समुद्रकी खाड़ीमे जहाज़ तैयार करवाकर मराठी जल-सेनाकी भी नींव डाली।

शिवाजीको दबानेके लिए अफ़ज़ल खाँका जाना

सन् १६५८ ई० के शुरूमें जब औरंगज़ेब दक्षिणसे चला गया, तब बीजापुर राज्यको शान्ति और नया बल मिला। मन्त्री ख़वास खाँ बड़ा चालाक था, और राजमाता बड़ी साहिबा बहुत तेज़ी और

होशियारीसे राज-काज चलाने लगीं। कब्जेसे निकले हुए चारों ओरके छोटे छोटे सामन्त राजाओंको दबानेका प्रयत्न होने लगा। शाहजीको हुक्म हुआ कि अपने विद्रोही लड़केको वशमे करे। उन्होंने जवाब दिया—"शिवा हमारा त्याज्य पुत्र है। आप लोग उसे पकड़ कर सज़ा दे सकते है, हमारा कोई संकोच न कीजिये।"

अब शिवाजीके विरुद्ध फ़ौज भेजनेकी सलाह हुई, लेकिन डरके मारे किसी उमरावने उस लड़ाईमें सेनापति होना स्वीकार नहीं किया। तब सुलतानने भरे दरबारमें पानका बीड़ा रखकर कहा—"जो इस लड़ाईमे सेनापति होना चाहता हो, केवल वही इस बीड़ेको उठाकर खा सकता है। उसे 'वीर-शिरोमणि मानकर सत्कार किया जायगा।"

अबदुल्ला भटियारा (रसोई पकानेवालेके ख़ानदानका) उर्फ़ अफ़ज़लखाँ बीजापुर राज्यका अव्वल दर्जेका उमराव था। मैसूरको जीतनेके समय और मुग़लोंके साथ पिछली लड़ाईमे उसने अनेक बार बहादुरी और ख़ैरख़्वाही दिखाकर नाम कमाया था। उसने पानके बीड़ेको चटसे उठा लिया और घमण्डके साथ कहा, "मै घोड़ेपर बैठे बैठे ही शिवाजीको हराकर बाँध लाऊँगा।"

लेकिन गत युद्धके कारण बीजापुर-सरकारका धन और जन-बल बहुत कम हो गया था। इसीसे अफ़ज़लके साथ दस हज़ार घुड़-सवारोंसे अधिक फौज भेजना सम्भव न था। इधर शिवाजीकी घुड़-सवार सेना ही दस हज़ारसे अधिक थी। इसके अलावा, लोगोंका कहना था कि जावली दख़ल करनेके कारण साठ हज़ार मावले पैदल सिपाही भी उनकी सेनामे आ जुटे थे। इसके सिवा लड़ाई करनेमें दक्ष साहसी पठानोंका एक दल बीजापुर-राज्यकी नौकरीसे

बरख़ास्त होकर उनकी अधीनतामें था, इसीलिए बीजापुरकी राज-माताने अफ़ज़लसे कहा कि दोस्तीके बहाने शिवाजीको भुलावा देकर कैद करना होगा। यह बात उस समयके अँग्रेज़ कोठीवालोकी चिट्ठीमे साफ़ तौरपर लिखी हुई है।

अफ़ज़लखाँकी कारसाज़ी

अफ़ज़लखाँ बीजापुरसे सीधे उत्तरकी ओर बढ़कर महाराष्ट्रके सबसे बड़े तीर्थ तुलजापुर आ पहुँचा; उसने वहाँकी भवानीकी मूर्तिको तोड़ डाला, और उसे चक्कीमे पीसकर धूल बनाकर फेक दिया। * उसके बाद वह पश्चिमकी ओर मुड़ा और सतारा शहरसे बीस मील उत्तर 'वाई' नामक गाँवमे पहुँचा (अप्रेल सन् १६५९)। यह कस्बा उसकी जागीरका मुख्य स्थान था; यहाँ वह कई महीने ठहरा हुआ इसी फेरमे पड़ा रहा कि किस प्रकार शिवाजीको पहाड़से नीचे खुले मैदानमे लाया जाय, अथवा उसी जगहके मराठा ज़मींदारोंकी मददसे उन्हें कैद किया जाय। बीजापुर-सरकारने अपने अधीनस्थ सब मावले देशमुखोको अपनी अपनी फ़ौज लेकर अफ़ज़लकी सहायता करनेका हुक्म भेज दिया था। इसका कुछ असर भी हुआ था। उस समय रोहिड़खेरेकी देशमुखीको लेकर खण्डोजी खोपड़े और कान्होजी जेधेके बीच झगड़ा चल रहा था। कान्होजी शिवाजीके पक्षमे था। खण्डोजीने अफ़ज़लखाँकी मदद की और यह लिखित प्रतिज्ञा भी की

---

* मराठी-गाथामें लिखा है कि उसने तुलजापुरके बाद माणिकेश्वर, पण्ढरपुर और महादेव पर्वतपर भी देवता और ब्राह्मणोंके ऊपर अत्याचार किये और उनका अपमान किया। श्रीयुत विनायक लक्ष्मण भावे कहते हैं कि यह बात सच नहीं है।

कि यदि उस गाँवकी देशमुखी मिले तो वह शिवाजीको पकड़कर ला देगा। अपने साथियोके साथ खोपड़े अफ़ज़लकी सेनाके अगले हिस्सेका मुखिया बनाया गया।

वर्षाकी समाप्तिपर अक्टूबर महीनेमें फिर फ़ौजोके चलनेका समय आनेवाला था, इसी बीचमें शिवाजी प्रतापगढ़के क़िलेमे पहुँच गये। यह क़िला वाईसे सिर्फ़ बीस मील पश्चिममे था। अफ़ज़लखाँने अपने दीवान कृष्णाजी भास्करके द्वारा शिवाजीको कहला भेजा— " तुम्हारे पिता हमारे पुराने साथी है, इसलिए तुम हमारे लिए कोई अपरिचित व्यक्ति नहीं हो। आओ और हमसे भेट करो। हम बीजापुरके सुलतानसे कहकर उन्हें इस बातपर राज़ी कर लेंगे कि तुम्हारे सब क़िले और कोंकण देश तुम्हारे ही अख़्तियारमे रहने दे। इस दरबारसे तुमको और भी सम्मान और फ़ौजका सरंजाम दिलायँगे। अगर तुम खुद दरबारमे मौजूद रहना चाहो तो और भी अच्छा है। वहाँ तुम्हे बड़ी इज़्ज़त मिलेगी। यदि तुम वहाँ न रहकर अपनी जागीरमे रहना चाहो तो उसके लिए भी हुक्म दिलानेका बन्दोवस्त करेंगे। "

अफ़ज़लकी चढ़ाईसे शिवाजीको डर और चिन्ता

इसी बीचमे अफ़ज़लखाँके आनेके समाचारसे शिवाजी और उनके साथियोमे भारी भय और चिन्ता उत्पन्न हो गई थी। उन लोगोने तब तक छोटी मोटी लड़ाई और मामूली लोगोकी धन-सम्पत्तिकी लूट-खसोट ही की थी, परन्तु इस बार एक तालीम-याफ़्ता और साज-सामानसे लैस फ़ौज एक नामी और बहादुर सेनापतिके अधीन उनका सामना करनेके लिए आ रही थी। वह सेना बीजापुरसे वाई

तक तेज़ीसे बिना रोक-टोकके आगे बढ़ आई थी। उसे रोकनेकी मराठोंमे बिलकुल ताक़त न थी। अफ़ज़लखाँकी अदम्य शक्ति और उसकी क्रूरताकी बात देश-भरमे फैली हुई थी। कई वर्ष पहले सेरा क़िलेके राजा कस्तूरीरंगने बीजापुरकी फ़ौजके शिविरमें आकर अफ़ज़लखाँके समीप आत्म-समर्पण किया था, परन्तु अफ़ज़लखाँने उसे वहीं मार डाला था, * इसीलिए शिवाजीने पहले जिस दिन अपने प्रधान व्यक्तियोंको बुलाकर उनका मत जानना चाहा, तो सबने डरके मारे सन्धि करनेकी राय दी। उन लोगोने कहा—"लड़ाई करनेसे झूठमूठ प्राण जायँगे और जीतना असम्भव है।"

शिवाजी बड़ी मुश्किलमे पड़े। यदि वे उस समय आदिलशाहके अधीन होना स्वीकार करे, तो भविष्यमे उन्नतिका रास्ता सदाके लिए बन्द हो जायगा। उन्हें या तो बीजापुरके जेलमे जिन्दगी बितानी होगी, या पूनेमें मामूली जागीरदारकी भाँति नौकरी करना पड़ेगी। अगर इस समय वे बीजापुरकी सरकारी फ़ौजके विरुद्ध तलवार उठावें तो सुलतान जन्म-भरके लिए उनका शत्रु हो जायगा, और उनको अपनी बाक़ी जिन्दगी एकदम असहाय और बन्धुहीन दशामें मुग़लों तथा और और राजाओंके साथ निरन्तर लड़ाईमे काटनी होगी। वे दिन-भर सोचते सोचते हैरान हो गए; रातको चिन्ताके मारे थककर तन्द्रामे पड़ गये। लोगोका कहना है कि सपनेमे भवानीने दर्शन देकर कहा "बच्चा! तू डर मत, मै तेरी रक्षा करूँगी। तू अफ़ज़लपर चढ़ाई कर। तेरी ही जय होगी।"

* सन् १६५६ ई०में अफ़ज़लने बीजापुरके वजीर ख़ान महम्मदकी भी नाहक हत्या की थी।

अब उनका सन्देह जाता रहा। सबेरे फिर मंत्रणा-सभा बैठी। शिवाजीकी वीर-वाणी और देवीके आशीर्वादकी बात सुनकर समस्त प्रधान लोगोने मारे उत्साहके लड़नेकी राय दे दी। माता जीजाबाईने भी शिवाजीको आशीर्वाद देकर, 'तेरी ही जय होगी' ऐसी भविष्य-वाणी की।

लड़ाईमे अकस्मात् यदि उनकी मृत्यु हो जाय, तो किस प्रकार राज-पाट चलाना होगा, इस विषयमें शिवाजीने उस समय अपने कर्मचारियोको लम्बा-चौड़ा उपदेश दिया। बड़ी दूर तककी सब बातें सोच-समझकर पूरी चालाकीके साथ अफ़ज़लके ऊपर चढ़ाई करनेका बन्दोवस्त किया गया। पेशवा और सेनापति नेताजी पालकरके अधीन दो बड़ी फ़ौजोको प्रतापगढ़के पासके जंगलमें छिपकर रहनेका हुक्म दिया गया।

अफ़ज़लके साथ मेल और मुलाक़ातकी बातचीत

इसी बीचमें अफ़ज़लके दूत कृष्णाजी भास्करने आकर शिवाजीको खाँके साथ भेट करनेको कहा। शिवाजीने इस ब्राह्मणकी खूब खातिर की और रातको अकेले कमरेमे मिलकर कहा—"आप हिन्दू और जातिके पुरोहित है। हम भी हिन्दू है। सच सच बतलाइए कि अफ़ज़लखाँका क्या मतलब है?" ज़बरदस्ती करनेपर मजबूर होकर कृष्णाजीने जवाव दिया कि अफ़ज़लका इरादा अच्छा नहीं है।

दूसरे दिन शिवाजीने अपने दूत पन्ताजी गोपीनाथको कृष्णाजी भास्करके साथ अफ़ज़लके खेमेमे भेजा। खाँने पन्ताजीके सामने कसम खाई कि भेट करते समय वह शिवाजीको कुछ भी हानि न पहुँचा-यगा। साथ ही शिवाजीकी ओरसे पन्ताजीने भी मान लिया कि उस

समय अफ़ज़लके साथ किसी प्रकारका विश्वासघात न किया जावेगा। लेकिन शिवाजीके दूतने बहुत बड़ी रिश्वत देकर वहाँपर बीजापुरके सरदारसे यह पता लगा लिया कि खाँने ऐसा बन्दोबस्त किया है कि भेंटके समय वह शिवाजीको कैद कर लेगा, क्योंकि शिवाजीके समान धूर्त व्यक्तिको लड़ाईमे जीतना मुश्किल है। इन सब बातोंको सुनकर शिवाजी इस बातके लिए तैय्यार हो गये कि जिस प्रकार भी हो अफ़ज़लको ख़तम करके अपनी रक्षा करनी चाहिए।

शिवाजीने अब यह बात ज़ाहिर कर दी कि खाँके साथ भेंट करके सुलहकी बातें ठीक करनेके लिए वे राज़ी है, लेकिन वाई शहर जानेमे वे डरते है। पहले खाँ उनके मकानके पास आकर मुलाक़ात करें और उन्हें विश्वास दिला दें, तो बादमें वे भी खाँके तम्बूमे जायँगे।

भेंट करनेकी जगह अफ़ज़ल और शिवाजीका आना

इस बातपर अफ़ज़लखाँ राज़ी हो गया। दोनोंकी मुलाक़ातके लिए प्रतापगढ़के क़िलेके कुछ नीचे एक पहाड़की चोटीके ऊपर तम्बू ताना गया, और जंगल काटकर वहाँ जानेका रास्ता तैय्यार किया गया। अफ़ज़लखाँने फ़ौजके साथ वाईसे कूचकर महाबलेश्वरके ऊपरकी समतल भूमिको पार करके 'पार' गाँवमे पहुँचकर छावनी डाली। यह गाँव प्रतापगढ़के दक्षिणमे एक मीलकी दूरीपर पहाड़के नीचेकी समतल भूमिपर स्थित है। उसकी फ़ौजने कयना नदीके किनारे गहरी तराईके चारों तरफ डेरा डाला।

भेंट करनेके लिए नियत दिन (१० नवम्बर, सन् १६५९ ई०) को अफ़ज़लखाँ पहले पार गाँवके शिविरसे एक हज़ार बन्दूकची सिपाहियोंको साथ ले पालकीपर सवार हो प्रतापगढ़के पहाड़के ऊपर चढ़ने लगा।

पन्ताजी गोपीनाथने उससे कहा कि "इतनी बड़ी फ़ौज़ देखकर शिवाजी डर जायँगे और भेट करने नहीं आयँगे; इसलिए खाँ और सबोंको पीछे छोड़ केवल दो पहरेदारोंको ही साथ लेकर ऊपर चढ़ें।" वैसा ही किया गया। दो सिपाही,—प्रसिद्ध तलवार चलानेवाला वीर सैयद बन्दा और दोनो तरफके दो ब्राह्मण दूत अर्थात् पन्ताजी और कृष्णाजी अफ़ज़लखाँके साथ चले।

जिस तम्बूमे दोनोंकी मुलाक़ात होना ठीक हुआ था, वहाँ पहुँच-कर वहाँकी सजावटकी कीमती चीज़ो और बिछौनोंको देखकर अफ़-ज़ल बिगड़कर बोला—"ऐ! एक मामूली जागीरदारके लड़केकी इतनी शान!" लेकिन पन्ताजीने उसे समझाकर कहा कि ये सब चीज़ें मेलके चिह्न-स्वरूप बीजापुर राज्यको भेंट देनेके लिए लाई गई है।

शिवाजीको बुलानेके लिए एक आदमी प्रतापगढ़ भेजा गया। उन्होंने कुर्तेके नीचे लोहेका जालीदार कवच और सिरपर पगड़ीके नीचे छोटी कड़ाहीके सदृश इस्पातकी टोपी छिपाकर पहन ली। बाहरसे देखकर कोई नहीं कह सकता था कि उनके शरीरमे कोई हथियार छिपा हुआ है, परन्तु उनके बाएँ हाथकी अँगुलियोंमें सिकड़ीसे बँधा हुआ 'बघनखा' नामक एक इस्पातका तेज़ और टेढ़ा पंजा मुट्ठीमें छिपा था, और दाहिने हाथकी आस्तीनके नीचे 'बिछुआ' नामक पतला छुरा था। उनके साथ दो पहरेवाले थे—जीवमहला नामका हज्जाम (तलवारका खिलाड़ी) और शम्भूजी कावजी। ये दोनों बड़े बहादुर, हाथकी सफाई दिखानेमें तेज़ और बलवान् पुरुष थे। इन दोनोंके हाथोमें दो तलवारें थीं। प्रतापगढ़-क़िलेसे उतरते समय शिवाजीने माताके चरणोंमें प्रणाम कर बिदा चाही। सफ़ेद कपड़े

पहने हुए देवीकी प्रतिमूर्ति-सी जीजाबाईने आशीर्वाद दिया—" तेरी जय हो " और शिवाजीके साथियोको खास तौरपर ताकीद की कि " मेरे लड़केकी रक्षा करना । " उन लोगोने उत्साहके साथ प्रतिज्ञा की कि वे वैसा ही करेगे ।

अफ़ज़लके साथ मार-काट

प्रतापगढ़ क़िलेकी चोटीसे उतरकर तम्बूकी ओर धीरे धीरे कुछ दूर जानेपर शिवाजी एकाएक खड़े हो गये, और कहला भेजा कि भेंटकी जगहसे सैयद बन्दाको हटा देना होगा। वैसा ही किया गया। आख़िर शिवाजी मुलाक़ातवाले शामियानेमें गये । इस कपड़ेके घरमे दोनो दलके चार चार आदमी थे : खुद नेता, दो दो शरीर-रक्षक और एक एक ब्राह्मण दूत । शिवाजी देखनेमें शस्त्रहीन थे, लेकिन अफ़ज़लखाँकी कमरसे तलवार लटक रही थी ।

साथी सब नीचे ही खड़े रहे । शामियानेके बीचमे चबूतरेके ऊपर अफ़ज़लखाँ बैठा था । शिवाजी चबूतरेपर चढ़े । खाँने गद्दीसे उठकर कुछ क़दम आगे बढ़, शिवाजीसे गले लगनेके लिए हाथ बढ़ाये । शिवाजी नाटे और दुबले थे, वे लम्बे-चौड़े शरीरवाले अफ़-ज़लके कन्धे ही तक पहुँचते थे । इसलिए खाँके दोनो हाथोंने शिवाजीका गला घेर लिया । उसके बाद अफ़ज़लखाँने एकाएक शिवाजीका गला अपने बाएँ हाथसे बड़े ज़ोरसे धर दबाया, और दाहिने हाथसे कमरसे लम्बा सीधा छुरा निकालकर शिवाजीकी बाईं बग़लमे चोट की, लेकिन छिपे जिरह-बख़्तरमे लगनेसे वह छुरा देहमे घुस न सका । गला दबनेसे शिवाजीका दम घुटने-सा लगा, परन्तु पल-भरमे बुद्धिको ठिकाने लाकर बायाँ हाथ ज़ोरसे घुमाकर उन्होंने

अफ़ज़लखाँके पेटमें ' बघनखा ' घुसेड़ दिया और उससे खाँके पेटको फाड़ डाला, जिससे खाँकी अँतड़ियाँ बाहर निकल पड़ीं। साथ ही दाहिने हाथका ' बिछुआ ' खाँकी बाईं बगलमें भोक दिया। ज़ख्मी अफ़ज़लखाँके हाथकी पकड़ ढीली पड़ गई। तब शिवाजी जल्दीसे अपनेको छुड़ाकर चबूतरेपरसे नीचे कूद पड़े और अपने साथियोंकी ओर दौड़े। ये सब बाते एक पलमें खतम हो गईं।

चोट लगते ही अफ़ज़लखाँ चिल्ला उठा—" मार डाला, मार डाला, मुझे धोखा देकर मार डाला ! " दोनों ओरके नौकर अपने-अपने मालिककी सहायताके लिए दौड़ पड़े। सैयद बन्दाने शिवाजीका सामना किया, अपनी लम्बी सीधी तलवार (पट्टा) के एक ही वारसे शिवाजीकी पगड़ी काट डाली। शिवाजीकी पगड़ीके नीचेकी लोहेकी टोपीपर भी तलवारकी चोटसे गहरा निशान बन गया, परन्तु सिर बच गया। तब वे भी जीवमहलाके हाथसे एक तलवार लेकर सैयद बन्दाको रोकने लगे। जीवमहला दूसरी तलवार लेकर आगे बढ़ा, और उसने पहले सैयदका दाहना हाथ और पीछे सिर काटकर अलग कर दिया। इसी बीच कहार घायल अफ़ज़लको पालकीमें लिटाकर उसके तम्बूमें ले जानेको रवाना हो रहे थे कि शम्भूजी कावजीने आकर कहारोंके पैरोंपर चोट की जिससे वे पालकी छोड़कर भाग गये; तब तो उन्होने अफ़ज़लखाँका सिर काटकर विजयके गर्वके साथ उसे शिवाजीके पास हाज़िर किया।

अफ़ज़लकी फ़ौज हारी और लूटी गई

अफ़ज़लखाँको मारकर शिवाजी अपने दो पहरेदारोंके साथ सीधे पहाड़ लाँघकर प्रतापगढ़के किलेमें चले गये, और वहाँ पहुँचकर उन्होंने

तोप छोड़ी। यह इशारा पहलेसे ही नियत था। तोपकी आवाज़ सुनते ही नीचे गॉवके पास झाड़ियों और पहाड़ोमे छिपी हुई शिवाजीकी दोनों फ़ौजें निकलकर चारो ओरसे बीजापुरकी फ़ौजपर धावा करने लगीं। अफ़ज़लके अकस्मात् मरनेके समाचारने उसके शिविरके समस्त नौकरों, सिपाहियो और अन्य आदमियोंको एक साथ घबराहटमे डाल दिया। उन लोगोका न कोई नेता था, न रास्ता ही जाना हुआ था और चारों ओर अनेक शत्रु घेरे हुए थे। भागनेका रास्ता बन्द देखकर वे मज़-बूरन लड़ने लगे, परन्तु उस दिन मराठे विजयके उल्लासमे पागल हो रहे थे; दो नामी सेनापति उनके अफ़सर थे और लड़ाईकी भूमिसे वे भली भाँति परिचित थे। अतः वे लोग धड़ल्लेसे शत्रुओंको मार मार कर आगे बढ़ने लगे। तीन घंटेमे सबका काम तमाम हो गया। बीजापुरके तीन हज़ार योद्धा मारे गये। मावले लोगोके सामने जो भी कोई पड़ा उसीके ऊपर वे तलवारसे वार करने लगे; भागते हुए हाथियोंकी पूँछें काट डालीं, दाँत तोड़ डाले और पैर घायल कर दिये तथा ऊँटोको काट-काटकर ज़मीनपर गिरा दिया। बीजापुरके जिन योद्धाओंने हार मानकर दाँतोंमें तिनका दबाकर माफी माँगी, उन लोगोंको प्राण-दान दिया गया। इस लड़ाईमें लूट-पाटसे शिवाजीको बहुत लाभ हुआ। अफ़ज़लखाँकी सब तोपें, गोला-बारूद, तम्बू, कपड़े-लत्ते, बिछौने, धन-दौलत और माल-असबाबसे लदे हुए बहुतसे पशु उनके हाथ आये। इसमे पैसठ हाथी, चार हज़ार घोड़े, बारह ऊँट, कपड़ेकी दो हज़ार गाँठे, और नक़द एवं गहने मिलाकर दस लाख रुपये थे। कैदियोमें एक बड़े ओहदेका सरदार, अफ़ज़लके दो लड़के और दो मददगार मराठे ज़मींदार थे। जो स्त्री, बच्चे, ब्राह्मण और

खेमेके नौकर पकड़े गये, उन सबको शिवाजीने उसी वक्त छोड़ दिया; परन्तु अफ़ज़लकी स्त्रियाँ और उसका बड़ा लड़का फ़ज़लखाँ कयना नदी पार हो खण्डोजी खोपड़े और उनकी मावली फ़ौजकी सहायतासे एक निरापद स्थानको भाग गये।

शिवाजीने अपनी विजयी सेनाको एकत्र कर उसका निरीक्षण कर क़ैदियोको छोड़ दिया, और जब वे अपने अपने घर जाने लगे तब उन्हें अन्न, वस्त्र और धन भी दिया। जिन मराठे सैनिकोने लड़ाईमे प्राण दिये थे उनकी विधवाओंको पेन्शनें दी गईं और जवान पुत्रोंको उनके पिताओंकी नौकरियाँ मिलीं। घायल सिपाहियोंके घावोंकी अवस्था देखकर उन्हें एक सौसे लेकर आठ सौ रुपये तक इनाममें मिले। बड़े फ़ौजी अफ़सरोको हाथी, घोड़े, पोशाक और जवाहरात इनाममे दिये गये।

मराठोंकी यह पहली विजय इसी जगह ख़तम नहीं हुई। विजयी शिवाजीने दक्षिणकी ओर बढ़कर कोल्हापुर ज़िलेपर धावा किया और पनहाला-क़िला (२८ वीं नवम्बर) को दख़लकर रुस्तम-ए-ज़माँकी मातहतीकी बीजापुरकी एक और फ़ौजको भी (२८ वीं दिसम्बर) हराया। उसके बाद जनवरी महीनेमें दक्षिण कोकणके रत्नागिरि ज़िलेमे घुसकर बहुतसे बन्दरो और गाँवोको लूटा।

अफ़ज़लखाँकी मृत्युके बारेमें गीत और कथाएँ

अफ़ज़लखाँकी इस भयंकर दुर्घटनासे देश-भरमें आलोचना और कथाकी सृष्टि हुई। 'अज्ञानदास' उपनामवाले एक कविने मराठी भाषामें इस घटनाके बारेमें एक बहुत ओजपूर्ण गीत (बेलेड) बनाया है, जो आज भी लोगोंको बहुत प्यारा है। औंधके राजा बाला साहब पन्त-प्रतिनिधिने हालमें ही इस घटनाको लेकर एक 'गीतिका' लिखी

है। परन्तु यह 'बेलेड' ऐतिहासिक सत्यके अनुसार नहीं है। खाली मज़ेदार किंवदन्ती और ऐसी कल्पनाओंसे भरा है, मानो महाभारतका एक द्वन्द्व-युद्ध हो।

मराठा देशमे यह कथा प्रचलित है कि जिस समय अफ़ज़ल बीजापुरसे शिवाजीके विरुद्ध रवाना हुआ, उस समय अनेक अशुभ घटनाएँ हुई थीं—उसकी झण्डी टूट गई थी, बड़ा हाथी आगे बढ़ना नहीं चाहता था, इत्यादि। और उसने मरना निश्चय जानकर रवाना होनेसे पहले ही अपनी तिरसठ औरतोको मार डाला; उन्हें एक ही चबूतरेके नीचे बराबर फ़ासलेपर क़ब्रमे दफ़नाकर अपने मनका सन्देह मिटा लिया था। बीजापुर शहरसे कुछ मील बाहर अफ़ज़लपुरा नामके गॉवमें खाँका मकान और उसके नौकर-चाकरोंकी बस्ती थी। वह जगह आजकल जन-हीन श्मशान-सी पड़ी है। वहॉ केवल टूटी दीवारे, खाइयाँ, जंगल और दूर-दूरपर किसानोंके खेत दिखाई पड़ते हैं। उसके मरनेके केवल चौदह वर्ष बाद फ्रेंच यात्री अबे करेने इस स्थानपर जाकर देखा था कि कारीगर लोग अफ़ज़लखॉकी समाधिके पत्थर खोदते थे, और एक पत्थरके ऊपर खुदा था कि खॉने अपने महलकी दो सौ औरतोका गला काटकर फेंक दिया था। मैं सन् १९१६ ई० के अक्टूबर महीनेमें वहॉ गया था। वहॉ मैने तिरसठ क़ब्रें देखीं जो एक ही समय और एक ही ढाँचेकी बनी हुई मालूम होती थीं। अब भी उस जगहके किसान इस हत्याकाडका लम्बा-चौड़ा क़िस्सा कहते हैं, और इस घटनाके भिन्न भिन्न स्थान भी दिखाते हैं।

चौथा अध्याय

शिवाजीका दक्षिण-महाराष्ट्रमें प्रवेश

अफ़ज़लखाँके मरने (१० नवम्बर सन् १६५९) और उसकी फ़ौजके नष्ट होनेके वाद शिवाजी दक्षिणमे कोल्हापुर ज़िलेमें जाकर देश लूटने लगे । २८ वीं नवम्बरको उन्होने पनहाला नामक एक वड़े पहाड़ी क़िलेको ले लिया । उन्हे रोकनेके लिए उस जगहका हाकिम रुस्तम-ए-ज़माँ वीजापुर-राज्यके हुक्मसे आगे वढ़ा; अफ़ज़लका लड़का फ़ज़ल खाँ भी अपने वापकी मृत्युका वदला लेनेके लिए फ़ौजके साथ रुस्तमसे जा मिला, लेकिन रुस्तमको मालूम था कि वीजापुरकी वड़ी वेगम साहवा गुप्तरूपसे उसे तवाह करनेमें लगी हैं। ऐसी हालतमे अपनेको वचानेके लिए उसके पास एकमात्र उपाय था शिवाजीके साथ दोस्ती वनाये रखना । खासकर शिवाजीके वंशके साथ उसकी दो पुश्तसे दोस्ती थी; इसलिए शिवाजीके साथ षड्यन्त्र कर केवल लोगोंको दिखानेके लिए रुस्तमने उनके विरुद्ध फ़ौज वढ़ाई थी । कोल्हापुर शहरसे कुछ दूर दोनो दलोकी मुठभेड़ हुई । रुस्तम ढीला पड़ गया और पीछे रह गया । इसपर गुस्सेसे विगड़कर फ़ज़लखाँने लड़ाईकी सव जिम्मेवारी अपने हाथमें ले ली, और वड़े ज़ोरसे मराठोंके ऊपर (२९ दिसम्वरको) चढ़ाई की । उसके वहुतसे सिपाही लड़ाईमें मारे गये, दो हज़ार घोड़े और वारह हाथी पकड़े गये । फ़ज़ल-खाँ हार गया और वीजापुर लौट गया । रुस्तम पीछे हटकर दक्षिण-कानड़ेमें अपनी जागीरमें जाकर चुपचाप वैठ रहा ।

इसी मौक़ेपर मराठा लोग सह्याद्रि पार कर पच्छिमकी ओर रत्नागिरि ज़िलेमे घुसे, और बेरोक-टोक दक्षिणी कोंकणके शहरो और बन्दरोंको लूटने लगे। उन लोगोका एक दूसरा दल पूरबकी ओर बढ़कर बीजापुर शहरके आसपास तक जा पहुँचा। तब आदिलशाहको होश हुआ। वे शिवाजीको दबानेके लिए बड़ी कोशिश करने लगे। सिदी जौहर नामक एक हबशी उमरावको 'सलाबत खाँ' की पदवी देकर फ़ज़लखाँके साथ पनहाला-क़िला छीन लेनेके लिए भेजा। जौहरने पन्द्रह हज़ार फ़ौजके साथ आकर कोल्हापुर शहरमे अड्डा जमाया और शिवाजीको पनहालामे (२ मार्च सन् १६६० ई० को) घेर लिया, लेकिन उसके मनमे कुछ और ही बात थी। मालिकके काममें मन न लगाकर वह अपने लिए स्वाधीन राज्य स्थापित करनेके फेरमें पड़ गया। बुद्धिमान् मराठा-नरेशने बादमें मदद करनेका लोभ दिखाकर जौहरको अपने हाथमे कर लिया। लोगोको झूठ-मूठ दिखानेके बहाने वह छः महीने तक धीरे-धीरे इस क़िलेपर घेरा डालनेका काम चलाता रहा, परन्तु फ़ज़लखाँ भूल जानेवाला आदमी न था। वह बापका बदला लेनेके लिए अपनी फ़ौज ले मराठोंके ऊपर लगातार चढ़ाई करने लगा। पनहालेके नज़दीक ही पवनगढ़का क़िला है। नज़दीकके एक पहाड़की चोटीपर तोप लगाकर फ़ज़लखाँ पवनगढ़के ऊपर गोलोंकी वर्षा करने लगा।

पवनगढ़को बचाना मुश्किल हो गया, और इसके एक बार बीजापुरियोके हाथ पड़ जानेपर पनहालेका पतन भी निश्चित था। शिवाजीने देखा कि मामला टेढ़ा है। वे चारों ओरसे जकड़ गये, भागनेके रास्ते बन्द हो गये। तेरहवीं जुलाई आषाढ़ वदी पड़वाकी

रातको पनहालेमें कुछ सिपाहियोंको रखकर बाकी लोगोंके साथ वे चुपचाप किलेसे उतरे और पवनगढ़के सामने पड़ी हुई बीजापुरकी छावनीपर चढ़ाई कर दी। उसी गोलमालके मौकेपर विशालगढ़ किलेकी तरफ़ भागनेका भी बन्दोबस्त किया।

पनहालेसे शिवाजीका भागना

परन्तु विशालगढ था सताईस मीलकी दूरीपर, और रास्ता भी था विकट,—ऊँचा-नीचा, पथरीला और संकीर्ण। दूसरे दिन सूर्योदयके समय उन्होंने देखा कि वहाँ पहुँचनेमें तब भी आठ मील बाकी है। इधर रातहीको शिवाजीके भागनेकी खबर और उनके रास्तेका ठीक पता लगाकर फ़ज़लखाँ मशाले जलाकर उनके पीछे पीछे रवाना हो गया। इस समय दिनके उजेलेमें शत्रुकी सेना मराठोंको निश्चय ही पीसकर मार डालती।

इस महान् संकटमें बाजीप्रभु नामके कायस्थ जातिके एक मावले जमींदारने अपनी जान जोखिममें डालकर शिवाजीकी रक्षा की। गजपुरके नजदीकका रास्ता बहुत पतला है, और उसके दोनो तरफ ऊँचे ऊँचे पहाड़ खड़े है। बाजीप्रभुने कहा, "महाराज, हम आधी फ़ौज ले इस जगह मुँह फेर खड़े होकर दुश्मनकी फौजको रोक रखेंगे, तब तक आप बाकी सिपाहियोंके साथ विशालगढ़को जल्दी रवाना हो जाइए। वहाँ सही-सलामत पहुँचनेपर हमे तोपकी आवाज़से खबर दीजिएगा।"

गजपुरकी घाटी मराठोंके इतिहासकी थर्मोपली है। सबेरेसे लेकर पाँच घंटे तक बार बार बीजापुरकी मजबूत फौज़ बाढ़की तरह आकर उस सकरी पहाड़ी घाटीमे घुसनेकी कोशिश करती थी, परन्तु

मुट्ठी-भर मराठे जी-जानसे लड़कर उसको हटा देते थे। सात सौ मराठे सिपाही वहाँ काम आये। बाजीप्रभु भी घायल होकर रण-भूमिमें खेत रहे, मगर फिर भी लड़ाई न थमी। दोपहरके बाद आठ मीलकी दूरीसे तोपकी आवाज़ सुनाई दी। शिवाजीको विशाल-गढ़में आश्रय मिल गया। बाजीप्रभुने जान देकर अपना प्रण पूरा किया। तब बीजापुरी सेनाके कर्नाटकी बन्दूकचियोंने गोलियोंकी वर्षा करके इस घाटीपर कब्ज़ा कर लिया; बाक़ी बचे हुए मावले बाजी-प्रभुकी लाश उठाकर पहाड़ोंमें भाग गये।

सुलतान आदिलशाह जौहरके विश्वासघातको समझकर दोनों विद्रोहियोंको दबानेके लिए स्वयं राजधानीसे पनहालेकी ओर बढ़े। जौहरने देखा कि अब तो बहानेबाज़ीसे काम न चलेगा, तब उसने २२ वीं सितम्बरको मराठोंके हाथसे पनहालाका किला छीनकर सुलतानके अधीन कर दिया।

शायस्ताखाँका पूना और चाकन जीतना

जिस समय शिवाजीके राज्यके दक्षिणकी ओर उनकी ऐसी हार और हानि हो रही थी, ठीक उसी समय उनकी उत्तरी सीमापर एक और बड़ी भारी आपत्ति आ खड़ी हुई। पन्द्रहवीं अगस्त सन् १६६० ई० को मुग़लोंने उनके हाथसे चाकनका मशहूर क़िला छीन लिया।

सन् १६५९ ईस्वीके अन्तमें औरंगज़ेबका सिंहासन निष्कंटक हो गया। उसे अब भाइयोंके विरोधका कोई डर न रहा, क्योंकि सभी जगह उसकी ही जय हुई थी। अब उसे दक्षिणकी ओर नज़र डालनेका मौक़ा मिला। उसने अपने मामा शायस्ताख़ाँको दक्षिणका सूबेदार बनाकर शिवाजीके विरुद्ध भेजा।

शायस्ताखाँ जैसा बुद्धिमान् था, वैसा ही वीर भी था। नेतृत्व और देश-शासनमे वह एक-सा दक्ष था। उसे बहुत-सी लड़ाइयोका अनुभव था। धन, मान और प्रभावमे मीर जुमलाको छोड़कर दूसरा कोई अमीर उसकी बराबरीका न था। उसने बड़ी चालाकीसे अहमदनगरसे (२५ फरवरी सन् १६६० ई० को) कूच किया, और पूना ज़िलेके पूर्व तथा दक्षिणकी ओर घूमता हुआ, अपने सामनेसे मराठोंको बराबर भगाता और अपने पीछेके रास्तेको निरापद रखनेके लिए जगह जगह थाने स्थापित करता हुआ अन्तमें वह पूना जा पहुँचा। यह कहा जा सकता है कि रास्तेमे उसका एक सिपाही भी नहीं मरा। मराठे मारे डरके स्वयं ही पीछे हट गये, और यदि लड़े भी तो ऐसी बुद्धिमानीसे संचालित और सुसंगठित फ़ौजके सामने वे टिक न सके।

पूनासे अठारह मील उत्तरमे चाकन क़िला है। इसपर कब्ज़ा कर लेनेसे मुग़ल-प्रदेशसे दक्षिणके रास्ते पूनामें रसद लाना सम्भव था। शायस्ताखॉने २१ जूनको चाकनके बाहर पहुँचकर क़िलेको घेर लिया। क़िलेके मालिक फिरंगजी नरसाला जी-जानसे लड़े, लेकिन मुग़ल फ़ौज उस दिन अजेय थी। वह पानी-कीचड़को कुछ न समझकर क़िलेके चारों ओर खाई खोदकर मोरचा बाँधने लगी। उसने (चौदहवीं अगस्तको) ज़मीनके नीचे नीचे क़िलेकी दीवारकी सतह तक सुरंग खोदकर, उसमे बारूद भरकर आग लगा दी। बड़े ज़ोरके धड़ाकेके साथ चाकन-क़िलेके उत्तर-पूर्व कोनेका बुर्ज फटकर उड़ गया। उसी मौक़ेपर मुग़ल-सेना क़िलेकी दीवालपर चढ़ गई, और दो दिनकी मार-काटके बाद पूरे क़िलेपर अख्तियार जमा लिया।

शायस्ताखाँ खुद बहादुर था, इसीसे वह बहादुरकी क़दर करना जानता था। वह फिरंगजीके गुणोंपर मुग्ध होकर उसे बादशाहकी फौज़में एक बड़ी नौकरी देने लगा, परन्तु स्वामि-भक्त मराठाने नमकहराम होना अस्वीकार कर दिया। तब इज्ज़तके साथ फ़ौज-सहित शिवाजीके पास लौट जानेकी उसे इजाजत दे दी गई।

दक्षिण कोंकणमें शिवाजीका राज्य फैलाना

करीब दो महीने तक लगातार मेहनतके बाद चाकनपर दख़ल जमानेमे मुग़लोंके २६८ सिपाही मरे और छः सौ आदमी घायल हुए, इसीलिए उसके बाद वे मराठोंके अन्य क़िलोंपर चढ़ाई करनेसे बाज़ आये। शायस्ताखाँ शीघ्र ही पूना लौट गया और वहाँ जाकर उसने अपने डेरा डाल दिया।

सन् १६६१ ई० के शुरूमें उसने उत्तर-कोंकण जीतनेके लिए एक दल सेना भेजी। इस सेनाका नायक चार हज़ारी मनसबदार कारेतलबखाँ उजबक जब उम्बरखिण्ड नामक स्थानमें एक मार्गहीन पहाड़ी जंगलके बीचोबीच तोपें, बन्दूक और रसद आदि लेकर कष्टमें फँसा था, तब शिवाजीने जल्दीसे छिपे रास्तेसे आकर उसे घेर लिया और पानी लानेवाले रास्तेको रोक दिया। खाँने तब शिविर और सब सम्पत्ति शिवाजीको समर्पण की और प्राणोंकी भिक्षा लेकर ३ फरवरी सन् १६६१ ई० को लौट आया।

पनहाला और चाकनके छीने जानेसे जो कुछ नुकसान हुआ था, उसको पूरा करनेके लिए विजयी शिवाजी दक्षिण कोंकणमें घुसे। सेनापति नेताजी पालकरके अधीन मराठोंका एक दल मुग़लोंके विरुद्ध उत्तरकी तरफ़ तैनात था। दूसरा दल लेकर शिवाजीने खुद बीजापुरके

अधीन दक्षिण कोंकण (वर्तमान रत्नागिरि ज़िले) पर अधिकार कर लिया। वहाँ केवल छोटे-छोटे राज्य थे; कोई ऐसा बलवान् प्रतापी राजा नहीं था जो शिवाजीकी गतिको रोक देता। शिवाजी इतनी तेज़ीसे आगे बढ़े कि उस जगहके बहुतसे राजा और ज़मींदारोंको अपनी जान बचाने तकका अवसर न मिला, वे जल्दीमें सब छोड़-छाड़कर जान लेकर भागे और कर देना स्वीकार कर उनके अधीन हो गये।

इस प्रकार जंजीरासे खारेपटन तक पश्चिमी समुद्रके किनारेका सब प्रदेश उनके हाथ आ गया। सब जगह उनकी तरफसे लूट-पाट या चौथ वसूल होने लगी। इस प्रदेशमें बहुतसे तीर्थ भी हैं जिनमें परशुराम-क्षेत्र बहुत प्रसिद्ध है और भारतके भिन्न भिन्न प्रदेशोंसे यात्रीगण इस स्थानपर तीर्थयात्राके लिए आते हैं। यहाँ ब्राह्मण-पण्डित ही अधिक बसते हैं। शिवाजीकी फ़ौजकी सरपट चाल, उसके बल, लूट-पाट और उत्पीड़नके समाचारोंसे ब्राह्मणोंके कुटुम्ब, गरीब गृहस्थ और सब प्रजागण देश छोड़ छोड़ कर भागने लगे। खेती-बारी व्यापार आदि प्रायः बन्द-सा हो गया। शिवाजीने तीर्थोंमें जाकर बहुत पूजा की। ब्राह्मणोंको दान दिया और प्रजाको दम-दिलासा देकर उन्हें अपने अपने घर लौटकर कामकाजमें लगाया। इस नये राज-काजमें सहायता मिलनेकी आशासे शिवाजीने शृंगारपुरपर अधिकार करके वहाँके चलते-पुर्जे और बुद्धिमान् भूतपूर्व मंत्री पिलाजी शिर्केको मन्त्रीका पद (यथार्थमें वही वहाँका कर्ता-धर्ता था), धन और अख़्तियार देकर अपने पक्षमें कर लिया, यहाँ तक कि उसके साथ विवाह-सम्बन्ध भी जोड़ लिया। इस प्रकार पल्लीवन और शृंगार-

पुरका राज्य तथा दाभोल, संगमेश्वर, राजापुर इत्यादिके बढे चढे शहर और बन्दर स्थायी रूपसे शिवाजीके हाथ लग गये। इस प्रदेशके कई अन्य शहरोंसे भी चौथ वसूल की जाने लगी।

लेकिन मई महीनेमे मुग़लोने उत्तर-कोंकणमे कल्याण शहर (राजधानी) पर अधिकार कर लिया और वह नौ वर्ष तक उनके कब्ज़ेमें रहा। इसके बाद क़रीब दो वर्ष तक (मई सन् १६६१ ई०से मार्च सन् १६६३ ई० तक) मुग़ल-मराठा युद्ध धीरे धीरे चलता रहा, किसी पक्षकी विशेष रूपसे जीत या हार नहीं हुई। यद्यपि फुर्तीले मराठे घुडसवार बीच-बीचमें मुग़ल-राज्यपर छापा मारकर लूटपाट किया करते थे, परन्तु साधारण तौरसे देखा जाय तो मुग़ल अपना कब्जा क़ायम रखने और कभी कभी उलटे मराठा गाँवोके ऊपर धावा बोलनेमे समर्थ हुए।

रातको शायस्ताखाँपर धावा

इसके बाद ही शिवाजीने एक ऐसा काण्ड कर डाला जिससे मुग़ल राज-दरबारमे खलबली मच गई, और सारे भारतमें शिवाजीकी जादूगरीकी प्रसिद्धि और दैवी चमत्कारका भय फैल गया। वे अगणित मुग़ल-सेनासे घिरे हुए शायस्ताखाँके तम्बूमें रातको घुस गये और मार-काटकर सही-सलामत ५ अप्रेल सन् १६६३ ई० को वापस लौट आये।

चाकनका क़िला जीतनेके बाद शायस्ता खाँ पूना लौट आया। वह वहाँ शिवाजीके बचपनके निवास-स्थान 'लाल-महल' मे ठहरा। उसके चारों ओर तम्बू कनातें खड़ी करके स्त्रियों और नौकर-चाकरोंके रहनेके लिए जगह बनाई गई। पहरेदारोंके रहनेका स्थान उसके पास

ही था। फ़ौजके सामन्तोने पूना नगरमे इधर-उधर आश्रय ले लिया। कुछ दूर दक्षिण, सिंहगढ़के रास्तेके किनारेपर शायस्ताखाँके बड़े अफ़सर महाराजा जसवन्तसिंह दस हज़ार फ़ौजके साथ डेरा डाले पड़े थे।

ऐसे सुरक्षित और सदा तैय्यार रहनेवाले बैरीका गढ़ तोड़नेके लिए अत्यन्त साहस, बुद्धि और तेजकी ज़रूरत है। शिवाजीमें ये सब गुण पूर्ण मात्रामें मौजूद थे, यह बात उनके पक्के बन्दोबस्तसे अच्छी तरह प्रकट होती है। उन्होंने एक हज़ार बहादुर सिपाहियोंको अपने साथ लिया, और सिपाहियोंको तथा सेनापतिके अधीन एक एक हज़ार मावलोंकी पैदल-सेना और घुड़सवारोंके दो दलोंको मुग़ल-शिविरकी दाहिनी और बाईं ओर आध आध कोसकी दूरीपर छिपा दिया।

इस प्रकार बन्दोबस्त करके शिवाजी सिंहगढ़से बाहर हो शामको पूनाके नज़दीक पहुँचे। अपने दलके छः सौ सिपाहियोंको बाहर छोड़कर तथा पेशवा मोरोपन्त और सेनापति नेताजीको दो तरफ़ तैनात कर बाकी चार सौ वीरोंके साथ वे मुग़लोंके खेमोंके बीचमें घुस गये। मुसलमान पहरेवालोंने पूछा, "तुम लोग कौन हो?" शिवाजीने उत्तर दिया, "हम लोग बादशाहकी दक्षिणी फ़ौजके आदमी हैं, अपने स्थानोंमें ठहरनेके लिए जाते हैं।" पहरेदार यह सुनकर चुप हो गये। उसके बाद पूनाके एक कोनेमें कई घंटे चुप-चाप बिताकर शिवाजी रातको शायस्ताखाँके रहनेके मकानके पास आ खड़े हुए। बचपनहीसे वहाँकी अंगुल अंगुल भूमि उनकी जानी हुई थी।

उन दिनो रमज़ानका महीना था। इस महीनेमे मुसलमान दिनमें

भूखे रहकर रातको खाते है। दिन-भर भूखे रहनेके बाद शामको ही खूब खाकर नवाबके मकानमे सब लोग गहरी नींद सो रहे थे। केवल दो-चार बवर्चियोने रातसे ही उठकर,—सूर्योदयके पहले खानेकी चीज़े पकानी शुरू कर दी थीं। इसके पूर्व कि वे लोग कुछ हल्ला-गुल्ला मचा सकें, मराठोंने पहुँचते ही उन्हें मारकर शान्त कर दिया। यह रसोईघर बाहरकी ओर था और इसीसे लगा हुआ अन्दर महलके नौकरोके रहनेका स्थान था, बीचमे केवल एक दीवार खड़ी थी। पहले इस दीवारमें एक छोटा-सा दरवाज़ा था, शायस्ता खाँने उस दरवाज़ेको ईटोसे चुनवाकर बन्द करा दिया था। शिवाजीके साथी साबलसे दरवाज़ेकी ईंटें निकालने लगे। उसी आवाज़से उस तरफके यानी अन्दर-महलके नौकर जाग उठे और खॉको खबर दी कि शायद चोर सेंध काट रहे है। इस मामूली-सी बातपर नींदमें विघ्न पड़नेके कारण खॉने गुस्सेमें आकर उन लोगोंको भगा दिया।

ईंटे हटाकर धीरे-धीरे दीवारमें आदमीके घुसनेके लायक छेद कर दिया गया। सबसे पहले स्वयं शिवाजी अपने रक्षक चिमनाजी बापूजीको साथ लेकर अन्दर-महलमे घुस पड़े। उनके पीछे पीछे उनकी दो सौ फ़ौज घुसी। बाकी दो सौ वीर सैनिक बाबाजी बापूजीके अधीन छेदके बाहर खड़े रहे। तलवारों और छुरोसे कनात काटकर रास्ता बनाया और दलबलके साथ शिवाजी तम्बूके बाद तम्बू पार करके अन्तमे शायस्ताखॉके सोनेकी जगहपर जा पहुँचे। उन लोगोंको देखकर भीतरकी औरतोने मारे डरके खाँको जगाया। लेकिन खॉके तलवार पकड़नेके पहले ही शिवाजी उसके ऊपर टूट पड़े और एक ही चोटमे उसके हाथकी अँगुलियाँ काट डालीं। इस समय महलकी एक होशियार दासीने बुद्धिमानी करके वहाँका दिआ

बुझा दिया; इससे दो मराठे अन्धेरेमे रास्ता न पाकर पानीके छोटेसे हौज़मे गिर पड़े। इसी बीच दासियोने खाँको एक सुरक्षित जगहमें पहुँचाया, लेकिन महलमें शिवाजीके आदमी भरसक मार काट करने लगे। छः दासियाँ मारी गई और आठ आदमी घायल हुए।

इधर शिवाजीके और दो सौ साथियोंने बाहरके पहरेवालोंके मकानोंमे घुसकर सोते अथवा ऊँघते हुए पहरेदारोको मार डाला, और दिल्लगी करने लगे कि मालूम होता है, तुम सब इसी तरह सोए सोए पहरा देते हो! उसके बाद वे नौबतखानेमें घुसकर बोले, " खाँ साहबका हुक्म है कि खूब ज़ोरसे नौबत बजाओ। " फिर क्या था, नगाड़ा, तुरही, भेरी और करतालकी आवाज़के साथ मराठोंकी चिल्लाहटने मिलकर एक विचित्र ताण्डव शुरू कर दिया! भीतरसे करुण-क्रन्दन और मराठोंकी हुंकार सुनकर मुग़लोंकी फौजने समझ लिया कि उनके सेनापतिको शत्रुने घेर लिया है। बस तुरत ही चारो ओरसे 'चलो चलो' का शब्द उठने लगा।

शायस्ताखाँका पुत्र अबुल फ़तह सबसे पहले पिताको बचानेके लिए दौड़ा, लेकिन वह अकेला क्या कर सकता था? वह भी शत्रुके हाथसे मारा गया। एक मुग़ल अफ़सरका डेरा महलकी बगलमे ही था। मराठे भीतरका दरवाज़ा बन्द देखकर, रस्सीके बल भीतरके आँगनमें कूद पड़े और फौरन ही भीतरवालोंको भी ख़तम कर दिया। इस प्रकार शायस्ता खाँका एक पुत्र, छः बाँदियाँ और चालीस पहरेदार मारे गये और वह स्वयं, उसके दो लड़के और आठ बाँदियाँ घायल हुए। मराठोंकी तरफ केवल छः आदमी मारे गये और चालीस जख़मी हुए।

यह सब कांड बहुत थोड़े ही समयमें हो गया। इधर शिवाजीने देखा कि शत्रु जब जीता ही भाग निकला, तब देर करना ठीक नहीं है। वे अपने अनुचरोंको इकट्ठा कर शिविरसे तुरत बाहर आ गये, और महाराज जसवन्तसिंहके तम्बूकी बगलसे सीधे दक्षिणकी ओर सिंहगढ़को चल दिये। मुग़ल उनको पकड़नेके लिए अँधेरेमें सारे शिविरमें इधर उधर व्यर्थ ही ढूँढ़ने लगे। उन लोगोंने सचमुच यह समझ लिया था कि मराठे कमसे कम दस-बीस हज़ार होंगे !

शायस्ताखाँका दुःख और सजा

सन् १६६३ ई० की ५ वीं अप्रेलको यह घटना घटी। दूसरे दिन सबेरे सब मुग़ल अफ़सर शोकमे सहानुभूति प्रकट करनेके लिए सेनापतिके दरबारमे हाज़िर हुए। इनमे जसवन्तसिंह भी थे। उनके अधीन दस हज़ार फौज थी और उनकी छावनी शिवाजीके रास्तेके ऊपर थी, तो भी उन्होंने बैरीके आने-जानेमें किसी तरहकी बाधा न दी और पीछे भी न हटे। उनकी कपट-पूर्ण दुःखकी बाते सुनकर शायस्ता खाँने कहा—"जी हाँ, देखता हूँ कि आप अभी तक ज़िन्दा ही हैं ! कल रातको जब दुश्मन हमको घेरे हुए थे, तब हमने यह समझा था कि आप उनको रोकने गये होंगे और वहीं आप काम आये, तभी तो वे हमारे पास तक पहुँच सके !"

नतीजा यह हुआ कि देशमे सब जगह लोग यह कहने लगे कि शिवाजीने जसवन्तसिंहसे मिलकर यह काम किया है। अँग्रेज़ व्यापारियोंने भी बदनामीभरी यह बात लिखी है, परन्तु शिवाजी अपने अनुचरोंसे कहते थे कि "हमने ज़सवन्तके कहनेसे यह बात नहीं की, बल्कि हमारे परमेश्वरने यह बात हमसे करवाई है।"

महाराष्ट्रमें रहना बिलकुल सुरक्षित न देखकर तथा लज्जा और खेदके कारण शायस्ताखाँ औरंगाबाद चला आया। उसकी असावधानी और अकर्मण्यताके ही कारण यह घटना घटी, यह विचार कर बादशाहने मामा शायस्ताखाँकी बदली बंगालमे कर दी, क्योंकि उस समय बंगालका नाम था 'रोटी-पूर्ण नरक।' बंगाल जाते समय रास्तेमे बादशाहसे मुलाकात तक करनेकी शायस्ताखाँको मुमानियत कर दी गई। सन् १६६४ ई० मे जनवरीके शुरूमे शाहज़ादा मुअज़्ज़म (शाह आलम) दक्षिणका सूबेदार होकर वहाँकी राजधानी औरंगाबाद पहुँचा, और शायस्ताखाँ बंगालकी तरफ चल दिया। इस तबदीलीके मौकेपर शिवाजीने बिना रोक-टोक सूरतका बन्दर (६ से १० जनवरी तक) मनमाने तौरपर लूटा।

सूरतका बन्दरगाह

भारतके पश्चिमी समुद्र-तटसे बारह मीलकी दूरीपर ताप्ती नदीके किनारे सूरत शहर बसा है। बहुत दिन पहले यहाँ बड़े बड़े जहाज़ आया-जाया करते थे, परन्तु अब नदी इस शहरसे छः-सात कोस पश्चिमकी ओर हट गई है, इसीसे आजकल समुद्रमें आने-जानेवाले सब जहाज़ उस मुँहके पास, सुहाइली (Swally Hole) नामक स्थानमे लंगर डालकर रहते है, तथा छोटे छोटे जहाज़ और किश्तियाँ नदीसे सूरत आती-जाती है। परन्तु उस समय यह मुग़ल-भारतका सर्वप्रधान बन्दर था। व्यापारके महसूलकी आमदनी और धन-दौलतमे केवल दिल्लीको छोड़कर और कोई शहर इसके मुक़ाबलेका नहीं था। पुराने हिन्दुओंके ज़मानेमे इसके कुछ उत्तरमे नर्मदाके मुहानेके पास भरुकच्छ (वर्तमान भरोच, पुराना ग्रीक नाम

बारगजा) श्रेष्ठ बन्दरके नामसे प्रसिद्ध था, परन्तु अब उसका ज़माना बीत चुका था। इसके सिवा सूरतसे ही मक्का-मदीना जानेवाले हजयात्रियोको लेकर जहाज़ छूटते थे, इसीलिए इसका नाम था 'इसलामके पुण्य-तीर्थका द्वार'। भारतके मुसलमान अरब देशकी तीर्थयात्राके लिये यहीसे जाते थे।

सूरतके दो हिस्से थे; एक क़िला, दूसरा शहर। क़िला छोटा और सुरक्षित था, लेकिन शहर चार वर्गमीलमे फैला हुआ धन-जनसे पूर्ण था। जन-संख्या दो लाख थी। व्यापारकी चीज़ोके महसूलसे राजकोषमे बारह लाख रुपये वार्षिककी आमदनी थी, और यो आमदनीकी चीज़ोका दाम करीब पाँच करोड़ होता था। उस समय शहरके चारो ओर खाईका अभाव था। केवल जगह-जगहपर बाहरसे आनेवाले रास्तोके नाकोपर मामूली ढंगके फाटक लगे थे, और कहीं कहीं छोटी दीवारे भी थीं, पर ये सहज ही पार की जा सकती थीं।

सूरत शहरके समान धन-दौलत भारतके और किसी स्थानमे मिलना कठिन था। इस शहरके एक बहरजी बोहरेकी हैसियत अस्सी लाख रुपयेकी थी। उसके बाद हाजी सैयद, सईदबेग तथा अन्यान्य बनियोकी तो बात ही नहीं थी। यह सब होते हुए भी शहरकी रक्षाका कुछ भी बन्दोबस्त नहीं था। शहरके फ़ौजदार राजदरबारसे पॉच सौ सिपाहियोकी तनख़्वाह अवश्य पाते थे, लेकिन एक भी सिपाही नहीं रखते थे,—सारे रुपये अपने ऐश-आराममे खर्च कर देते थे। शहरवाले भी शान्ति-प्रिय, दुबले-पतले, डरपोक, अहिंसाका दम भरनेवाले जैन पवित्रता-प्रेमी और अग्नि-उपासक पारसी,

धनके लालची दूकानदार और बेचारे गुजराती कारीगर थे। भला, ये सब अपनी रक्षाके लिए क्या लड़ते? भारतके बड़े बड़े महाजनोंने भी अपनी सम्पत्तिका हज़ारवाँ हिस्सा खर्च करके भी चौकीदार और सिपाही रखनेकी ज़रूरत नहीं समझी। सन् १६६४ ई० मे बादशाहकी ओरसे इनायतखॉ सूरतका हाकिम था। वह जैसा ही द्रव्य-पिशाच था वैसा ही बुज़दिल और बेकार भी। उधर किला एक ऐसे फ़ौजी अफ़सरके हाथमें था जो इनायतकी अधीनतामे न था।

अँग्रेज़ी कोठीकी विलक्षण आत्म-रक्षा

मंगलवारको (५ वी जनवरी) सवेरे सूरतवासियोंने भयपूर्वक सुना कि दो दिन पहले शिवाजी फ़ौजके साथ दक्षिणमे २८ मीलकी दूरीतक आ पहुँचे है और बड़ी तेजीके साथ सूरतकी ओर बढ़ रहे है। बस, शहर-भरमें खलबली मच गई, डरके मारे लोग भागने लगे। जिनसे बन पड़ा, वे औरत-बच्चोको ले नदी पारकर दूर-दूरके गॉवोमें जा छिपे। धनी लोग किलेके अफ़सरको घूस देकर सपरिवार वहाँ जा पहुँचे, और ऐसे व्यक्तियोंमें शहरका रक्षक इनायतखाँ सर्व-प्रथम था।

परन्तु मुट्ठीभर युरोपियन दूकानदार इस समय गजबका साहस दिखाकर अपने धन, प्राण और मानकी रक्षा करनेमें समर्थ हुए। सूरतके अँग्रेज़ और डच बनियोने अपनी अपनी कोठियोंमें हथियार ले शिवाजीकी फ़ौजका सामना किया और उसे भगा दिया। उनकी कोठियॉ साधारण खुले हुए मकानोंमे थीं,—वहाँ न कोई किला था और न चारों ओर चहारदीवारी ही। अँग्रेज़ी कोठीके मुख्य अफ़सर थे सर जार्ज आक्सिएडेन। यदि वे चाहते तो मज़ेसे सुहाइली भाग

कर जान बचा सकते थे, लेकिन वैसा न करके वे खुद सूरतमें रहे और लड़ाईमें मुखिया बने। जल्दीसे छोटी छोटी तोपें इकट्ठी की गई और सुहाइलीसे जहाजी गोरे बुलाये गये। कुल मिलाकर एक सौ पचास अँग्रेज और साठ चपरासी सूरतकी कोठीकी रक्षाके लिए नियत किये गये, चार तोपें छतके ऊपर चढ़ा दी गई; उनके गोले बगलके दोनों रास्तों और नवर्द्दाक्के हाजी सईद बेगके मकानके ऊपर पड़ सकते थे। बाकी दो तोपें सदर दरवाजेके पीछे रख दी गई। दरवाजेमें दो छेद इस प्रकार बनाये गये कि उनमें होकर तोपका मुँह बाहर निकल सके और सड़कसे कोठीमें आनेवालोंको सड़कपर आते ही उड़ाया जा सके। जल्दी जल्दी कुछ दिनके लिए रसद-पानी लाकर रख लिया गया। अँग्रेजोंमेंसे कुछ तो शीशा ढालकर गोलियाँ बनाने लगे, कुछ कोठीकी दीवारोंकी मरम्मत करके उन्हें और भी मजबूत करने लगे। हरएक आदमीको उसकी जगह बता दी गई, और उन लोगोंकी देख-भालके लिए बहुतसे कप्तान नियुक्त कर दिये गये। सब काम सिलसिलेवार, अच्छी तरहसे और पहलेहीसे विचार करके तय कर दिया गया। बुधवारको सबेरे आक्सिएडेन अपने दो सौ नौकरोंको लेकर डुगडुगी और तुरही बजाते हुए शहरके बीचसे निकले, और खुल्लमखुल्ला कहने लगे—इतने ही आदमी लेकर हम शिवाजीको रोक देंगे। डच लोग भी अपनी कोठियोंकी रक्षाके लिए तैयार हो गये। यह सब बन्दोबस्त देखकर और भी कितने ही तुर्क और आरमेनियन बनियोंने अपनी अपनी सम्पत्ति एक सरायमें ले जाकर उसे किला-सा बना लिया। केवल भारतीय ही सोते रहे।

शिवाजीका पहली बार सूरत लूटना

चुने हुए चार हज़ार घुड़सवारोंके साथ शिवाजी बम्बई होते हुए छिपते छिपते शीघ्रतासे आगे बढ़कर सूरतके पास पहुँच गये। रास्तेमें दो कोल राजा लूटमे हिस्सेके लोभसे छः हज़ार फ़ौज लेकर उनके साथ शामिल हो गये। बुधवार (छठी जनवरी १६६४ ई०) को दोपहरके समय शिवाजी सूरत शहरके सामने आ पहुँचे और उन्होने 'बुर्हानपुर दरवाजे' से सवा मीलकी दूरीपर एक बगीचेमे डेरा डाला। मराठे घुड़सवार इस बेपहरे-चौकीके अर्धजनहीन शहरमे घुसकर घर-बार लूटने और उनमें आग लगाने लगे। एक दल शहरके बीचसे क़िलेकी दीवारपर ताक-ताककर बन्दूकें छोड़ने लगा। मारे डरके क़िलेके पहरेदारोमेसे किसीने भी सिर ऊँचा न किया, और न शहरकी लूटमे ही कोई बाधा दी!

बुध, बृहस्पति, शुक्र और शनि,—चार दिन तक मराठोने शहरको बेरोक-टोक लूटा। वे रोज़ नये नये मुहल्लोमे जा-जाकर घर जलाने लगे। उस समय सूरतमे पक्के मकान दस-बीससे अधिक न थे, बाकी हज़ारो मकान काठकी खूँटीके सहारे बाँसकी दीवारे खड़ी करके उसपर खपरैल डालकर बनाये गये थे। ऐसी जगहपर मराठोके अग्निकाण्डने सहज ही रातमे भी दिनके समान उजेला कर दिया और धूएँने सूर्यको ढक कर दिनको रातके समान अंधकारमय बना दिया था।

एक अँग्रेज़ पादरीका विवरण

डच कोठीके पास सूरत ही नहीं, सारे एशियाखण्डके सबसे बड़े धनी वहरजी वोहरेकी कोठीमे कोई पहरेदार तक न देखकर और उसको जनशून्य पाकर मराठोंने तीन दिन तीन रात लगातार लूटा और

उसके फ़र्श तकको खोद डाला। अन्तमे सब धन-रत्न और अट्ठाईस सेर मोतियोंका बोझा लेकर उस घरको फूँककर वे चलते बने। अँग्रेज़ी कोठीके पास एक और महाजन सईद बेगके घरमें भी मराठे घुस गये, और दरवाजे तथा सन्दूक तोड़कर जितना मिला उतना रुपया लेकर चंपत हुए। उन्होने गोदाममे घुसकर पारेका पीपा फोड़कर सब पारा ज़मीनपर छितरा दिया। बृहस्पतिके दिन दोपहरको जब पचीस मराठे सिपाही अँग्रेज़ी कोठीके पास एक मकानमे आग लगानेको तैय्यार थे, उस समय अँग्रेज़ोने कोठीसे बाहर निकलकर उन लोगोको मारकर भगा दिया। इसपर सईद बेगके मकानके मराठे भी मारे डरके खिसक गये। दूसरे दिन अँग्रेज़ लोगोने अपने कुछ आदमी भेजकर इस महाजनके भी मकानकी रक्षाका भार अपने ऊपर ले लिया। इस प्रकार एक धनकी खान हाथसे निकल जानेसे शिवाजी बिगड़े और अँग्रेज़ी कोठीमे कहला भेजा—"या तो हमे तीन लाख रुपये दो, अथवा हाजी सईदके मकानको लूटने दो। नहीं तो हम खुद आकर तुम सबोंका गला काटेगे और तुम्हारी कोठी धूलमे मिला देगे।" चालाक अँग्रेज़ नेताने जवाब देनेके लिए कुछ समय मागकर शनिवारके सबेरे (चौथे दिन) तक तो टाला, और उसके बाद शिवाजीको कहला भेजा—"हम लोग दोनो शर्तोमेसे किसीपर भी राज़ी नहीं है। आप जो कर सकते हों, करें; हम लोग तैय्यार है, भागेगे नहीं। जिस समय इच्छा हो, इस कोठीपर चढ़ाई कीजिए। हम लोगोंने इस कोठीकी रक्षा करनेका दृढ़ संकल्प कर लिया है। यदि आपकी आनेहीकी इच्छा है, तो एक पहर जल्दी ही आइएगा।" परन्तु शिवाजीने और कुछ नहीं किया, क्योंकि उनको सूरतसे बिना

विघ्न-बाधाके एक करोड़से अधिक रुपये मिल गये थे। उन्होने सोचा कि दो एक लाखके लिए दृढ़-संकल्प अँग्रेज़ोंकी तोपोंके मुँहमें अपनी फ़ौजको क्यो झोके?

सूरतमें मराठोंके अत्याचार और खूनखराबी

मराठोंको सूरतकी लूटसे बेशुमार दौलत मिली। उस समयके समान धन रत्न आदि सूरतमे बहुत वर्षोंसे जमा न हुआ था। मराठोने सोना, चाँदी, मोती, हीरा और जवाहरातके सिवा और कुछ नहीं लिया।

अपना छिपा धन बतानेके लिए लोगोपर ज़ोर-जुल्म करनेमे मराठोंने कोई कसर न रखी थी। उन्हे चाबुकसे मारा गया, जानसे मार डाले जानेका डर दिखाया गया, किसीका एक हाथ और किसीके दोनो हाथ काट डाले गये और कितने ही लोगोके प्राण तक ले लिए गये। मिस्टर एण्टनी स्मिथ नामक एक अँग्रेज़ महाजनने अपनी आँखोसे देखा था कि शिवाजीके खेमेमें एक दिन छब्बीस आदमियोका सिर और तीस आदमियोके हाथ काटकर फेंक दिये गये थे। कैदियोमेसे जो यथेष्ट रुपये नहीं दे सका, उसका कोई न कोई अंग भंग करनेकी अथवा उसे जानसे मार डालनेकी आज्ञा हुई। शिवाजीकी लूटकी पद्धति यह थी कि प्रत्येक घरवालेसे जितना हो सका ले लिया, और फिर उससे कहा कि यदि घर बचाना चाहो तो उसके लिए और कुछ दो; फिर जब उसने कुछ और भी दिया कि तब उसी दम प्रतिज्ञा भंग करके आग लगा दी गई! (सूरत-कोठीकी चिट्ठीसे)

एक बूढ़ा बनिया आगरेसे चालीस बैलोपर लादकर कपड़े लाया करता था, परन्तु उनके न बिकनेसे वह शिवाजीको नक़द रुपया न

तरह घरके भीतर छिपा हुआ है। क्या वह समझता है कि हम भी औरत हैं जो उसकी इस मज़ाकिया सलाहको मान लेंगे?" नौजवानने जवाब दिया—"हम लोग भी औरत नहीं हैं। आपको और भी कुछ कहना है?" इतना कहते ही वह कपड़ेमें छिपाये हुए छुरेको निकालकर बड़े वेगसे शिवाजीके ऊपर टूट पड़ा, परन्तु एक मराठे शरीर-रक्षकने तलवारके एक वारसे ही उसका एक हाथ काट डाला, फिर भी नौजवान अपनी गतिको रोक न सका। उसी खूनसे भरे हुए ठूँठे हाथसे उसने शिवाजीपर चोट की और दोनों ज़मीनपर लोट गये। शिवाजीके शरीरमे खून देखकर मराठे चिल्ला उठे—"सब क़ैदियोको जानसे मार डालो"। तुरन्त ही खूनी नौजवानका सिर काट डाला गया। शिवाजी भी उठ खड़े हुए, और क़ैदियोको अपने सामने लानेका हुक्म दिया; उनमेसे चारको मार डाला और छब्बीस आदमियोके हाथ काट डाले, तब कहीं जाकर वे शान्त हुए।

अँग्रेज़ोंकी तारीफ़ और इनाम

रविवार १० जनवरीके सबेरे दस बजेके बाद मराठे अकस्मात् सूरतसे चल दिये और सन्ध्यासे पहले ही बारह मील कूच कर गये, क्योंकि शिवाजीको खबर मिली थी कि मुग़ल सिपाहियोका एक दल सूरतकी ओर आ रहा है। यह दल १७ वीं तारीखको पहुँचा, तब जाकर कहीं इनायतखाँको क़िलेसे बाहर निकलनेकी हिम्मत हुई। शहरकी प्रजा उसे देखकर थूकने लगी, कोई कोई तो उसपर कीचड़ तक फेकने लगे। इसपर इनायतके लड़केने गुस्सेमे आकर एक निर्दोष हिन्दू बनियेको मार डाला।

मुगल सेनाके पहुँचनेके बाद अँग्रेज़ व्यापारियोंने उसके नेतासे मुलाक़ात की। शहरके लोगोके मुँहसे उनकी तारीफ़ ही तारीफ़ सुननेमे आई, वे चिल्ला-चिल्लाकर कहते थे कि इन साहबोने अपनी कोठियोके आसपासके हम लोगोके बहुतसे मकानोकी रक्षा की है। बादशाह इन लोगोको इनाम दे। नये आये हुए सेनापतिने भी अँग्रेज़ोको खूब बधाई दी। आक्सिएडेन साहबके हाथमे एक पिस्तौल था; उन्होने उसको तुरन्त ही सेनापतिके सामने रखकर कहा—हम लोग अब हथियार छोड़ते है, क्योकि आगेसे आप ही शहरकी रखवाली कीजियेगा। सेनापति यह सुनकर खुश होकर बोले—“अच्छा, मै इसको लिए लेता हूँ, लेकिन आपको एक खिलअत, घोड़ा और तलवार भेट करूँगा”। चालाक वणिक गोरेने जवाब दिया—“जी नहीं। वह सब चीज़े तो जंगी लोगोके कामकी है। हम लोग तो बनिये है, रोज़गारकी सुविधाके सिवा हम और कोई इनाम नहीं चाहते।”

सूरतकी दुर्दशाकी बात सुनकर बादशाह बड़े दुःखी हुए और उन्होने एक वर्षके लिए सूरतवालोकी सब मालगुज़ारी माफ़ कर दी। साथ ही डच और अँग्रेज़ व्यापारियोको इनामके तौरपर भारतमे आनेवाले उनके मालपरकी चुंगीमे भी एक प्रति सैकड़ेकी सुविधा दी गई। यह मेहरबानी नवम्बर सन् १६७९ ई० तक चलती रही।

पाँचवाँ अध्याय

जयसिंह और शिवाजी: संघर्ष तथा सन्धि

सन् १६६४ ई० की लड़ाई

सूरतकी लूटके बाद एक वर्षतक मुग़लोंकी फ़ौजसे कुछ न हो सका। दक्षिणका सूबेदार शाहज़ादा मुअज़्ज़म (शाह आलम) औरंगाबादमे ही रहकर भोग-विलास और आनन्दमे अपने दिन काटने लगा। महाराज जसवन्तसिंह राठोरने, जो शाहज़ादेके दाहने हाथ थे, सिंहगढ क़िलेपर घेरा डाला, परन्तु अन्तमें असफल होकर २८ मई सन् १६६४ ई० को वे लौट आये। शिवाजीका दल अनेको स्थानोंमे लूट खसोट करने लगा। यदि आज वह महाराष्ट्रमे दिखलाई दिया, तो कल कर्णाटकमें और परसों पश्चिमी समुद्र-तटके प्रदेशोमें। लोग डर और आश्चर्यसे कहने लगे कि शिवाजी आदमी नही है, उनका शरीर हवाका बना है, तभी तो वे एक समयमे दूर दूरके भिन्न भिन्न स्थानोंमे जा सकते है! अँग्रेज़ी वणिकोंकी कोठीकी एक चिट्ठीमे शिवाजीके लिए लिखा है—"वे सदा कठोर कष्ट सहन कर जल्दी-जल्दी कूच करते है और अपने कर्मचारियोको भी उसी प्रकार चलाये जाते हैं। सारे देशके राजा उनके डरसे काँपते है। दिन पर दिन उनकी शक्ति बढ़ रही है।"

इसी समय २३ जनवरी सन् १६६४ ई० को घोड़ेसे गिरकर शाहजीकी मृत्यु हो गई। उनकी जितनी अस्थावर सम्पत्ति और मैसूर तथा पूर्वीय कर्णाटककी जागीर थी, सबपर शिवाजीके सौतेले भाई

व्यंकोजी (यानी एकोजी) कब्ज़ा कर बैठे ।

बार बार ऐसे नुकसान उठा कर और लज्जाजनक हार खाकर औरंगज़ेबने इस बार बहुत सोच-विचारके बाद शिवाजीको दबानेके लिए मिर्ज़ा राजा जयसिंह कछवाहा (आम्बेर अर्थात् मौजूदा जयपुर राज्यके मालिक) को ३० सितम्बर १६६४ ई० के दिन नियुक्त किया । उनके साथ नामी पठान वीर दिलेरखाँ, अरब सेनानी दाऊदखाँ, सुजानसिंह बुन्देला तथा अन्य अनेक सेनापति और चौदह हज़ार फ़ौज भेजी गई ।

राजा जयसिंहका चरित्र

मिर्ज़ा राजा जयसिंह मध्यकालीन भारतीय इतिहासकी एक अद्वितीय विभूति थे । ' राजपूत ' शब्दसे हम साधारणतः कोई बड़े साहसी, मानी, धन और स्वार्थकी परवाह न करनेवाले हठी वीर तथा त्यागी पुरुषका अनुमान करते है । जयसिंह लड़ाईमे चतुर, निडर और तेजस्वी पुरुष थे, परन्तु उसके साथ ही साथ कूट-नीतिमें और रौब-दाबसे लोगोंको हाथमें करके काम निकालनेमे भी वे कुछ कम चालाक न थे । इसीसे इज्ज़तदार राजपूतो और मुग़लो,—दोनो ही जातियोके सब गुण उनमे पाये जाते थे । वे बारह वर्षकी उम्रमे ही पितृहीन होकर मुग़लोकी सेनामें (सन् १६१६ ई० में) भर्ती हो गये । उसके बाद जहाँगीरकी अन्तिम अमलदारी और शाहजहाँके सम्पूर्ण शासनका इतिहास इनकी कीर्तिसे उज्ज्वल है । इधर पश्चिममे अफ़-गानिस्तानके कन्दहारसे लेकर उधर पूरबकी ओर मुंगेर और उत्तरमें आक्सू नदीके किनारेसे दक्षिणमे बीजापुर तक सब स्थानोमे मुग़ल फ़ौजको संग लेकर वे लड़े थे, और सभी जगह उन्होने नाम कमाया

था। वे राजनीतिक चालें चलनेमें भी कुछ कम चालाक न थे। सब विपत्ति-जनक और कठिनसे कठिन कामोमें बादशाह जयसिंहके ऊपर भरोसा करते थे।

ये साठ वर्षके प्रवीण सेनापति जब दक्षिणके एक जागीरदारके लड़केको दबानेके लिए आये, तब उनकी चिन्ताओंका अन्त न था। क्या मुग़ल और क्या बीजापुरी सरदार,—कोई भी शिवाजीको अभी तक हरा न सका था। शायस्ताखाँ और जसवन्तसिंह तक हार गये थे। उत्तर भारतसे प्रबल सैन्य-दल आनेपर बीजापुर और गोलकुण्डाके सुलतान भी मुग़लोंके डरसे शिवाजीका साथ दे सकते थे, इसलिए जयसिंहको उस तरफ़ भी दृष्टि रखनी पड़ती थी। उन्होने बादशाहको यह सच ही लिखा था—"हम रात-दिनके बीच एक पल भी विश्राम नहीं लेते। जिस कामको हमने अपने हाथमे लिया है, उसके विषयमें विचार किये बिना हम नहीं रहते।"

लड़ाईके लिए जयसिंहका बन्दोबस्त और चाल

विपत्ति ही मनुष्यत्वकी कसौटी है। जयसिंहने बड़ी चालाकी और फुर्तीसे भावी लड़ाईका सब बन्दोबस्त किया। पहले तो वे जितने बन पड़े, उतने लोगोंको अपनी ओर खींचने और शिवाजीके बैरियोको उभाड़नेमे लगे। पूना पहुँचनेके पहले ही जनवरी महीनेमे उन्होने मुग़ल-राज्यमे रहनेवाले दो पुर्तगाली कप्तानों, फ्रान्सिस्को और डिओ-गोडिमेलोको गोआमे पुर्तगालके राज-प्रतिनिधिके पास भेजकर शिवाजीकी जल-सेनाके ऊपर चढ़ाई करनेमें मदद माँगी।

जंजीराके हबशी सरदार सिदिको भी उसी मज़मूनकी चिट्ठी भेजी गई। विदनौर, वासवपटन, मैसूर इत्यादि स्थानोके राजाओंके पास

जयसिंहके ब्राह्मण दूतोंने जाकर अनुरोध किया कि वे इस मौकेपर अपने पुराने दुश्मन बीजापुर राज्यकी दक्षिणी सीमापर चढ़ाई करें। कोकणके उत्तरमे कोली देशके छोटे छोटे रजवाड़ोको मुग़लोकी ओर करनेके लिए जयसिंहके तोपखानेका फिरंगी अफ़सर निकोलो मनुची भेजा गया।

जिन जिनके साथ शिवाजीकी कभीकी भी दुश्मनी थी, उन सबोंको जयसिंहने बुला बुला कर अपनी फ़ौजमें नौकरी दी। मृत अफ़ज़ल खाँके लड़के फ़ज़ल खाँ और चन्द्रराव मोरेके लड़के बाजी चन्द्ररावने भी पितृ-हत्याका बदला लेनेका यह मौक़ा न छोड़ा। साथ ही नक़द रुपये और मुगल राज्यमे ऊँची नौकरीका लालच दिखाकर शिवाजीके किसी किसी कर्मचारीको बहकानेका काम भी शुरू किया गया। फिर बीजापुरके सुलतानको लोभ और डर दिखाया गया। उन्हे इस बातका भरोसा दिया गया कि अगर वे सचमुच मुगलोकी मदद करेगे तो बादशाह उनपर छिपे रूपसे शिवाजीको मदद देनेका सन्देह नहीं करेगे और सालाना पेशकशमेसे भी कुछ रुपये माफ़ किए जा सकेंगे।

जयसिंहकी बुद्धिमानीका सबसे बढ़कर उदाहरण तो उनके लड़ाईके तरीकोमे मिलता है जो उन्होने बादशाहकी मरज़ीके विरुद्ध ग्रहण किया था। वे जब पूना पहुँचे तब मार्चका महीना आरम्भ हो गया था। जुलाईमे बरसात शुरू हो जानेसे लड़ाई लड़ना असम्भव था और शिवाजीको हराना भी आवश्यक था। इस कामको इन्हीं तीन महीनोंके भीतर ही ख़तम करनेकी आवश्यकता थी, नहीं तो आगे आठ महीने और बैठे रहना पड़ेगा। इसीसे जयसिंहने निश्चय

किया कि सब फ़ौज इकट्ठी कर वे धड़ल्लेसे मराठोंके राज्य-केन्द्रपर बड़े ज़ोरका धावा मारेंगे और किसी दूसरी जगह नहीं जायँगे जिससे फ़ौज चारों तरफ़ बिखर कर बलहीन हो जाये। बादशाह उन्हें धनपूर्ण और उपजाऊ कोंकण-प्रदेशपर चढ़ाई करनेका बार बार आदेश देते लेकिन जयसिंह दृढ़ता-पूर्वक उस बातको न मानकर यही कहते रहे कि पूना-प्रदेश ही महाराष्ट्रका कलेजा है, उसको हाथमे कर लेनेसे कोंकण इत्यादि दूरके सब भाग आपसे आप अधिकारमे आ जायँगे।

अन्तमे जयसिंहने कहा कि लड़ाईमे दो-तीन नेताओंके हाथमे अधिकार बाँटे बिना और सबसे बड़े एक सेनापतिके ही अधीन सबको रखे बिना लड़ाई जीतना बिलकुल मुश्किल होगा। बादशाहने इस भली सलाहको मान लिया और उन्होने हुक्म दे दिया कि फ़ौजी कामका सब भार,—कामका बनाना बिगड़ाना, उन्नति-अवनति, रसद और तोप, मेल करना या घूँस देना आदि कामोमे,—केवल एक जयसिंहपर ही रहेगा; औरंगाबादके सूबेदार शाहज़ादा मुअज़्ज़मसे किसी बातकी मंजूरी या पूछताछ करनेकी कोई ज़रूरत नहीं होगी।

पुरन्दर-क़िलेका घेरा

जयसिंह दिल्लीसे बिदा हो फ़ौजके साथ तेज़ीसे कूचकर रास्तेमे एक दिन भी कहीं आराम किए बिना ३ मार्च सन् १६६५ ई० को पूना पहुँचे। उन्होंने पहले पुरन्दरपर चढ़ाई करना निश्चित किया।

पुरन्दरका क़िला पूना शहरसे चौबीस मील दक्षिणमे है। उसको क़िला न कहकर एक महान् सुरक्षित पहाड़का ढेर कहना ही ठीक होगा। पुरन्दरकी चोटी समतल भूमिसे दो हज़ार पाँच सौ फीट ऊँची है। चारों तरफ़ खड़े कटे हुए पत्थरोंसे घिरा हुआ यह क़िला है।

इसके तीन सौ फीट नीचे पहाड़से लगा हुआ नीचेका क़िला है जिसे मराठीमे ' माची ' कहते है । इसी माचीमे फ़ौजके रहनेके मकान और कारख़ाना है। कारण यह है कि यहाँ ज़मीन खूब फैली हुई है। पूरबकी ओर माचीके कोनेसे एक मील लम्बा एक पहाड़ है, उसके सिरेपर दीवालसे घिरा हुआ रुद्रमाल अथवा वज्रगढ़ नामका एक दूसरा क़िला है। इस वज्रगढ़से माचीके ऊपर गोला बरसाकर सहजहीमे वहाँसे शत्रुओको भगा दिया जा सकता है।

पूनामे रहकर जयसिंहने बहुतसे ज़रूरी स्थानोमे थोड़ी थोड़ी फ़ौजकी चौकियाँ बिठा दीं और स्वयं भी बाट-घाटकी रक्षा करने लगे। उसके बाद २३ वीं मार्चको रवाना होकर वे ३० मार्चको पुरन्दरके सामने जा पहुँचे। दूसरे दिनसे क़िला घेरनेका काम कायदेके साथ शुरू हुआ। बादशाही सेनाके भिन्न भिन्न सेनापतियोंने अपने दल-बल सहित पुरन्दरके प्रत्येक ओर अड्डा डालकर मोर्चे बनाये और क़िलेके ऊपर तोप दागनेकी चेष्टा की। दस दिन तक फ़ौजकी लगातार कोशिश और जयसिंहकी कड़ी देख-रेख तथा उत्साह-प्रदानसे तीन बड़ी-बड़ी तोपे एक ऊँचे पहाड़के ऊपर चढ़ा दी गईं। अब रुद्रमालके बुर्ज़पर भयंकर गोलाबारी शुरू हो गई। नतीजा यह हुआ कि बुर्ज़के सामनेकी दीवार टूट गई और घुसने लायक मार्ग दिखाई देने लगा।

रुद्रमालका बुर्ज़ जीत लिया गया

१३ अप्रेलको दोपहरके समय दिलेरखाँने अकस्मात् आक्रमण करके रुद्रमालके बुर्ज़पर कब्ज़ा कर लिया। मराठोने हटकर बीचमें दीवारोसे घिरी हुई एक जगहमे शरण ली, परन्तु दूसरे दिन सन्ध्याके

समय मुग़लो और राजपूतोंकी बन्दूकोंकी मारके आगे मराठे न टिक सके, इसलिए उन्होंने रुद्रमाल छोड़ दिया। जयसिंहने उनको प्राण-दान दिया और उनके नेताओंको सम्मान-सूचक पोशाकें देकर अपने-अपने घर लौट जानेकी अनुमति भी दे दी।

उसके बाद २५ अप्रेलको दाऊदखाँके अधीन छः हज़ार फ़ौज महाराष्ट्रके चारो ओरके गाँवोंको लूटनेके लिए भेजी गई। साथ ही कुतुबुद्दीनखाँ और लोदीखाँको भी अपने अपने थानोंसे निकलकर नज़दीकके गाँवोंको लूटने और गाय-बछड़े तथा किसानोंको क़ैद करनेका हुक्म दिया गया कि उसके फल-स्वरूप शिवाजीकी प्रजाका नाश और उनके देशका स्थायी अनिष्ट हो।

अपने सामने चारों ओरसे इस तरहका संकट देखकर मराठोंने पुरन्दरके घेरेवालोको भगा देनेकी वहुत कोशिश की। उन्होंने मुग़ल-प्रदेशके अनेक स्थानोपर छापे मारे, किन्तु जयसिंह पुरन्दरसे टससे मस नहीं हुए। मराठोंने दूर दूरके जिन स्थानोपर चढ़ाई की थी, उनकी रक्षाके लिए जयसिंहने केवल थोड़े-थोड़े घुड़सवार भेज दिए। निःसन्देह मुग़लोका वहुत नुकसान हुआ, लेकिन उससे उनके असली काम—पुरन्दरके घेरे—मे कोई बाधा न पड़ी। वहाँ रसद बराबर पहुँचती रही और वहाँके खेमे और फ़ौजें सुरक्षित रही।

वज्रगढ़ जीतनेके बाद ही दिलेरखाँ वहाँसे लम्बे पहाड़को लाँघकर, पश्चिमकी ओर आकर पुरन्दरके उत्तर-पूर्वके कोनेके ऊँचे बुर्ज़ 'खड़कला' के पास पहुँच नीचेके क़िले (माची) पर गोलाबारी करने लगा। मराठोंने दो बार रातको बाहर निकलकर दिलेरके इस मोर्चेपर आक्रमण किया, लेकिन उन्हे हारकर लौटना पड़ा।

धीरे धीरे मुग़लोका मोर्चा पुरन्दरके दोनो 'सफेद बुर्जो' के नीचे आ पहुँचा, लेकिन तब भी दीवार ज्योकी त्यो खड़ी थी। उसके ऊपरसे मराठोने जलता हुआ अलकतरा, बारूद, बमके गोले और पत्थर फेककर घेरा डालनेवालोको और आगे नहीं बढ़ने दिया। तब जयसिंहने एक ऊँचा काठका रथ 'कठघरा' बनवाकर सफेद बुर्जके सामने खड़ा करवाया। उनकी मंशा यह थी कि उसके ऊपरसे तोपे और बन्दूके दाग़कर दीवारके रक्षकोको मार भगाया जाय। साथ ही शत्रुओकी गोलियाँ रोकनेके लिए कठघरेके सामनेका भाग ढालका काम दे।

परन्तु इस कठघरेके तैयार होनेके पहले ही, जब कि सन्ध्या होनेमे केवल दो घंटे बाकी थे, दिलेरखाँको खबर दिये बिना ही रोहिला फ़ौजने 'सफेद बुर्ज' पर आक्रमण कर दिया। शत्रु उसे मारने लगे, परन्तु शीघ्र ही मुग़लोकी ओरसे और बहुत-से लोगोके आ जानेसे बड़ी गहरी लड़ाईके बाद मुग़लोकी जीत हुई। उन्होने सफेद बुर्जपर क़ब्ज़ा कर लिया। मराठे 'काले बुर्जपर' से पीछे हटकर बम, पत्थर इत्यादि बरसाने लगे, लेकिन मुग़ल डटे रहे। उसके दो दिन बाद मुग़लोकी तोपोकी मार सहन न कर सकनेके कारण मराठोने काला बुर्ज भी छोड़ दिया। इस प्रकार क्रमसे पाँच बुर्ज और नीचेके किलेका एक कठघरा बादशाही फ़ौजके हाथ लगे।

पुरन्दरके मराठोंकी हानि और उनकी विपदा

अब तो पुरन्दरको बचाना असम्भव था। इसके पहले ही एक दिन मराठा क़िलेदार मुरार बाजीप्रभु अपने मावले पैदल सिपाहियोको लेकर दिलेरखाँके पठानोके ऊपर जी-जानसे टूट पड़े थे। दोनो ओरके

बहुत-से सिपाही हताहत हुए, मुरार बाजीप्रभुकी तलवारके सामने कोई भी खड़ा न रह सका, अन्तमे साठ आदमी लेकर उन्होंने दिलेरखाँपर हमला कर दिया। दिलेर उनकी वीरतापर मुग्ध होकर कहने लगा—"सिपाहियो! कोई इसे मारना मत; और मुरार! तुम हथियार रख दो, तुमको ऊँचा पद दिया जायगा।" परन्तु मुरार नहीं थमे, तब दिलेरने उनके ऊपर बाण चलाया। मुरारके साथ तीन सौ मावले मारे गये; पठानोकी ओरके पाँच सौ आदमी काम आये, लेकिन तब भी मराठोंका साहस बना ही रहा, वे कहने लगे—"एक मुरार वाजी-प्रभु मर गये तो क्या हुआ? हम लोग भी उनकी बराबरीके हैं; देहमे दम रहने तक लड़ाइ जारी रखेगे।"

लेकिन जयसिंहके लगातार उद्योग और दो महीनोंकी निरन्तर लड़ाईके कारण पुरन्दरके रक्षकोका बल क्षीण हो गया। जब रुद्रमाल, पाँच बुर्ज और एक कठघरा हाथसे निकल गये, तब समूचा किला हाथसे निकल जानेका दिन नज़दीक आ गया। शिवाजीने देखा कि अब सन्धि न करनेसे मुग़ल ज़बरदस्ती पुरन्दर छीन लेगे और वहाँ आश्रय लेनेवाली तमाम मराठा स्त्रियोका धर्म नाश करेगे। इधर बाहर दाऊदखाँ भी रोज़ उनके गाँव ध्वंस कर रहा था।

जयसिंहके पूना पहुँचनेके पहलेसे ही शिवाजी उनके पास बराबर अपना ब्राह्मण दूत और चिट्ठियाँ भेजते रहे, लेकिन जयसिंहने उनका कोई जवाब नहीं दिया; क्योंकि वे जानते थे कि जब तक शिवाजीको बाहुबलसे न हरा दिया जाय, तब तक वे सचमुच काबूमे नहीं आयेगे। फिर २० मईको शिवाजीके पण्डित-राव (अर्थात् दानाध्यक्ष) रघुनाथ बल्लालने आकर एकान्तमे जयसिंहसे पूछा—

"आप क्या मिलनेपर सन्धि करनेको तैयार हैं?" मुग़ल प्रतिनिधिने जवाब दिया—"शिवाजी खुद आकर बिना किसी शर्त्तके आत्म-समर्पण करे, तो उनके ऊपर बादशाहकी कृपा दिखाई जायगी।"

शिवाजी और जयसिंहकी भेंट

यह बात सुनकर शिवाजीने पुछवा भेजा कि "क्या मेरे पुत्र शम्भूजीके वश्यता स्वीकार करनेसे काम नहीं चलेगा?" जयसिंहने उत्तर दिया—"नहीं, शिवाजीको खुद आना होगा।" अन्तमें शिवाजीने यह चाहा कि जयसिंह धर्मकी शपथ खाकर इस बातका वादा करे कि भेंटके लिए आनेके बाद मेल हो या न हो, परन्तु उन्हे सही-सलामत तो लौट जाने दिया जायगा। जयसिंहने वैसा ही किया और कहला भेजा कि "शिवाजी खूब छिपकर आवें, क्योंकि बादशाहने गुस्सेसे यह हुक्म दिया है कि उनके साथ मेलकी बातचीत बिलकुल ही न करके कठोरतासे लड़ाई जारी रखी जाय।"

यह बन्दोबस्त करके ८ जूनको रघुनाथ पण्डित अपने मालिकके पास लौटे। ११ तारीखको पहर-भर दिन चढ़नेपर जब जयसिंह अपने शिविरमें कचहरी कर रहे थे, उसी समय रघुनाथने आकर खबर दी कि शिवाजी केवल छः ब्राह्मणोंको साथ लिये, पालकीमे सवार बहुत नज़दीक आ पहुँचे हैं। जयसिंहने तुरन्त अपने मुन्शी उदय-राज और नातेदार उग्रसेन कछवाहेको शिवाजीके पास भेजकर खबर दी—"अगर आप अपने सब किलोंको देनेमे राज़ी हों तो आइए, नहीं तो यहींसे लौट जाइए।" शिवाजी—"अच्छा, अच्छा" कहकर उनके संग आये। शिविरके दरवाज़ेपर पहुँचकर बख़्शीने उनका स्वागत किया और भीतर ले गये। जयसिंहने स्वयं भी आगे

बढ़कर शिवाजीको गले लगा लिया और उनका हाथ पकड़कर गद्दीके ऊपर बिठाया। जयसिंहके राजपूत रक्षक तलवार और भाला हाथमें लेकर चारों ओर होशियारीके साथ खड़े हो गये। उन्हें शंका थी कि कौन जाने कहीं फिर अफ़ज़लखाँका-सा मामला न हो!

चालाक जयसिंहने शिवाजीपर रौब गाँठनेके लिए एक खेलका बन्दोबस्त ठीक कर रखा था। पहले रोज़ उन्होंने दिलेरखाँ और कीरतसिंहको हुक्म दे दिया था कि इशारा पाते ही वे दोनों मोर्चेसे निकल आगे बढ़कर पुरन्दरके 'खड़काला' नामक हिस्सेपर कब्ज़ा कर लेंगे। शिवाजीके पहुँचते ही जयसिंहने इशारा कर दिया। देखते ही देखते मुग़ल लोग भिड़ गये और उस जगहपर कब्ज़ा कर लिया। इस युद्धमें अस्सी मराठे मरे और कितने ही जखमी हुए। यह लड़ाई जयसिंहके तम्बूके भीतरसे साफ़ दिखाई देती थी। शिवाजीने पूछा कि माजरा क्या है? सब हाल मालूम होनेपर बोले—"नाहक ही हमारे आदमियोंकी और अधिक हत्या न कीजिए। लड़ाई बन्द कीजिए। हम अभी पुरन्दर छोड़ देते है।" तब जयसिंहने अपने मीर तुज़ुक ग़ाज़ी बेगको भेजकर दिलेरखाँको लड़ाई बन्द करनेका हुक्म दिया। साथ ही साथ शिवाजीने भी अपने कर्म्मचारीको भेजकर क़िलेके मराठा हाकिमको पुरन्दर दे देनेको कह दिया। क़िलेके निवासियोने अपनी चीज़-वस्त उठानेके लिए एक दिनकी मुहलत माँगी।

पुरन्दरकी सन्धिकी शर्तें

शिवाजी कुछ असबाब, बिछौना आदि न लेकर एकदम खाली हाथ आये थे, इसलिए जयसिंहने उनको मेहमान मानकर अपने दरबारके तम्बूमें ही रखा। आधी रात तक दोनों पक्षके बीच सन्धिकी

शर्तोंके बारेमें चर्चा होती रही। पहले तो जयसिंह कुछ भी छोड़नेके लिए राजी नहीं थे, परन्तु आखिरमे बहुत वाद-विवादके बाद निश्चय हुआ कि शिवाजीके तेईस किले और उनके आसपासकी सब जमीन (जिसकी सालाना आमदनी चार लाख होण अर्थात् बीस लाख रुपये थी) बादशाहको मिलेगी, और बारह किले (और उनके पासकी एक लाख होणकी आमदनीकी जमीन) शिवाजीके रहेंगे, लेकिन शिवाजी बादशाहकी प्रजा कहलायँगे और उनके अधीन होकर काम करेंगे।

हाँ, एक बातमे शिवाजीको अपमानसे बचाया गया। उनको खुद मनसबदार बन फौज लेकर बादशाहके अथवा दक्षिणके राजप्रतिनिधिके दरबारमे हाजिर न होना पड़ेगा। शिवाजीके बजाय उनके लड़के पाँच हजारी जागीरके उपयुक्त (कमसे कम दो हजार) फौज लेकर हाजिर रहेगे। बादशाहने उदयपुरके महाराणापर भी यही अनुग्रह दिखाया था। जयसिंहको मालूम था कि अधिक कड़ाई करनेसे शिवाजी हताश हो बीजापुरके साथ जा मिलेगे।

पुरन्दरकी सन्धिमें इनके सिवाय एक गुप्त शर्त भी थी। कोकण अर्थात् पश्चिमी घाट और समुद्रके बीचका बहुत लम्बा पतला लेकिन धन-जनपूर्ण प्रदेश बीजापुरके अधीन था। शीघ्र ही बादशाह बीजापुर राज्यके ऊपर धावा करनेवाले थे, अतः यह गुप्त रूपसे तय हुआ कि उस समय शिवाजी बीजापुरके हाथसे चार लाख होणकी आमदनीकी यह तल-भूमि (तल-कोकण या बीजापुरी पट्टन-घाट) और पाँच लाख होण आमदनीकी अधित्यका (अर्थात् बीजापुरी बालाघाट) अपनी फौजके द्वारा छीन लेंगे और उसपर बादशाह उनका अधिकार मान

लेंगे; लेकिन उसके लिए शिवाजी बादशाहको चालीस लाख होण (अर्थात् दो करोड़ रुपये) तेरह किश्तोंमें नजरानेके रूपमें देंगे। इस प्रकार जयसिंहकी कूट-नीतिका फल यह हुआ कि शिवाजी और आदिलशाहके बीच सदाके लिए झगड़ेका बीजारोपण हो गया।

मुग़ल-राजका अनुग्रह स्वीकार करना

उधर तो दिलेरखाँ जी-जानसे मेहनत करके और खून बहाकर पुरन्दरके बहुतसे हिस्सोंपर कब्ज़ा कर रहा था; परन्तु इधर शिवाजीने चुपचाप जाकर किला जयसिंहके सुपुर्द कर दिया, और इस प्रकार दिलेरको वाहवाही न लेने दी। दिलेरने इससे बिगड़कर जयसिंहसे कहला भेजा कि "सन्धि करनेपर राज़ी न होइएगा, आखिर तक मराठोंका ध्वंस कीजिए।" इसपर जयसिंहने दूसरे दिन (१२ जूनको) शिवाजीको हाथीपर चढ़ाकर, अपने कर्म्मचारी राजा रायसिंह सीसोदियाके साथ दिलेरखाँके पास भेज दिया। इस नम्रतासे दिलेरखाँ बहुत खुश हुआ। वह शिवाजीको अनेक भेट दे, अपने साथ जयसिंहके तम्बूमें लौटा लाया और वहाँ उसने शिवाजीका हाथ पकड़कर राजपूत राजाके हाथमें सौंप दिया। मुग़ल फौजने शिवाजीको हाथीके ऊपर देखकर समझ लिया कि सचमुचमें उन लोगोंकी पूरी जीत हुई है।

उसके बाद जयसिंहने खिलअत पहनाकर खुद उनकी कमरमें तलवार बाँध दी, क्योंकि शिवाजी सन्धिके लिए बिना हथियारके आये थे। उन्होंने भी भलमनसाहतके विचारसे कुछ देर तक तलवार लटकाए रखी, बादमें उसे खोलकर जयसिंहके सामने रख दी और कहा—"हम बादशाहके अनुग्रहीत हैं, लेकिन उनका काम हथियारके बिना ही अनुचर रहकर करेंगे।"

इसी दिन मराठोंने पुरन्दरका क़िला छोड़ दिया। उनकी चार हज़ार फौज, तीन हज़ार औरतें, बच्चे और नौकर किला छोड़कर बाहर निकल गये।

वहाँके सब हथियार, गोला-बारूद और जायदाद बादशाहने ज़ब्त कर ली; अन्यान्य किले सुपुर्द करनेके लिए शिवाजीने मुग़ल कर्मचारियोंके साथ अपने नौकर भेज दिये। १४ जूनको जयसिंहके पाससे एक हाथी और घोड़ा भेंटमे लेकर शिवाजी बिदा हुए। १८ तारीखको उनके लड़के शम्भूजी रायगढ़से आकर जयसिंहके शिविरमे पहुँचे। इस प्रकार जयसिंहने आश्चर्यजनक विजय पाई।

बीजापुरकी चढ़ाईमें शिवाजीकी सहायता और कीर्ति

पुरन्दरकी सन्धिकी शर्तोंको सुनकर और यह जानकर कि शिवाजीने अपनी प्रतिज्ञा पूर्णरूपसे पालन की है, बादशाह बहुत खुश हुए। उन्होंने शिवाजीकी सब प्रार्थनाएँ मंजूर की और अपनी पंजेकी छाप लगा हुआ एक फ़र्मान (यानी सिन्दूरमे डूबी हुई अँगुलियोंकी छापवाला शाही पत्र) और एक जोड़ा खिलअत शिवाजीके लिए भेजी। ये सब चीज़ें ३० सितम्बरको जयसिंहके शिविरमें पहुँची। जयसिंहके बुलानेपर शिवाजीने कुछ दूर पैदल चलकर बादशाही फ़र्मानकी रास्तेमें अभ्यर्थना की और शाही चिट्ठीको सिरसे लगाया; उस ज़मानेमें यही दस्तूर था। सन्धिके बाद इन साढ़े तीन महीनोंमे शिवाजीने कोई भी हथियार धारण नहीं किया था, क्योंकि वे बादशाहके विरुद्ध बग़ावत करनेके अपराधी हुए थे। जब तक बादशाहसे माफ़ी न मिले, तब तक उनको जेलखानेके कैदीकी तरह बिना हथियारके रहना होगा। अब फ़र्मान पाते ही जयसिंहने

उनको जबरदस्ती अपनी एक मणिजड़ित तलवार और छुरा पहना दिया, मानो शिवाजीके विद्रोहका प्रायश्चित्त पूरा हो गया।

इसके बाद जयसिंह अपनी विजयी सेना लेकर बीजापुर राज्यपर आक्रमण करनेवाले थे। यह तै हुआ था कि शिवाजी अपने लड़केके मनसबके दो हज़ार घुड़सवार और उसके अतिरिक्त और सात हज़ार मावले पैदल सिपाही लेकर खुद जयसिंहकी सहायता करेंगे। उसके लिए उनको दो लाख रुपये पेशगी भी दिये गये थे। अन्तमें २० नवम्बर सन १६६५ को जयसिंह बीजापुरकी चढ़ाईके लिए रवाना हुए। शिवाजी और उनके सेनापति नेताजी पालकरके अधीन नौ हज़ार मराठी फौजने मुग़ल सेनाके मध्य-विभागमें बाईं ओर जगह पाई।

जाते जाते शिवाजीके सिर्फ कहनेसे ही बीजापुरके अधीन कितने ही क़िले,—फल्टन, थाथवड़ा, खाटाव और मंगलविडे—जयसिंहको बिना लड़ाईके ही मिल गये। इस मंगलविडेसे बीजापुर शहर बावन मील दक्षिणकी ओर है। मुग़ल सेनाके आधी दूर पहुँचते पहुँचते बीजापुरी फ़ौज मुग़लोंका रास्ता रोकनेके लिए तैयार मिली। कई बार घोर संग्राम हुआ। शिवाजी और नेताजी जी-जानसे मुग़लोकी ओरसे लड़े। उधर शत्रु-पक्षमें शिवाजीके सौतेले भाई व्यंकोजीने बहादुरी दिखाई। एक दिन शिवाजी और जयसिंहके लड़के कीरतसिंह एक हाथीके ऊपर सवार हो मुग़लोंकी सबसे आगेकी फ़ौज लेकर बीजापुरी दलको भेद उस ओर तक चले गये थे। उधर एक दिन नेताजीने भी अदम्य साहसके साथ मुग़ल-फ़ौजके लौटते समय उसके पिछले हिस्सेको शत्रुके आक्रमणसे बचाया था।

इस प्रकार आगे बढ़ते-बढ़ते २९ दिसम्बरको जयसिंह बीजापुरके

क़िलेसे दस मील उत्तरकी ओर जा पहुँचे, लेकिन यहाँ उनका बढ़ना रुक गया और सात दिनके बाद उनको मजबूर होकर लौटना पड़ा। बात यह थी कि बीजापुरी दरबारके झगड़ेके समय जयसिंहने वहाँके बहुतसे उमरावोंको घूँस देकर मिला लिया था, इसलिए वे समझते थे कि राजधानीपर एकाएक चढ़ाई कर देनेसे नौजवान शराबी सुलतानके किये-धरे कुछ न हो सकेगा और बिना घेरा डाले ही बीजापुरपर दखल हो जायगा। इसी भरोसे वे बड़ी-बड़ी तोपें और क़िले जीतनेके अन्यान्य साज-सामान साथ नहीं लाये थे, लेकिन बीजापुरके पास पहुँचकर उन्होंने सुना कि आदिलशाहके बहादुर सेनापतिने क़िला बचानेके लिए सब बन्दोबस्त ठीक कर रखा है। उन्होंने बीजापुरके चारों ओर सात मील तकके पेड़ काटकर, पानीके सब तालाब सुखाकर, गाँवोंके खेत उजाड़कर मुग़लोंके आगे बढ़नेका रास्ता पूरी तरह रोक दिया था। साथ ही बीजापुरी फ़ौजका एक दल उनके पीछे जाकर बादशाही इलाकेमें लूट-पाट कर रहा था। फलतः जयसिंह हताश होकर ५ जनवरी सन् १६६६ ई० को पीछे मुड़े और धीरे धीरे अपनी सरहदपर परेण्डा-क़िलेके पास लौट आये। बीजापुरकी चढ़ाई बिलकुल बेकार हुई।

शिवाजीपर मुसलमान फ़ौजका गुस्सा

इस आशाके भंग होनेसे मुग़ल-फ़ौजमें भारी खलबली मची। इस हार और हानिके लिए सभी जयसिंहको दोष देने लगे। दिलेरखाँ पहलेसे ही जयसिंहको नहीं मानता था, अब वह कहने लगा— "शिवाजीके विश्वासघातसे बीजापुर जीता न जा सका। शिवाजीको मार डालना चाहिए। शिवाजी विश्वास दिलाकर कहते थे कि जल्दी

कूचकर आगे बढ़नेसे दस दिनके भीतर ही यह क़िला मुग़लोंके हाथ आ जायगा, वह क्यों नहीं हुआ ?" इसके पहले भी पुरन्दरकी सन्धिके बाद दिलेरख़ाँने बहुत बार जयसिंहको सलाह दी थी—" इस मौक़ेपर शिवाजीको खतम कर डालिए। कमसे कम हमको यह काम करनेकी इजाज़त दे दीजिए। हम इस पापका सब भार अपने ऊपर लेंगे, आपको कोई भी दोष न देगा।"

जयसिंहने देखा कि उन्मत्त मुसलमान सेनापतियोंके हाथसे शिवाजीकी प्राण-रक्षा करना कठिन है। इसलिए उन्होंने ११ जनवरीको रास्तेहीसे शिवाजीको अपनी फ़ौजके साथ बीजापुर राज्यके दक्षिण-पश्चिमकी ओरके प्रदेशपर आक्रमण करनेके लिए भेज दिया। उन्होंने प्रकट किया कि अब इस तरह शत्रुकी फ़ौजका बँटवारा हो जायगा और मुग़लोंके ऊपर उनकी चढ़ाईका सब भार न पड़ेगा। जयसिंहसे बिदा लेकर रवाना होनेके पाँच दिन बाद ही शिवाजी पनहाला क़िलेके पास जा पहुँचे। एक पहर रात रहते ही उन्होंने अकस्मात् क़िलेके ऊपर धावा कर दिया, लेकिन क़िलेके सिपाही पहलेसे ही तैयार बैठे थे, उन लोगोंने बड़ी बहादुरीके साथ शिवाजीका सामना किया। शिवाजीके एक हज़ार मराठे सैनिक मारे गये। उसके बाद सूर्योदय हुआ; पहाड़से होकर जो मराठे क़िलेपर चढ़ रहे थे, वे स्पष्ट दिखाई देने लगे और उनके ऊपर बन्दूककी गोलियाँ और पत्थर आ-आकर गिरने लगे (१६ जनवरी)। तब शिवाजी हार मानकर चौदह कोस दूर अपने खेलनाके क़िलेमें लौट गये। इस प्रान्तमें शिवाजीके आदमियोंको लूट-पाट करनेसे रोकनेके लिए छः हज़ार बीजापुरी फ़ौज और दो बड़े सेनापति मुकर्रर थे।

मराठा फ़ौजमे शिवाजीके बाद नेताजी पालकर ही सबसे प्रधान सरदार थे। लोग उनको 'दूसरा शिवाजी' कहते थे। उनकी पदवी 'सेनापति' की थी, और उन्होने शिवाजीके ही बख़्शीकी एक कन्यासे विवाह किया था। बीजापुरसे चार लाख होण बख़्शिश मिलनेपर वे इस समय एकाएक मुग़लोंका पक्ष छोड़कर आदिलशाहसे जा मिले और मुग़लोके गाँवो और शहरोको लूटने लगे। जयसिंह अब क्या करें? उन्होने पाँच हज़ारकी मनसबदारी, बड़ी भारी जागीर और नकद अड़तीस हज़ार रुपये देकर नेताजीको फिर अपने पक्षमे (२० मार्च १६६६ को) कर लिया। चारो ओरसे विकट आपत्ति आती देखकर जयसिंहने बादशाहको लिखा कि वे इस समय शिवाजीको भेट करनेके लिए मुग़ल राजधानीमें बुला लें, इससे मै दक्षिणमे बहुत कुछ निश्चिन्त रह सकूँगा। बादशाह इस बातपर राज़ी हो गया।

अनेकों आशाएँ और भरोसे देकर और बहुत तरहकी प्रलोभनभरी बाते करके जयसिंहने शिवाजीको बादशाहके दरबारमें जानेके लिए राज़ी किया।

छठा अध्याय

औरंगज़ेबके साथ शिवाजीकी मुलाक़ात और आगरेसे उनका निकल भागना

शिवाजीका आगरा जानेका कारण

पुरन्दरकी सन्धि (जून १६६५ ई०) मे शिवाजीने एक शर्त यह की थी कि अन्यान्य कर देनेवाले राजाओंकी तरह उनको खुद जाकर बादशाहके दरबारमे हाज़िर न रहना पड़ेगा, लेकिन दक्षिणमें ही कोई लड़ाई छिड़नेपर उनको अपनी फौजके साथ बादशाहकी सहायता करनी होगी। परन्तु बीजापुरके आक्रमणके बाद (जनवरी १६६६ ई० मे) जयसिंहने शिवाजीको अनेक भाँति समझाया कि बादशाहके साथ मुलाक़ात करनेसे उनको अनेक प्रकारके लाभ होंगे। चालबाज़ राजपूत राजाने शिवाजीकी खूब तारीफ़ की, और कहा कि आपके समान चालाक और योग्य वीरके साथ बातचीत करनेपर सम्भव है कि बादशाह आपके गुणोंपर रीझकर बीजापुर और गोलकुंडा जीतनेके लिए शाही फौज और धन लगानेके लिए तैयार हो जायँ। उस मौक़ेपर आप निजामशाही यानी अहमदनगरके लुप्त राज्यके बाक़ी सब प्रदेशोंपर कब्ज़ा करके अपना निष्कंटक और स्थायी अधिकार स्थापित कर सकेंगे। अब तक कोई भी मुग़ल सेनापति बीजापुरको अधीन नहीं कर सका है; यहाँ तक कि जब शाहज़ादे थे तब खुद औरंगज़ेब भी इस प्रयत्नमें विफल हुए थे; यह काम केवल आप ही कर सकते हैं।

शिवाजीकी भी कई एक प्रार्थनाएँ थीं। बादशाहके साथ मुलाक़ात कर उन्हे अपने चंगुलमे लाये विना वे पूर्ण होनेवाली न थीं,—जैसे जंजीराका पानीसे घिरा हुआ क़िला हाथमें आये बिना शिवाजीका कोकण राज्य पूरा और सुरक्षित नही हो सकता था। उस समय वह क़िला मलिक सिद्दी नामक हब्शीके हाथमे था जो उसे शिवाजीको देनेके लिए किसी प्रकार भी राज़ी नही था। शिवाजीने उसपर अधिकार जमानेकी बार बार कोशिश की, परन्तु उन्हे हर बार हारकर लौटना पड़ा था। सिद्दी अब बादशाहके अधीन हो गया था। उसे अब बादशाहका ही भय और भरोसा था, इसलिए बादशाह यदि हुक्म दे, तो उसे मजबूर होकर वह क़िला शिवाजीके हवाले कर देना पड़ेगा। शिवाजीने इस बातके लिए दिल्ली दरख़्वास्त भी भेजी थी, परन्तु कुछ परिणाम न निकला था। स्वयं जाकर मुलाक़ात करनेसे काममे सफल होनेकी आशा थी।

दिल्ली जानेकी बातपर शिवाजी और उनके साथियोके मनमे पहले वड़े बड़े संशय और विचार उत्पन्न हुए। एक तो उनका जीवन वन-जंगलों और गॉवोमे बीता था और उन्होने कभी राजधानी और बादशाही दरबारका मुँह नहीं देखा था; फिर उनकी दृष्टिमे यवन बादशाह रावणका अवतार था। शिवाजीको हाथमें आया देखकर अगर औरंगज़ेब विश्वासघात करे और शिवाजीको क़ैद करने या मार डालनेका हुक्म दे दे, तो क्या होगा? लेकिन जयसिंहने बड़ी कड़ी कसमें खाकर कहा कि बादशाह सत्यवादी है, और साथ ही यह भी विश्वास दिलाया कि उनके बड़े लड़के, कुमार रामसिंह बादशाहके दरबारमें उपस्थित रहकर शिवाजीकी देख-भाल

करेंगे। शिवाजीको दिल्ली जानेमे खतरेकी अपेक्षा लाभ अधिक दिखाई दिया, अतः वे दिल्ली जानेके लिए राज़ी हो गये।

शिवाजीकी आगरा-यात्रा—
देशका बन्दोबस्त और रास्तेकी बातें

परन्तु मुग़लोकी राजधानी दिल्लीमे जानेके बाद न मालूम कैसी आपत्ति आ पड़े, इस आशंकासे शिवाजी अपने राज्यकी रक्षा और उसके शासन-कार्यका ऐसा सुन्दर बन्दोबस्त कर गये कि जिससे उनकी अनुपस्थितिके समय भी देशमे मराठोका किसी प्रकार कोई नुकसान न होने पावे। सब जगह उनके कर्मचारीगण उनके बताये हुए क़ायदेके अनुसार काम चलायेंगे, प्रचलित नियमानुसार राज्यकी रक्षा करेंगे और किसी विषयके सम्बन्धमे नई आज्ञाकी प्रतीक्षामे उन्हे अपने मालिकका मुँह ताककर असहाय अवस्थामे बैठे रहना न पड़ेगा। शिवाजीकी मा जीजाबाई राज-प्रतिनिधिके रूपमे सबके ऊपर रहीं। उनकी सहायताके लिए तीन व्यक्ति नियुक्त किये गये—मोरेश्वर त्र्यम्बक पिंगले पेशवा यानी प्रधान मन्त्री बनें, नीलो सोनदेव मजमूया-दार यानी हिसाब किताबकी जॉच करनेवाले, और नेताजी पालकर सेनापति बनाये गये। राज्य-भरमे सब जगह घूम-घूमकर हरएक क़िलेकी जाँच करके, बचावका पक्का बन्दोबस्त किया गया, काम-दारोको रात-दिन होशियार और तैयार रहने तथा अपनी नियमावलीका पूरी तौरपर पालन करनेकी पूरी पूरी ताकीद की गई। यह सब प्रबन्ध करके शिवाजी सन् १६६६ ई० की पॉचवीं मार्चको माता और परिवार-वर्गसे विदा हो रायगढसे रवाना हुए। उनके पुत्र शम्भूजी, कई एक विश्वासपात्र मन्त्री और एक हजार शरीर-रक्षक फौज शिवाजीके

साथ चली। शिवाजीके राह-खर्चके लिए दक्षिणके खजानेसे एक लाख रुपये पेशगी दिये गये। इसके पहले ही शिवाजीके दूत बनकर रघुनाथ बल्लाल कोरडे और सोनाजी पन्त दबीर बादशाहके दरबारको रवाना हो चुके थे।

उत्तर भारतको जाते हुए शिवाजी पहले औरंगाबाद शहरमे पहुँचे। उनका नाम और उनकी फौजकी चमक-दमक और साज-बाजकी बाते सुनकर शहरके लोग आगे बढ़कर उनके दर्शनकी बाट जोह रहे थे, लेकिन उस स्थानके मुग़ल अफसर सफ़शिकनखाँने विचार किया कि शिवाजी एक मामूली ज़मींदार और जंगली मराठा है, इसलिए वह खुद उनके स्वागतके लिए नहीं गया, उसने अपने भाईके लड़केको भेज दिया और कहला दिया कि शिवाजी उसकी कचहरीमे आकर उससे भेट करे। इस अपमान-जनक बातसे शिवाजी बहुत बिगड़े और सफ़शिकनखाँकी बाते एकदम अनसुनी करके सीधे शहरके बीचमे अपने लिए ठीक किये मकानमे चले गये। उन्होंने ऐसा दिखाया, मानो इस शहरका शासनकर्ता आदमी कहलानेके भी योग्य नहीं है। सफ़शिकनखाँ समझ गया कि बड़े बेढबसे पाला पड़ा है, इसलिए वह नरम हो गया, और उसने सरकारी कर्म-चारियोके साथ जाकर स्वयं शिवाजीसे भेट की। इस प्रकार सबके सामने अपनी मान-रक्षा हो जानेपर शिवाजीका भी गुस्सा उतर गया। उन्होंने भी दूसरे दिन जाकर सफ़शिकनसे वापसी मुलाक़ात की, और मुग़ल अफसरोंको अपनी भलमनसीसे सन्तुष्ट किया।

कुछ दिन वहाँ रहकर शिवाजी फिर उत्तरकी ओर आगे बढ़े। बादशाहके हुक्मके अनुसार रास्तेके स्थानोंमे स्थानीय अफसर लोग

उनको रसद पहुँचाते और भेंट देते थे। इस प्रकार वे १३ वीं मईको आगरे पहुँचे। बादशाह उस समय आगरा शहरमें रहते थे। आठ वर्ष तक,—जब तक शाहजहाँ आगरेके किलेमे कैद रहे, औरंगज़ेबने कभी आगरेमें अपना मुँह नहीं दिखाया; तब तक वह दिल्लीमे ही रहा। सन् १६६६ की २२ वीं जनवरीको शाहजहाँकी मृत्युके बाद ही उसने आगरेके राज-भवनमें पहली बार प्रवेश कर वहाँ धूमधामसे अपने अभिषेकका उत्सव मनाया।

आगरेमें शिवाजीकी बादशाहके साथ मुलाकात और वहाँ शाही कैदसे शिवाजीके निकल भागनेका सबसे अधिक सच्चा और पूरा पूरा वृत्तान्त इसी वर्ष (सन् १९३९ ई०) जयपुर राज्यके पुराने दफ्तरमेसे निकला है। आम्बेरके मिर्ज़ा राजा जयसिंहका पुत्र कुमार रामसिंह कछवाहा उस समय मुग़ल दरबारमे हाज़िर था, और आगरेमें शिवाजीकी मेहमानदारी और रक्षाका प्रबन्ध करनेके लिए औरंगज़ेबने उसे ही नियुक्त किया था। हर रोज़ बादशाही दरबारमे जो जो घटनाएँ और बातचीत होती थीं, शामको अपने डेरेपर लौटकर रामसिंह वह सब अपने कर्मचारियोको कह देता था, जो उन सारी बातोको लिखकर आम्बेर दीवानके पास भिजवा देते थे। उस समयके लिखे हुए वे सब कागज अभीतक जयपुर राज्यके महाफ़िजखानेमे मौजूद है। ऐसी समकालीन और विश्वासयोग्य ऐतिहासिक सामग्री फारसी या अन्य किसी भाषामे लिखित ग्रन्थोसे प्राप्त नहीं हो सकती है। जयपुरसे प्राप्त इन कागज़ोंसे बहुत-सी प्रचलित गप्पे एवं दन्तकथाएँ बिलकुल झूठ साबित हो गई है।

औरंगज़ेबके साथ शिवाजीकी भेट

चाँद-तिथिके अनुसार बादशाह औरंगज़ेबका ४९ वाँ जन्मदिन १३ मई १६६६ ई० को पड़ता था। बादशाहने हुक्म दिया कि उसी शुभ दिनको शिवाजी बादशाहका दर्शन करेंगे। मामूली अदब-कायदा ऐसा था कि जब कोई बड़ा आदमी राज-दर्शनके वास्ते आता था, तो उसके दरजेके मुताबिक एक या दो बड़े उमरा राजधानीसे एक दिनकी मंजिल आगे बढ़कर उससे मिलते थे, उसको साथ ले आते और फिर दरबारमे राज-दर्शनके लिए ले जाते। इस आगे बढ़कर स्वागत करनेको इस्तिकबाल या पेशवाई कहते है।

लेकिन शिवाजीको आगरा पहुँचनेमे एक दिनकी देरी हो गई। १२ मईको शिवाजी आगरेसे एक मंजिलकी दूरीपर सराय-मलूकचंद तक ही आ पाये थे और वहीं उन्होंने मुकाम किया था। पर वह दिन बादशाहकी सालगिरहके दरबारका था और किलेके सामने रातको पहरा देनेकी बारी कुमार रामसिंहकी थी, इस कारण रामसिंह स्वयं शिवाजीकी पेशवाईके लिए नहीं जा सके और उन्होने अपने वकील मुंशी गिरधरलालको शिवाजीके पास भेज दिया कि राह बताकर शिवाजीको आगरेमे लिवा लावे। १३ वीं मईको सुबह जब रामसिंहको फुरसत मिली तब तक शिवाजी आगरा शहरमे आ पहुँचे थे। उधर गिरधरलाल भी ठीक रास्ता भूलकर दूसरे ही रास्तेसे शिवाजीको ले आया! अन्तमें बाज़ार और ख़्वाजा फ़िरोज़के बागके बीचमे, नूरगंज बागमे शिवाजी और रामसिंहकी भेट हुई। इस सारे गोलमालसे जैसी चाहिए वैसी शिवाजीकी पेशवाई नहीं हुई। यह हुआ शिवाजीका पहिला अपमान।

आम रास्तेमें घोड़ेपर बैठे ही बैठे रामसिंह और शिवाजी बगलगीर हुए और जहाँ शिवाजीके ठहरनेके लिए डेरे लगाए गए थे वहाँ ले जाकर उन्होंने उनका विधिवत् स्वागत किया। कुछ देर वहाँ ठहर कर बादमें रामसिंह शिवाजीको लेकर दरबारके लिए रवाना हुए।

इधर देरी बहुत हो चुकी थी और बादशाह दीवान आमका दरबार ख़तम कर क़िलेके भीतरी दीवान ख़ासमें चले गए थे। कुमार रामसिंह शिवाजीको वहीं ले गये। सफ़ेद पत्थरका बना हुआ यह दीवान खास जन्म-दिनके उत्सवमे बाक़ायदा सजाया गया था और जमीनपर बहुत बढ़िया गलीचा बिछाया गया था। यहाँ भी ऊँचे दर्जेके अमीर-उमरा और राजा लोग खूब चमकीली पोशाके पहनकर अपने अपने दर्जेके अनुसार खड़े थे। हिन्दी कवि भूषणने ठीक ही कहा है कि इस जन्म-दिवसके उत्सवके दरबारमे औरंगज़ेब स्वर्गमे तेजपूर्ण देवताओंसे घिरे हुए इन्द्रकी तरह बैठा था।

राजसभा लोगोंसे खचाखच भरी थी। सभासदोकी भाँति-भाँतिकी रंग-बिरंगी पोशाकें, रंगीन गलीचे और चमकदार किनख़ाब देखनेसे ऐसा भ्रम होता था मानों जमीन एक रंगीन फूलोंका बगीचा है। चारो ओर दरबारियों और कर देनेवाले छोटे-छोटे राजाओंके शरीरके आभूषणोंसे हीरा, मोती और नाना प्रकारके रत्नोकी ज्योति फैल रही थी। बादशाह राजगद्दीपर बैठा था।

कुमार रामसिंहने उसी समय दरबारमे शिवाजी और उनके दस कर्मचारियोंको उपस्थित किया। बादशाहके हुक्मके मुताबिक बख़्शी असदख़ॉने शिवाजीको औरंगज़ेबके सामने हाज़िर किया। मराठा राजाकी ओरसे एक थालमे एक हज़ार मोहरे और दो हज़ार रुपये

रखकर बादशाहके पैरोके निकट नज़रके रूपमे रखे गये। शिवाजीने पॉच रुपए न्यौछावर[1]के रूपमे भेट किए। लेकिन बादशाहने शिवाजी-की सलामके जवाबमे एक बात भी नहीं कही। तब मन्त्रीने शिवाजीको तख्तके सामनेसे ले जाकर उन्हे पॉच हजारी मनसबदारोकी कतारमे खड़ा कर दिया। दरबारका काम चलने लगा, मानो सब कोई शिवाजी-की बात ही भूल गए। यह हुआ शिवाजीका दूसरा अपमान।

कितना आदर और सत्कार पानेकी आशासे शिवाजी आगरे आए थे, और उन सब आशाओका यह अन्त एवं परिणाम था! दरबारमे आनेके पहलेसे ही उनके मनमे दुःख और संदेह होने लग गया था। पहली बात तो यह थी कि आगरेके बाहर आकर किसी बड़े उमरावनें उनका स्वागत नहीं किया। सिर्फ कुमार रामसिंह (ढाई हज़ारी मन्सबदार) और मुखलिसखॉ (डेढ़ हज़ारी मन्सबदार) ये दो मध्यम श्रेणीके उमरा कुछ ही दूर आगे बढ़कर शिवाजीको अपने साथ ले आए थे। दरबारमे भी उन्हे पॉच हजारी मन्सबदारोमे खड़ा किया।

उसके बाद सालगिरहके उत्सवके पान सब उमराओको दिए गए, शिवाजीको भी पान मिला। तब इस जलसेकी खिलअते और सिरोपाव सिर्फ शाहज़ादो, वज़ीर जाफ़रखॉं और महाराजा यशवन्त-सिंह (जोधपुर) को दिए गए; शिवाजीको खिलअत नहीं मिली। इधर घण्टे-भरसे दरबारमे खड़े रहनेके कारण शिवाजी थक गए और अब इस तीसरे अपमानको वे बरदाश्त नहीं कर सके। वे

---

१ बादशाहके शरीरपरसे अशुभ दृष्टिका प्रभाव दूर करनेके लिए जो रुपए, रत्न आदि थालीमें रखकर या यों ही उनके सिरके चारो ओर घुमानेके बाद लोगो-मे बॉट दिए जाते थे उसको न्योछावर कहते हैं।

शोकाकुल होकर गुस्सेसे लाल हो गए, उनकी आँखे डबडबा आई। यह औरंगज़ेबकी नज़रसे छिपा न रहा; उसने रामसिंहसे कहा— "शिवाजीको पूछो कि उसकी तबियत कैसी है?" कुमार शिवाजीके पास आए तब शिवाजी कहने लगे—"तुम देखो, तुम्हारे बापने देखा है, तुम्हारे बादशाहने देखा है; कहो क्या मै ऐसा आदमी हूँ कि मुझे जान बूझकर खड़ा रखा जाय? मै तुम्हारा मनसब छोड़ता हूँ। यदि खड़ा ही रखना था तो मुझे ठीक स्थानपर खड़ा करते।" तब वहींसे मुड़कर बादशाहकी तरफ पीठकर शिवाजी चल पड़े। रामसिंहने शिवाजीका हाथ पकड़ा पर वे वह हाथ भी छुड़ाकर चले और एक ओर जाकर बैठ गए। रामसिंहने वहाँ जाकर उन्हे फिर समझाया परन्तु शिवाजीने एक न सुनी; वे कहने लगे, "मेरी मौत आई है, या तो तुम मुझे मारोगे या मै आत्म-घात कर लूँगा। मेरा सिर काट कर ले जाना चाहो तो तुम ले जाओ, मै तो बादशाहकी सेवामे नहीं आता।" जब शिवाजीने एक न मानी तो रामसिंहने आकर बादशाहकी सेवामे सब हाल अर्ज़ किया। तब बादशाहने मुल्तफितखाँ, आकिलखाँ और मुखलिसखाँको हुक्म दिया कि "तुम जाकर शिवाको दिलासा दो, उसे सिरोपाव दो और सन्तुष्ट कर उसे ले आओ।" वे उमराव शिवाजीके पास पहुँचे और बोले—"सिरोपाव पहनो।" शिवाजीने जवाब दिया— "बादशाहने मुझे जान बूझकर यशवन्तसिंहसे नीचे खड़ा किया है, इसलिए मैं सिरोपाव नहीं पहिनता। मैं बादशाहका मन्सब नहीं लेता; बादशाहका सेवक नहीं बनता। मुझे मारना चाहो तो मारो, कैद करना चाहो तो कैद करो, परन्तु मै सिरोपाव नहीं पहनूँगा।"

तव उन उमराओंने जाकर वादशाहसे यह वात अर्ज़ की। बादशाहने हुक्म दिया—"कुमार, अभी तो तुम उसको अपने साथ ले जाओ और डेरेपर ले जाकर शान्त करो।" रामसिंह शिवाजीको लेकर डेरे आये और वहुत कुछ समझाया, परन्तु उन्होंने फिर भी एक न मानी। एकाध घड़ी अपने पास रखकर रामसिंहने उन्हे उनके डेरेपर भेज दिया।

उधर वादशाहकी सेवामे कितने ही उमराव ऐसे थे जो शिवाजीको चाहते न थे। उन्होंने बादशाहसे अर्ज़ की—"शिवाने बेअदवी की और हुजूर उसे दर-गुज़र करते है!" सैय्यद मुर्तजाखॉने कहा—"वह तो हैवान है, सिरोपाव आज नही पहना तो कल पहिनेगा। केवल मिर्ज़ा राजाका ही ख़याल है, इसकी तो कोई चिन्ता नहीं।"

सालगिरहके दरवारके वाद दो-एक दिन तक सवको उम्मीद थी कि शिवाजी शान्त होकर फिर दरवारमें आवेंगे, अपनी बेअदबीके लिए क्षमा माँगेगे और खिलअत पहिनकर देशको लौट जानेके लिए रुख़सतके लिए अर्ज़ करेगे। लेकिन शिवाजीने दरवारमे जानेसे बिलकुल इन्कार कर दिया, सिर्फ अपने पुत्र शंभाजीको रामसिंहके साथ भेज दिया।

दूसरी तरफ़ वेगम साहिवा, जयसिंहका प्रतिद्वन्दी यशवन्तसिंह और दो-एक उमराओंने वादशाहकी सेवामे अर्ज़ की कि—"शिवाजी केवल एक छोटा भूमिया, गँवार आदमी है। उसने खुले दरवारमे हुंजूरके सामने इतनी गुस्ताख़ी की। आप क्यो यह सव बरदाश्त करते है? अगर उसको सज़ा नहीं दी जावेगी तो और भूमिया भी ऐसी ही बेअदवी करेगे।" यह सव सुनते सुनते अन्तमे वादशाहको भी यही ठीक जान पड़ा कि या तो शिवाजीको मरवा डाले या कैद कर दे।

शिवाजीको मारनेका हुक्म देनेसे पहले बादशाहने जयसिंहको लिखवा कर यह पुछवाया कि आगरा भेजते समय क्या क्या सौगन्दें खाकर उसने शिवाजीको तसल्ली दी थी।

मिर्ज़ा राजा जयसिंह उस समय दक्षिणमें थे, और उनका उत्तर आनेमे काफ़ी समय लगेगा यह ख़याल कर औरंगज़ेबने हुक्म दिया कि तब तकके लिए शिवाजीको आगरेके किलेके किलेदार राह-अन्दाज़ख़ाँको सौप दिया जावे। यह रामसिंहको मंजूर न था, उन्होने जाकर मंत्री आमिनख़ाँसे कहा,—"मेरे पिताके कौल-पर शिवाजी आगरा आए है। मैं उनकी जानका जिम्मेदार हूँ। बादशाहको अर्ज़ कीजिएगा कि पहले हमको मार डाले; मेरे मरनेके बाद जो आप चाहे शिवाजीके साथ करें।" यह सब सुनकर औरंगज़ेबने शिवाजीको रामसिंहके ही सिपुर्द कर दिया, और राम-सिंहने मुचलका लिख कर बादशाहकी सेवामे पेश कर दिया कि यदि शिवाजी भाग जायँ या आत्मघात कर डालें तो उसके लिए रामसिंह जवाब देगे। परन्तु इतनेसे ही बादशाहको सन्तोष न हुआ।

शिवाजीका आगरेमें नजर-बन्द होना

आगरा शहरके कोतवाल सिदी फौलादख़ाँने शाही हुक्मसे शिवाजीके डेरेके चारों तरफ़ तोपें रखवा कर सरकारी फौजें बिठा दीं। डेरेके अन्दर भी आम्बेरी सेनाके तीन-चार अफ़सरो और कछवाही फौजका पहरा लगता था। मराठा राजा सचमुच कैद हो गया; अब उसका घरसे निकलना भी बन्द हो गया।

बन्दी शिवाजीकी शाही दरबारमें कोशिश

पहले तो शिवाजीको उम्मीद थी कि वे वज़ीर जाफ़रख़ाँ और

दूसरे बड़े दरबारियोंको रुपया देकर अपना कुसूर माफ करवा लेंगे, और इसी कारण बादशाहसे सिफारिश करनेके लिए शिवाजीने उनकी मिन्नतें भी कीं। परन्तु अब तक शिवाजीका सूरत बन्दर लूटना और अपने मामा शायस्ताखाँका शिवाजीके हाथों घायल होना औरंगज़ेब भूला न था; उसने किसीकी भी कोई बात न सुनी।

शिवाजीने यह भी अर्ज़ करवाई कि "अगर बादशाह मुझको छोड़ दे तो मैं देश पहुँचकर अपने अधिकारके सारे किले बादशाही अफसरोंको सौंप दूँगा। मेरा दक्षिण जाना जरूरी है, क्योंकि मेरे किलेदार सिर्फ मेरे खतको पढकर ही मेरा हुक्म न मानेंगे।" लेकिन औरंगज़ेब ऐसी बातोंसे भुलावेमें आनेवाला न था। बादशाही दरबारमें एक बार यह भी निश्चय हुआ कि शिवाजीको रामसिंहकी अधीनतामें नियुक्त कर काबुल भेज दे, परन्तु बादमें यह निश्चय भी रद ही रहा।

अन्तमें हताश होकर शिवाजीने औरंगज़ेबकी सेवामें एक अर्जी पेश की कि "यदि आज्ञा मिले तो फ़कीर होकर मैं किसी तीर्थमें अपना बाकी जीवन बिता दूँ।" औरंगज़ेबने कुटिल हँसी हँसकर जवाब दिया—"बहुत अच्छा! फ़कीर होकर प्रयागके किलेमें रहो, तुम्हें वहाँ भेज देंगे; वह बहुत बड़ा पुण्य तीर्थ है। वहाँ मेरा सूबेदार बहादुरखाँ तुमको बहुत हिफ़ाज़तसे रखेगा।"

शिवाजीने भागनेका एक अजीब रास्ता ढूँढ़ निकाला

चारों ओरसे निराश होकर शिवाजी एक दिन अपने लड़केको छातीसे लगाकर रोने लगे। लेकिन यह दशा बहुत दिनोंतक न रही। शिवाजीकी प्रखर बुद्धि और उनके अदम्य साहसने शीघ्र ही उद्धारका मार्ग ढूँढ़ निकाला। पहले तो उन्होंने रामसिंहसे कह कर अपनी

जिम्मेवारीका मुचलका रद करवाया । फिर उन्होने अपनी रक्षक सेनाके देश लौट जानेकी परवानगी चाही । बादशाहने भी सोचा कि अच्छा ही है, आगरेमे जितने भी दुश्मन कम हो उतना ही भला । ७ जूनको यह फौज महाराष्ट्रके लिए रवाना हो गई । उसीके साथ शिवाजीके बहुतसे मित्र और साथी भी लौट गए, और अब आगरेमे शिवाजी अकेले ही रह गए । १३ जुलाईको शिवाजीने कुमार रामसिंहसे ६६,०००) रुपये लेकर उसकी हुंडी दक्षिणमे जयसिंहके पास भिजवा दी और दक्षिणमे शिवाजीके वकीलने स्वयं जाकर इस हुंडीका रुपया जयसिंहको चुकाया । शिवाजीने अपना एक हाथी, एक हथिनी, कीमती कपड़ोसे भरी हुई दो वहली* वगैरह सामान अपने सभाकवि कवीन्द्र परमानन्दके साथ आम्बेरकी राह भेज दिया । अन्तमे दक्षिण ले जानेके लिए शिवाजीने मूलचंद साहूकारके हलकारोको भी गुप्त रूपसे कुछ मोती और मोहरे सौपकर रवाना किया ।

अब शिवाजीने अपने भागनेका उपाय भी सोच निकाला । बीमारीका बहाना करके वे पलंगपर लेट गये । घरसे बाहर निकलते ही नहीं थे । बीमारी दूर करनेके लिए वे ब्राह्मणों, साधुओ, सज्जनो और सभासदोके यहाँ बड़ी बड़ी टोकरियाँ भर-भरके फल और मिठइयाँ भेजने लगे । हरएक टोकरीको बाँसके डंडेमे लटका कंधेपर रखकर दो कहार शामके समय बाहर ले जाते थे । कोतवालीके पहरेदारोने पहले कुछ दिनो तक तो टोकरियोको जॉच कर देखा । उसके बाद बिना देख-भाल किये ही टोकरियोको ले जाने देने लगे ।

शिवाजी इसी मौकेकी ताकमे थे । १६ वीं अगस्तको दोपहरके

* वहली—रथके आकारकी छतरीदार या मंडपदार बैलगाड़ी ।

समय उन्होंने पहरेदारोंसे कहला भेजा कि उनकी वीमारी वढ़ गई है, अतः वे उन्हे तंग न करे। इधर घरके भीतर उनके सौतेले भाई (शाहजीके दासीपुत्र) हीराजी फ़र्ज़न्द,—जो देखनेमें कुछ शिवाजी जैसे ही थे शिवाजीकी खाटपर चद्दरसे शरीर और मुँह ढककर लेट रहे। केवल उनका दाहिना हाथ चद्दरके बाहर निकाला हुआ था। इस हाथमे उन्होने शिवाजीका सोनेका कड़ा पहन लिया जो दूरसे दिखाई देता था। शामको शिवाजी और शम्भूजी दो टोकरियोमें मुर्देकी तरह लेट गये। उनके ऊपर अच्छी तरह पत्ते ढक दिये गये। उन टोकरियोंके आगे और पीछे कई टोकरियोमें सचमुच फल और मिठाइयॉ भरकर, एक लाइन वॉधकर कहार लोग डेरेसे बाहर निकले। वादशाहके पहरेदारोने कुछ भी चूँ-चरा नही की, क्योकि यह तो रोज़मर्राकी वात थी। भाद्रपद कृष्ण चतुर्दशीकी घनी अँधियारी रात थी।

आगरे शहरके बाहर पहुँचकर एक निर्जन स्थानमें टोकरियॉ रखवा दी गई। कहार मजूरी ले लेकर चल दिये। उसके बाद शिवाजी और शम्भूजी टोकरीसे वाहर निकलकर, साथमे जो दो मराठे नौकर आये थे, उनकी मददसे तीन कोस पैदल चलकर एक छोटेसे गॉंवमे जा पहुँचे। वहॉ उनके जज नीराजी रावजी पहलेहीसे घोड़े लेकर उनकी बाट जोह रहे थे। यहॉ मराठोका दल दो हिस्सोंमे विभक्त हुआ। बालक शम्भूजी, नीराजी, दत्ताजी त्र्यम्बक और राघव मित्र,—इन सबको अपने साथ ले, शिवाजीने सारे शरीरमे राख पोतकर संन्यासीका भेप बनाया और मथुराकी तरफ प्रस्थान किया। बाकी सबोने दक्षिणका रास्ता लिया।

आगरेमें शिवाजीके भागनेका पता लगना

इधर आगरेमे १९ वीं अगस्तकी रात-भर और दूसरे दिन एक पहर तक हीराजी शिवाजीके बिछौनेपर सोते रहे। सवेरे पहरेदारोंने आकर खिड़कीसे झाँककर देखा कि सोनेका कड़ा पहने हुए कैदी सोया हुआ है, नौकर उसके पैर दाव रहे हैं। थोड़ी देर बाद हीराजीने उठकर अपने कपड़े पहने और नौकरको साथ ले वे वाहर निकल गये। फाटकपर उन्होंने पहरेवालोंसे कह दिया—"शिवाजीके सिरमे दर्द है, किसीको उनके कमरेमे मत जाने देना, हम दवा लेने जाते है।" इस तरह और एक घंटा बीत गया। उसके बाद पहरेवालोंको घर खाली-सा मालूम देने लगा। भीतरसे किसी प्रकारकी कोई आवाज़ नहीं आती थी; किसीके चलने-फिरने तककी आहट नहीं मिलती थी। और दिनोकी तरह बाहरसे भी लोग मुलाकात करने नहीं आते थे। धीरे धीरे उनका शक बढ़ने लगा। वे सब कमरेमे घुस गये। घुसते ही वे सन्न हो गये—चिड़िया उड़ गई थी, पिंजड़ा सूना पड़ा था! चार घड़ी दिन वीत चुका था।

उन लोगोने दौड़कर कोतवालको खबर दी। फौलादखाँने क़ैदीके घरकी तलाशी लेकर बादशाहको इत्तला की—"जहाँपनाह! शिवाजी भाग गया, लेकिन इसमे हम लोगोका कोई क़सूर नहीं है। राजा कोठरीके भीतर ही था। हम लोग बराबर जा-जाकर सावधानीसे देखते थे, तिसपर भी वह ग़ायब हो गया। खुदा जाने ज़मीन निगल गई, या आसमानमे उड़ गया, या पैदल भागा,—कुछ मालूम नहीं। हम लोग पासहीमे मौजूद थे। इतनी चौकसी रखनेपर भी ग़ायब हो गया। किस जादूगरीसे ऐसा हुआ, यह नहीं वता सकते।"

परन्तु औरंगज़ेब इन सब फिजूल बातोंके फेरमे पड़नेवाला आदमी नहीं था। फ़ौरन चारो ओरसे 'पकड़ो पकड़ो' की आवाज़ उठ खडी हुई। राज्य-भरके रास्तोकी चौकियो, घाटो और पहाड़ोकी घाटियोमे हुक्म भेजा गया कि दक्षिणके सब मुसाफिरोंको पकड़कर देखो कि उनमें शिवाजी तो नहीं है। इस परवानेको लेकर बहुतसे सवार दक्षिणकी ओर दौड़ पड़े। आगरा और उसके आसपास शिवाजीके जितने अनुचर थे (जैसे त्र्यम्बक सोनदेव दबीर और रघुनाथ बल्लाल कोर्डे), उन सबको पकड़कर क़ैद कर दिया गया। मार मारकर उन लोगोसे यह कबूल कराया गया कि शिवाजी कुमार रामसिंहकी मददसे भागे है! बादशाहने नाराज़ होकर कुमार रामसिंहका दरबारमे आना बन्द कर दिया, और उनकी मनसबदारी और दरमाही छीन ली।

शिवाजीके भागनेकी अनोखी बातें

होशियारोंके सरदार शिवाजीने देखा कि आगरेसे महाराष्ट्र देशका रास्ता दक्षिण-पश्चिमकी ओरसे धौलपुर, नरवर होकर गया है, इसलिए उस ओर सभी जगह शत्रुगण खबरदारीसे पहरा देते होंगे, लेकिन उत्तर पूरबकी ओर किसी मुसाफिरके ऊपर शक करनेकी गुंजाइश न थी, इसीलिए वे आगरेसे निकलकर पहले उत्तर और, तब पूरबकी ओर,—यानी धीरे-धीरे महाराष्ट्रसे दूर निकल जानेका प्रयत्न करने लगे। पहली रातको घोड़ा दौड़ाकर वे जल्दी जल्दी मथुरा पहुँचे, लेकिन उन्होने देखा कि शम्भूजी इस दौड़ा-दौड़मे शिथिल होकर बेकार-से हो रहे है। वे बिलकुल ही चल नहीं सकते। इधर आगरेके इतने नजदीक रहना शिवाजीके लिए जोखिमकी बात थी। तब नीराजी पंडितने मथुरा-निवासी तीन मराठा ब्राह्मणोको, जो पेशवाके साले थे, शिवाजीके

आनेकी खबर दी, और उनकी आपत्तिकी बाते कहकर मदद माँगी। उन लोगोने देश और धर्मके नामपर बादशाही दण्डके भयको भी तुच्छ समझकर शम्भूजीको अपने यहाँ आश्रय देना स्वीकार किया। उनमेसे एक भाई शिवाजीके साथ कुछ दूर तक उन्हें रास्ता दिखानेके लिए भी गया।

इस लम्बे रास्तेके खर्चके लिए भी शिवाजीने प्रबन्ध किया। संन्यासीकी लाठीको खोखला करके उसमें मोहरे और जवाहरात भरकर उसका मुँह बन्द कर दिया। जूतोके भीतर भी कुछ रुपये रख लिये, और एक दामी हीरा और बहुत-सी पद्मराग मणियोको मोममे रखकर अपने नौकरोके कपड़ोके भीतर सीं दिया। उन लोगोने कुछ रत्न मुँहमे भी भर रखकर साथ ले लिये।

मथुरा पहुँचकर दाढ़ी-मूँछ मुड़वकार, शरीरमें भस्म लगा, शिवाजी सन्यासीके भेषमे यात्रा करने लगे। नीराजी हिन्दी अच्छी तरह बोल लेते थे। वे महन्त बनकर दलके आगे आगे चलने लगे। वे ही रास्तेमें लोगोको जवाब देते थे। शिवाजी मामूली चेले बनकर उनके पीछे पीछे चलते थे। वे अकसर रातहीको राह चलते और दिनको कही एकान्तमे आराम करते थे। रोज़ एक भेष बदलकर दूसरा नया भेष धारण करते थे।

चलते चलते शिवाजी गंगा-यमुनाके संगम प्रयागके पुण्य-क्षेत्रमें जा पहुँचे और वहाँ स्नानकर उन्होने दक्षिणकी ओर रुख किया। आगरेसे रवाना होनेके २५ दिन बाद शिवाजी घर पहुँचे थे। यह सम्भव नहीं जान पड़ता कि वे काशी, गया और जगन्नाथ होते हुए महाराष्ट्रको लौटे हो। प्रयागसे उन्होने बिलकुल अनजान जंगलका

रास्ता पकड़ा होगा और बहुत करके बुन्देलखंड, गोडवाना और गोलकुण्डाके राज्यमें होते हुए वे महाराष्ट्रकी ओर चले होंगे।

शिवाजीका देश जा पहुँचना

चलते चलते दक्षिणमे गोदावरीके तीर खानदेश प्रदेशको पारकर संन्यासियोका यह दल महाराष्ट्रकी सीमाके पास शामको एक गॉवमे पहुॅचा। उन लोगोने गाँवके मण्डलकी स्त्री (पटेलिन) के घरमे रातको रहनेके लिए आश्रय मॉगा। इसके कुछ दिन पहले ही आनन्द रावके अधीन शिवाजीके सिपाहियोने आकर इस गाँवका सब अन्न-धन लूट लिया था। पटेलिनने जवाब दिया—"घर खाली पड़ा है। शिवाजीके सवार आकर सब अन्न ले गये। शिवाजी कैद है। अच्छा हो कि वहीं सड़कर मर जाय।" यह कहकर उनके नामसे वह बहुत-कुछ रोने लगी। शिवाजीने हँसकर नीराजीको इस गाँव और पटेलिनका नाम लिख लेनेको कहा। अपनी राजधानीमे पहुँचनेके बाद उन्होने पटेलिनको बुलवाकर उसकी जितनी सम्पत्ति लूटी गई थी, उससे अधिक उसे दे दी।

इस प्रकार भीमा नदी पार करके आगरा छोड़नेके पचीस दिन बाद वे अपनी राजधानी रायगढ़ (१३ सितम्बरको) पहुँचे। किलेके फाटकके अन्दर जाकर जीजाबाईको समाचार भिजवाया कि उत्तर देशसे वैरागियोका एक दल आया है, वह उनसे भेंट करना चाहता है। जीजाबाईने कहा—'अच्छा'। आगे चलनेवाले महन्त (नीराजी) ने हाथ उठाकर आशीर्वाद दिया, लेकिन पीछे-वाले वैरागी चेलेने एकाएक जीजाबाईके पैरोपर सिर रख दिया। उनको इस बातका बड़ा अचम्भा हुआ कि सन्यासी क्यों उनके पैरो-

पर सिर रख रहा है। उसी समय छद्मवेशी शिवाजीने टोपी उतार कर अपना सिर माताकी गोदमे रख दिया। इतने दिनके खोए हुए पुत्र-रत्नको एकाएक मॉने पहचाना; चारों ओर आनन्द छा गया। बाजे बजने लगे। किलेसे तोपोंकी सलामियॉ दगने लगीं।

इस प्रकार १३ सितम्बर १६६६ ई० को शिवाजी रायगढ़ पहुँच गए। पच्चीस दिन तक लगातार हर रोज़ लम्बी लम्बी मंजिलोकी दौड़ धूप करते रहने, और जंगली देशमे खाने-पीने तककी तकलीफ़ उठानेके कारण ज्यो ही शिवाजी घर पहुँचे बीमार पड़ गये और कई दिन तक सख़्त बीमार रहे। इस बीमारीसे मुक्त हो जानेके बाद वे दूसरी बार फिर बीमार हो गये। बादशाही जासूसोंने अक्टूबर महीनेमे इसकी सूचना दिल्ली लिख कर भेज दी थी। घर लौटनेके कोई तीन महीने बाद जनवरी १६६७ ई० में फिर शिवाजीकी सेनाने महाराष्टमे मुग़ल थानोको लूटना शुरू कर दिया।

शिवाजी तो देश लौट आए, लेकिन बालक शम्भूजी उनके साथ न थे। शिवाजीने यह बात फैला दी थी कि शम्भूजी रास्तेमे ही मर गये। इस प्रकार दक्षिणके रास्तेके सब मुग़ल पहरेदार उधरसे निश्चिन्त हो गए। तब शिवाजीने चुपचाप मथुराके उन्ही तीन ब्राह्मणोंको पत्र लिखा; और वे अपने अपने परिवारको साथ ले दक्षिणको चले। उन्होने शम्भूजीको भी ब्राह्मणका भेष कराया और अपना बालक बताते हुए उसे लेकर वे महाराष्ट्र आ पहुँचे। रास्तेमे एक मुग़ल कर्मचारीने उन लोगोको गिरफ्तार किया, परन्तु उसके शकको दूर करनेके लिए ब्राह्मणोने शम्भूजीके साथ एक पंक्तिमे बैठ कर भोजन किया,—मानो शम्भजी शूद्र नहीं थे, उनकी अपनी

श्रेणीके ही ब्राह्मण थे ! कृष्णाजी, काशीजी और विशाजी,—इन तीनो भाइयोको शिवाजीने 'विश्वासराव' की उपाधि, एक लाख मोहरे और पचास हज़ार रुपए वार्षिककी जागीर इनाममे दी।

शिवाजीके भागनेका औरंगज़ेबको जीवन-भर खेद रहा। उसने इक्यानबे वर्षकी उम्रमे मरते समय अपने वसीयतनामेमे लिखा था—"राज-काजकी प्रधान भित्ति है, राज्यमे जो कुछ भी हो उसकी पूरी पूरी खबर रखना। एक मुहूर्तकी बेपरवाहीसे बहुत दिनो तक शर्ममे पड़ना पड़ता है। वह देखो, अभागा शिवाजी हमारे नौकरोकी बेखबरीसे भाग गया और उसके लिए हमको जीवनके अन्त तक इन सब कष्टदायक लड़ाइयोमे उलझे रहना पड़ा।"

शिवाजीके विषयमे औरंगज़ेब और जयसिंहका इरादा

शिवाजीकी क़ैदकी हालतमे मुग़लोकी राजनीतिके हेर-फेरका पता जयसिंहकी चिट्ठियोसे भली भाँति लगता है। आरम्भमे बादशाहका इरादा यह था कि पहले दिनकी मुलाकातके बाद वे शिवाजीको एक हाथी, ख़िलअत और कुछ मणि-मुक्ता भेंट देगे; लेकिन दरबारमे शिवाजीकी उद्दण्डता देखकर वे बिगड़ गये और यह भेंट रोक दी गई। इधर शिवाजी डेरेपर लौटते समय यह कहते हुए चले कि मुग़ल-सरकारने उनके सम्बन्धमे की हुई प्रतिज्ञाओकी रक्षा नहीं की। उस समय औरंगज़ेबने जयसिंहको पुछवा भेजा कि उन्होने बादशाहकी ओरसे शिवाजीके साथ कौन-कौन-सी प्रतिज्ञाएँ की थीं। उसके जवाबमें जयसिंहने पुरन्दरकी सन्धिकी सब शर्त्तें भेज दीं, और कहा कि शिवाजीसे इसके सिवा और कोई वादा नहीं किया गया था।

इधर आगरेमे जब शिवाजी कड़े पहरेमे नज़रबन्द कर दिये गये,

तब जयसिंह बड़े संकटमें पड़े। एक ओर तो दक्षिणकी आफ़तको हलकी करनेके लिए उन्होंने शिवाजीको उत्तर-भारत भेज दिया था, दूसरी ओर उन्होने धर्मकी क़सम खाई थी कि आगरे जानेसे शिवाजीका कोई अनिष्ट या उनकी स्वाधीनताका अपहरण नहीं होगा। वे औरंगज़ेबकी भीतरी चालाकी नहीं समझ सके थे। वे बार बार बादशाहको लिखते रहे कि शिवाजीको क़ैद करने या उन्हें मार डालनेसे कोई लाभ न होगा। कारण यह था कि शिवाजी अपने देशमे ऐसा अच्छा बन्दोबस्त कर गये थे कि उनके न रहनेपर भी मराठा लोग पहलेकी ही तरह राजकाज चलाते रहते। पुनः अगर शिवाजी कुशल-पूर्वक देश न लौट सके, तो भविष्यमें कोई भी व्यक्ति बादशाहके उमराओंकी बातपर विश्वास न करेगा। जयसिंह उसीके साथ साथ अपने पुत्र रामसिंहको भी बार बार लिखते रहे, "देखना, शिवाजीकी रक्षाके लिए तुम्हारी और हमारी प्रतिज्ञा झूठी न होने पावे। हम लोगोंपर किसी प्रकारसे भी विश्वास-घातका कलंक न लगने पाये।"

इधर औरंगज़ेबकी समझमे यह बात अच्छी तरहसे न आई कि शिवाजीके विषयमें क्या किया जाय। वह कोई भी एक नीति स्थिर नहीं कर सका था। पहले सोचा था कि अगर जयसिंह बीजापुर राज्यको पूरी तौरसे परास्त कर दे, तो वह दक्षिणसे निश्चिन्त होकर शिवाजीको छोड़ देंगे। लेकिन जब धीरे धीरे जीत होनेकी आशा बिलकुल नहीं रही, तब औरंगज़ेबने एक बार यह कहा कि रामसिंह शिवाजीकी जिम्मेवारी अपने ऊपर लेकर आगरेमें रहे और वह खुद दक्षिणको जायगा। फिर उसने यह सोचा कि शिवाजीको अफ़गानिस्तानमे मुग़ल सेनाके साथ काम करनेको भेज देंगे। उसने नेताजीको और बादमें

महाराज यशवन्तसिंहको भी इसी तरह अफ़गानिस्तान भेजा था। यह था एक प्रकार काले पानी भेजना; लेकिन इन दोनोमेंसे किसी भी प्रस्तावपर अमल न हुआ।

उसी हालतमे शिवाजी भाग गये। उनके भागनेके बाद और देश लौटने तक जयसिंहके भय और दुश्चिन्ताका पारावार न था। उनको चारो ओर अँधेरा दिखाई देने लगा। उनकी बीजापुरकी चढ़ाई व्यर्थ हुई, उसमे बादशाहका और अपना बहुत-सा द्रव्य मिट्टीमें मिल गया जिसकी पूर्तिकी कोई सम्भावना न थी। उसके ऊपर यह आशंका भी बनी हुई थी कि बिगड़े हुए शिवाजी अपने देश लौटकर मुग़लोसे न मालूम किस प्रकार बदला ले बैठे। इन सब बातोसे बढ़कर चिंता उन्हे अपने वंशकी आशा कुमार रामसिंहके बादशाहके संदेहके कारण अपमानित और दंडित होनेकी थी। जयसिंहद्वारा पहलेकी अनेको लड़ाइयॉ जीतना, सरकारी काममे अपने लाखो रुपये बरबाद करना, ज़िन्दगी-भर राजसेवामे खून बहाना इत्यादि सब बाते बेकार हुई। उनकी दक्षिणकी यात्रा और शासन अत्यन्त अपमान-जनक प्रमाणित हुआ। बादशाहने उन्हे अपने पदसे हटाकर बुलवा भेजा। मेहनत, नुकसान, फिक्र और अपमानका मारा हुआ वह बूढ़ा राजपूत वीर रास्तेमे बुर्हानपुर शहरमें शरीर त्याग २८ अगस्त सन् १६६७ ई० को संसारकी सब तकलीफोसे मुक्त हो गया।

बादशाहको भागे हुए शिवाजीको सज़ा देनेका मौक़ा न मिला। सन् १६६६ के सितम्बर मासके पहले ही फ़ारसके राजाकी चढ़ाईके डरसे मुग़ल-सेनाका एक ज़बरदस्त दल पंजाबको भेजा गया। और उसके दूसरे साल मार्चके महीनेमे पेशावर प्रान्तमे युसुफज़ाई-जातिका

बलवा हुआ जिससे बादशाहकी सारी फ़ौज बहुत दिनों तक वहीं अटकी रही।'

बादशाह और शिवाजीके बीच फिर सन्धि क्यों हुई ?

देश लौटकर शिवाजीने भी मुग़लोंके साथ झगड़ा करना न चाहा। तीन बरस तक वे चुपचाप बैठे रहे। वे अपने राज्यके शासन-संगठन और ज़मीनके सुप्रबन्ध करनेमे ही लगे रहे। साथ ही कोकण-प्रदेशकी ओर अपना अधिकार भी फैलाते रहे।

इस दशामें बादशाहके साथ मेल रखनेमें ही उनको लाभ था। उन्होंने महाराजा यशवंतसिंहको लिखा—"बादशाहने मुझे त्याग दिया, नहीं तो मेरी इच्छा थी कि उनकी अनुमति ले अपने बाहुबलसे कंदहारका क़िला छीनकर उनकी भेंट करता। मैं केवल जान बचानेके लिए ही आगरेसे भागा हूँ। मिर्ज़ा राजा जयसिंह मेरे मुरब्बी थे। वे अब नहीं है। अब आप बीचमें पड़कर अगर बादशाहसे माफी दिला दे, तो मैं अपने पुत्रके साथ अपनी फ़ौजको दक्षिणके हाकिम कुमार मुअज्ज़मकी मातहतीमें काम करनेके लिए भेज सकता हूँ।"

युवराज और यशवंत, दोनोंने ही इस प्रस्तावका विशेष रूपसे समर्थन करके बादशाहको लिखा। औरंगज़ेब राज़ी हो गया और और उसने शिवाजीको 'राजा' की उपाधि देना मंजूर किया। सन् १६६७ ई० की चौथी नवम्बरको शंभूजीने औरंगाबाद जाकर शाहज़ादे मुअज्ज़मके साथ मुलाक़ात की। आगामी अगस्त महीनेमे प्रतापराव (नये सेनापति) और नीराजीके अधीन शिवाजीकी सेनाका एक दल जाकर शाही अधीनतामे काम करने लगा। उसके लिए शंभूजीको

पाँच हज़ारी मनसबके लायक जागीर बरार-प्रदेशमें दी गई। इसी प्रकार—"दो बरस तक मराठी सेनाने मुग़ल राज्यकी ज़मीनसे पेट भरा और शाहज़ादाको अपना लिया" (सभासद)।

सन् १६६७-६८-६९ ई० के तीन वर्ष शिवाजीके लिए शान्तिसे बीते। उन्होंने बीजापुर अथवा मुग़ल राज्यमे किसी प्रकारका कोई उपद्रव नहीं मचाया। उसके बाद सन् १६७० ई० के शुरूमे ही उनकी बादशाहसे फिर लड़ाई छिड़ गई। इसके कई एक अलग अलग कारण बताये जाते हैं। एक ग्रंथमे लिखा है कि चुगलखोरोंने औरंगज़ेबको खबर दी कि शाहज़ादा 'मुअज़्ज़म' शिवाजीके साथ गहरी दोस्ती करके उनकी सहायतासे स्वाधीन होनेकी कोशिशमें हैं। यह बात सुनकर बादशाहने शिवाजीके लड़के और सेनापतियोंको क़ैद करनेके लिए मुअज़्ज़मको हुक्म भेजा, लेकिन शाहज़ादेने विश्वासघात न करके मराठोंको चुपचाप ऐसा इशारा कर दिया जिससे वे औरंगाबादसे अपना दलबल लेकर रातको भाग गये।

दूसरा ब्यौरा यह है कि सन् १६६६ ई० में आगरा जानेके लिए शिवाजीको बादशाहने एक लाख रुपये पेशगी दिये थे; अब उसने आमदनी बढ़ानेकी कोशिशमें बरारमें दी गई शिवाजीकी नई जागीरको ज़ब्त करके उससे उन रुपयोंको वसूल करनेका हुक्म दिया जिससे बिगड़कर शिवाजी फिर बाग़ी हो गए।

असली बात यह थी कि इन तीन वर्षोंमें शिवाजीने अपना बल और संगठन दृढ़ कर लिया था तथा राज-काजका अच्छासे अच्छा और पूरा पूरा बन्दोबस्त कर लिया था। अब उन्होंने देखना चाहा कि लड़ाई छेड़नेसे क्या लाभ होगा?

सातवाँ अध्याय

शिवाजीकी स्वाधीन राज्य-स्थापना

मुग़लोंके हाथसे क़िला छुड़ाना

औरंगज़ेबके दरबारसे भागनेके तीन बर्ष बाद (सन् १६६७-१६६९ ई०) तक शिवाजी चुपचाप रहे। परन्तु सन् १६७० ई० के जनवरी महीनेके शुरूमे ही उन्होंने फिर लड़ाई छेड़ दी। दक्षिणके मुग़ल अफ़सर लड़ाईके लिए बिलकुल ही तैयार न थे। शिवाजीने चारो ओर बड़े वेगसे आनन फ़ाननमें चढ़ाई कर ऐसी गड़बड़ मचाई कि वे एकदम घबरा गये। उनकी मातहतीके कितने ही गाँव लूट लिये गये। पुरन्दरकी सन्धिमें बादशाहको जो तेईस क़िले मिले थे, उनमेंसे बहुतसे बादशाहके हाथसे निकल गये। मुग़ल अफ़सरोंमेसे बहुतेरे तो अपने अपने क़िलों या थानोमें लड़कर काम आये और जो बाक़ी बचे, वे हताश हो स्थान छोड़कर भाग गये।

इनमेंसे कोंडाना जीतनेकी कहानी आज भी महाराष्ट्र देशके लोग कहा करते है। शिवाजीने अपने बड़े मावले सेनापति और लंगोटिया यार तानाजी मालसरेको इस क़िलेके ऊपर चढ़ाई करनेको भेजा। ४ फरवरी (माघ कृष्ण नवमी) को तीन सौ चुने हुए मावले सिपाहियोंको लेकर तानाजी अँधेरी रातमे रस्सीकी सीढ़ी लगाकर उत्तर-पश्चिमकी ओरसे पहाड़पर चढ़ गये। वहाँकी जंगली कोली-जातिके लोगोने उनको गुप्त राह दिखा दी। क़िलेमें पहुँच कर बादशाही पहरेदारोको मारकर वे लोग भीतर घुसे। उदयभान और उसके राजपूत-सिपाही

क़िलेकी रखवाली करते थे। 'दुश्मन आया है', यह हल्ला सुनते ही वे उस तरफ आगे बढ़े, लेकिन जाड़ेकी रातमे अफ़ीमखोर राजपूत-सिपाही बिछौना जल्दी नहीं छोड़ सके। इसी बीच मराठोंने क़िलेके एक हिस्सेपर अच्छी तरह कब्ज़ा कर लिया। जैसे ही राजपूत सैनिकगण उनके सामने पहुँचे, वैसे ही मराठे 'हर हर महादेव' कहते हुए उनके ऊपर टूट पड़े। उदयभानने तानाजीको अकेले द्वन्द्व युद्धके लिए ललकारा। तानाजीने ललकार स्वीकार कर ली। दोनो वीर तलवारे लेकर एक दूसरेपर पिल पड़े, और दोनो ही एक दूसरेकी तलवारसे मारे गये; लेकिन तानाजीके भाई सूर्याजी सामने आकर बोले—"सैनिको! भाई मर मये, लेकिन कुछ डर नहीं है। हम तुम्हारे नेता होंगे।" दूसरी ओर राजपूत सैनिकगण नेताके मर जानेसे कुछ देरके लिए घबरा-से गये। उसी वक्त मराठोंने उनके ऊपर हल्ला बोल दिया। इसी बीचमे क़िलेका दरवाज़ा खोल देनेसे मराठे सिपाही सुगम रास्तेसे क़िलेमे घुस आये। इस लड़ाईमे कोई बारह सौ राजपूत खेत रहे। बहुतसे तो पहाड़के ऊपरसे भागते हुए नीचे गिर पड़े और मर गये।

विजयी मराठोंने क़िलेके भीतर अस्तबलमें घासके ढेरमे आग लगा दी। पाँच कोसके फ़ासलेपर राजगढ़के क़िलेसे उस उजालेको देखकर शिवाजी समझ गये कि उनकी जीत हुई। दूसरे दिन जब क़िला जीतने और तानाजीके मरनेका समाचार मिला, तब वे दुःखके साथ बोले, 'क़िला तो मिल गया, पर सिंह खो गया।' उन्होने कोंडानेका नाम बदलकर 'सिंहगढ़' रखा और तानाजीके परिवारको बहुत कुछ इनाम दिया।

इस प्रकार कोंडाना, पुरन्दर, कल्याण-भिवंडी और माहुली वगैरह बहुतसे क़िले शिवाजीके हाथ लगे। मुग़ल सेनापतियोंमेंसे केवल दाऊदखाँ क़ुरेशीने लड़ाई छेड़कर मराठोंकी रोकनेकी कुछ कोशिश की, लेकिन वह अकेला किस किस तरफ सम्हालता ?

दक्षिणमें मुग़लोंका घरेलू झगड़ा

औरंगज़ेबने शिवाजीकी इस बग़ावतकी बात सुनते ही और भी बहुतसी सेना और कई सेनापति महाराष्ट्रको रवाना किये, लेकिन उससे भी कुछ फ़ायदा न हुआ। आपसके घरेलू झगड़ोंके कारण उनकी सब चेष्टाएँ विफल हुई। दक्षिणके सूबेदार शाहज़ादा मुअज्ज़म थे और उनके प्रियपात्र थे यशवन्तसिंह। इन दोनोंके साथ दक्षिणके सबसे बड़े मुग़ल सेनापति वीर दिलेरखाँकी जानी दुश्मनी थी। उसके ऊपर चुग़लखोरोंने बादशाहसे चुग़ली खाई कि शाहज़ादा .खुदमुख़तार होनेकी कोशिशमे है। एक दल दूसरे दलकी शिकायत बादशाहसे करता था। दिलेरको डर लगा कि अगर वह सूबेदारके साथ भेट करने जाय तो कहीं शाहज़ादा उसे क़ैद न कर ले ! अन्तमे एक दिन (अगस्त, १६७०ई०) गहरी वर्षाके बीच दिलेरखाँ महाराष्ट्र देश छोड़ जान लेकर उत्तर भारतकी ओर भागा। मुअज्ज़म और यशवन्तने फ़ौज लेकर ताप्ती नदी तक उसका पीछा किया। साथ ही ऐसे नमकहराम अफ़सरको दबानेके लिए शिवाजीसे भी मदद माँगी।

इसका फल यह हुआ कि चारो ओर शिवाजीकी जयजयकार सुनाई देने लगी। कहीं भी उनको बाधा देनेवाला कोई न था। अँगरेज़ी कोठीके साहबने लिखा है कि "पहले शिवाजी चोरकी तरह

चुपचाप जल्दी जल्दी चलते थे। अब उनकी वह अवस्था नहीं है। अब वे एक शक्तिशाली फ़ौज ले तीन हज़ार लड़ाकोंके साथ देश जीतते हुए आगे बढ़ रहे है। शाहज़ादेके इतने नज़दीक रहते हुए भी वे उसकी कुछ भी परवाह नहीं करते। "

शिवाजीका दूसरी बार सूरत लूटना

सन् १६७० ई० की तीसरी अक्टूबरको शिवाजीने फिर सूरत बन्दर लूटा। एक महीने पहलेहीसे चारो ओर यह बात सुनाई पड़ती थी कि वे कल्याण शहरमे बहुतसे घुड़सवार इकट्ठा कर रहे है और पहले पहल सूरतहीपर चढ़ाई करेंगे। अंग्रेज़ लोगोंको इस लूटके बारेमें यहाँ तक निश्चय था कि उन्होने पहलेहीसे अपनी सूरतकी कोठीका सब रुपया-पैसा, माल-असबाब और यहाँ तक कि काम चलानेवाली सभाके सदस्यो तकको सुहायली भेज दिया था। सूरतके मुग़ल हाकिम इतने आलसी और अन्धे थे कि इतने बड़े धनी शहरकी रक्षाके लिए उन्होंने सिर्फ़ तीन सौ निकम्मे निर्बल आदमियोकी फ़ौज रख छोड़ी थी!

तीसरी अक्टूबरके सबेरे शिवाजी पन्द्रह हज़ार सेनाके साथ सूरतमे घुसे। उस एक दिन और एक रातमे ही तमाम हिन्दुस्तानी वणिक और सरकारी अफ़सर शहर छोड़कर भाग गये। सन् १६६४ ई० की पहली लूटके बाद बादशाहके हुक्मसे सूरतके चारो ओर ईंटकी एक दीवार खड़ी की गई थी, लेकिन वह इतनी रद्दी और मामूली थी कि शिवाजीके पन्द्रह हज़ार सैनिकोके सामने इने-गिने तीन सौ मुग़ल चौकीदार उसकी आड़में खड़े भी नहीं हो सके, और वे क़िलेके भीतर भाग गये।

दो दिन तक मराठोंने उस सूने शहरको खूब लूटा। डच कोठीमें खबर भेजी—“ अगर तुम लोग चुपचाप रहोगे, तो तुम लोगोंका कुछ नुकसान न होगा। ” उन लोगोने वैसा ही किया। फ्रेंच कोठीके साहबोंने क़ीमती चीज़ें भेट देकर मराठोंको खुश किया। सुहायलीसे आये हुए पचास जहाज़ी गोरोने, जो प्रसिद्ध स्ट्रेन्सहाम मास्टरकी मातहतीमे थे, अँग्रेज़ी कोठीकी रक्षा की। मराठोंका एक दल उसे लूटने गया था, परन्तु अँग्रेज़ोंकी बन्दूकोंकी अचूक गोलियोंसे उस दलके इतने आदमी शिकार हुए कि फिर उस तरफ आगे बढ़नेकी किसीकी हिम्मत न पड़ी। पारसी और तुर्की बनियोंकी क़िलोंकी तरह बनी हुई ‘नई सराय’ भी बच गई।

फ्रेंच कोठीके सामने ‘तातार सराय’ में काशगरके निकाले हुए सुलतान अब्दुल्लाखाँ मक्कासे लौटकर कुछ दिन पहलेसे ठहरे हुए आराम करते थे। नज़दीकके कुछ पेड़ोंकी आड़से मराठे पहले दिन इस सरायके ऊपर गोली छोड़ने लगे। इससे सरायके भीतर बैठना नामुमकिन हो गया। फल यह हुआ कि सरायके लोग रातको भीतरसे निकलकर भाग गये। मराठोंने सुलतानकी धन-सम्पत्ति, औरंगज़ेबका दिया हुआ सोनेका पलंग और बहुतसी क़ीमती भेटकी चीज़ें लूट लीं।

अब मराठोने बेरोक-टोक बड़े बड़े मकान लूटे, और सूरतसे ६६ लाख रुपयोंका मालमत्ता लेकर पाँचवी अक्टूबरकी दोपहरको वे उस शहरसे चल दिए। लूटके बाद उन लोगोने बहुतसी जगहोमें आग भी लगा दी थी जिससे करीब करीब आधा शहर जलकर खाक हो गया। पहले दिनके धावेमें अँग्रेज़ोकी गोलीसे बहुतसे मराठे सैनिक

मारे गये थे; इसलिए बदला लेनेके लिए शिवाजीके सिपाही तीसरे दिन अँग्रेज़ी कोठीके सामने आकर 'कोठी जला देगे' कहकर चिल्लाने लगे; लेकिन मराठे नेताओको मालूम था कि फिर आक्रमण करनेसे और भी लोग मारे जायँगे। अन्तमे मराठो और अँग्रेज़ोके बीच एक समझौता-सा हुआ। दो अँग्रेज़ बनियोने शहरके बाहर शिवाजीके शिविरमे जाकर लाल बनात, तलवारे और अस्त्र उपहारमें दिये। शिवाजी उन लोगोसे अच्छी तरह पेश आये, और उनका हाथ पकड़कर बोले, "अँग्रेज़ हमारे दोस्त हैं, हम उन लोगोको किसी तरहकी हानि न पहुँचावेगे।"

सूरतकी दुर्दशा

सूरत छोड़ते समय शिवाजीने शहरके हाकिम और खास खास व्यापारियोके नाम इस मज़मूनकी एक चिट्ठी भेजी कि अगर वे उनको हर साल बारह लाख रुपये कर न देगे तो वे अगले वर्ष शहरके बाकी मकान भी जलाकर ख़ाक कर डालेगे।

मराठोके शहरसे बाहर निकलते ही शहरके ग़रीब, जो भागे नहीं थे, मकानोमे घुस पड़े और जो कुछ बाकी था, लूटने लगे। अँग्रेज़ी कोठीके जहाज़ी गोरोने भी इस लूट-पाटमे पूरा पूरा भाग लिया!

तीन दिन तक जिस समय सूरतमे लूट हो रही थी उस समय सूरत कोठीके साहब लोग, सूरत नगरके शाह-इ-बन्दर (जहाज़ी मालके दारोगा), मुख्य काज़ी और बड़े बड़े हिन्दू, मुसलमान तथा आरमेनियन व्यापारियोने पाँच-छः कोस पश्चिम सुहायली बन्दरमे अँग्रेज़ोके गोदाम और कोठीमे पनाह ली। वहाँ भी मराठोके आनेका दो-एक दिन तक हल्ला उड़ा था जिससे सब लोग बहुत डरे और घबरा

गये; परन्तु अँग्रेज़ोने जेटीके किनारे आठ तोपे लगाकर बन्दरको बचानेका बहुत बढ़िया बन्दोबस्त किया था और सौभाग्यवश कोई आपद भी न आई।

इस प्रकार इने-गिने विदेशी दूकानदारोने तो मराठोको तुच्छ समझकर अपना बल दिखाया पर 'दिल्लीश्वरो वा जगदीश्वरो वा' के हाकिम और फ़ौज डरके मारे भाग गए! यह दृश्य देख देशके लोग चकरा गये। सूरतके सबसे बड़े महाजन हाजी सैयद बेगके लड़केने सुहायलीमे शरण मिलनेपर कहा था कि हम बाल-बच्चोके साथ बम्बई चले जायँगे, अब बादशाही राज्यमे न रहेगे।

एक कहावत है: बाघ जिसको घायलकरके छोड़ देता है वह आदमी यदि बादमे बच भी जाय, तो भी मुर्देके समान हो जाता है। शिवाजीकी दो दो बारकी लूटके बाद सूरतकी भी वही हालत हुई। शिवाजी इधर आ रहे है, मराठी सेना सूरतसे पचास कोस दक्षिणकी ओर कोली-देशमे घुस गई है,—ऐसी अफ़वाहे आये दिन सूरत पहुँचने लगीं। लोग शहर छोड़कर भागने लगे। देखते देखते वह बड़ा बन्दर रेतीले मैदानकी तरह सुनसान जन-विहीन हो गया। अँग्रेज़ और दूसरे यूरोपियन व्यापारी अपनी अपनी कोठी खाली कर रुपये और असबाव जल्दी जल्दी सुहायली भेजने लगे।

हर साल ऐसा ही होने लगा। इसका नतीजा यह हुआ कि भारतके सबसे बड़े बन्दरका व्यापार और वैभव हमेशाके लिए लुप्त हो गए।

डिंडोरीकी लड़ाई

५ वीं अक्टूबरको सूरत छोड़कर शिवाजीने दक्षिण-पूर्व बगलाना

प्रदेशमे प्रवेश किया और मुल्हेर क़िलेके नीचेके सब गाँव लूट लिये। इसी बीचमें शाहज़ादा मुअज़्ज़म दिलेरखाँका पीछा करता हुआ बुर्हान-पुरके पास तक जा पहुँचा। वहाँसे उसे बादशाहके हुक्मसे औरंगा-बाद लौटना पड़ा। औरंगाबाद लौटनेपर उसे दूसरी बारकी सूरतकी लूटका पता लगा। उसने उसी दम दाऊदखाँको मराठोके विरुद्ध भेजा। दाऊद खाँने चन्दौर क़िलेके पास पहुँचकर सुना कि वहाँसे पाँच कोस पश्चिमकी ओर, लम्बे पहाड़के बीच, एक छोटे रास्तेसे शिवाजी बगलानासे उतरकर उत्तर महाराष्ट्रमें (नासिक ज़िलेमें) घुसेगे। आधी रातको मुग़लोके चरोने पक्की खबर दी कि शिवाजी इस घाटीको पार कर आधी फ़ौजके साथ नासिककी ओर बढ़ रहे है, और उनकी बाक़ी आधी फ़ौज असबाब और पृष्ठ-रक्षाके लिए इसी पहाड़की घाटीमें खड़ी है।

दाऊदखाँ उसी समय आगे बढे। वह कार्तिक शुक्ल चतुर्दशीका दिन था। तीसरे पहर रातको चाँद डूबा। अँधेरेमे मुग़ल फ़ौज पहाड़ पार कर इधर उधर छितरा गई। उसके अग्रभागके नेता थे प्रसिद्ध बहादुर पठान इख़लासखाँ मियाना। सबेरा होते ही (१७ अक्टूबरको) उन्होंने एक छोटे पहाड़के ऊपरसे देखा कि नीचेकी भूमिमे मराठा सैनिक लड़ाईके लिए तैयार उनकी ओर मुँह फेरे खड़े हैं। मुग़ल सिपाही ऊँटोंसे उतरकर हथियार उतारकर साज-समान ठीक करने लगे, लेकिन इख़लासखाँको यह देर बिलकुल अच्छी न लगी। वे थोड़ेसे आदमियोको साथ ले शत्रुओपर जा टूटे, परन्तु, मराठे आठ हज़ार थे और उनके बड़े बड़े नेता प्रतापराव (सेनापति), आन-न्दराव इत्यादि भी मौजूद थे। इख़लासखाँ शीघ्र ही घायल हो घोड़ेसे

गिर पड़े। कुछ देर बाद दाऊदखाँ भी आ पहुँचा और साथ ही बहुतसे सैनिक भी आ गए।

सबेरेसे लेकर छः सात घंटे तक बड़े ज़ोरकी मार-काट होती रही। मराठे योद्धा मुग़लोंके चारों ओर घोड़े दौड़ा इस प्रकार घूमने लगे, मानो इनके सब रास्ते ही रोक देंगे। दाऊदखाँके दलके बहुतसे सैनिक मारे गये और बहुतसे घायल हुए, लेकिन बुन्देला राजपूतोंकी बन्दूकोंके डरके मारे मराठे नज़दीक नहीं आये। अन्तमे दाऊदखाँने खुद रणभूमिमें आकर तोपोंके बलसे शत्रुओंको भगाकर अपने पक्षके घायलोंको बचाया।

दोपहरके समय दोनों ओरके सैनिकगण थक गये और लड़ाई बन्द कर भोजन करने चले गये। परन्तु सन्ध्याके पहले ही मराठे फिर चढ़ाई कर बैठे। मराठे थे आठ हज़ार और दाऊद खाँके साथ थे केवल दो हज़ार आदमी, फिर भी तोपोंके ज़ोरसे शाही दलकी रक्षा हुई। रातको मराठी सेना कोंकणकी ओर चली गई। अब तक मराठोंका काम समाप्त हो गया था, एक दिन और एक रात तक मुग़लोंको वहाँ रोककर उन्होंने सूरत और बगलानाकी लूटकी चीज़ें मज़ेमें अपने देश पहुँचा दी थीं।

डिण्डोरीकी लड़ाईका फल यह हुआ कि एक महीनेसे भी अधिक काल तक मुग़ल कुछ कर-धर न सके। दाऊदखाँ घायल लोगोंको लेकर नासिक, औरंगाबाद और अहमदनगरमें जाकर आराम करने लगा, लेकिन इस साल (सन् १६७० ई०) के अन्तमे उन्हें फिर उसी जगह आना पड़ा।

बरार और बगलानाकी पहली लूट

सूरतकी लूटके बाद मराठे डेढ महीने तक चुपचाप रहे, लेकिन सन् १६७० ई० के दिसम्बरके शुरूमे शिवाजी फिर फौजके साथ बाहर निकले। रास्तेमें चन्दौरगिरिकी चोटियोमे अहिवन्त और कई एक ऊँचे पहाड़ी क़िले जीतकर वे बगलाना होते हुए तेजीसे खानदेश प्रदेशमें जा घुसे, और उसकी राजधानी बुर्हानपुर शहरके बाहरके सब गाँव लूट लिये। फिर शीघ्र ही पूर्वकी ओर घूमकर बरारके उपजाऊ और धनी प्रदेशपर चढाई कर दी। आज तक मराठे इतनी दूर कभी नहीं आये थे, इसीलिए बरारका कोई भी व्यक्ति इस आकस्मिक विपत्तिके लिए तैयार नहीं था। शिवाजीने बिना रोक-टोक मनमाने ढँगपर कारंजा नामके बड़े धनी शहरसे एक करोड़ रुपयेकी धन-सम्पत्ति, गहने और क़ीमती कपड़े वसूल किये। लूटका माल चार हज़ार बैलो और गधोपर लादा गया, और शहरके प्राय: सभी धनिकोको रुपये वसूल करनेके लिए * क़ैद कर शिवाजी बरारके दूसरे शहरोको लूटनेके लिए चले गये। वहाँ भी उन्होने खूब धन लूटा। अन्तमें सब जगहके लोगोने मारे डरके शिवाजीको लिखा कि "हम लोग प्रति वर्ष आपको चौथ (शाही माल-गुजारीका चौथा हिस्सा) दिया करेगे।"

जैसी चाहिए वैसी बाधा मुग़ल नहीं दे सके। बरारके बादशाही सूबेदार आलसी और नवाबी चालसे धीरे धीरे चलनेवाले थे। दूसरी

---

* परन्तु कारंजाके सबसे धनी महाजन नहीं पकड़े गये। वे औरतका वेश धरकर साफ भाग गये। उनको मालूम था कि जिस जगह शिवाजी खुद मौजूद हों, वहाँ औरतके ऊपर हाथ डालनेकी कोई मराठा हिम्मत नहीं करेगा।

और खानदेशके सूबेदार और शाहज़ादे मुअज्ज़मके बीच ऐसी अनबन थी कि दोनोमें मुठभेड़ होने तककी सम्भावना थी।

शिवाजी जिस समय स्वयं बरार गये, उस समय उनकी मराठी फ़ौजका एक दल पेशवा मोरो त्र्यम्बकके अधीन पश्चिम खानदेश लूट रहा था। बरारसे लौटकर शिवाजी फिर बगलाना आये, उस समय उस दलने उनके साथ मिलकर साल्हेर नामक क़िलेको (५ जनवरी १६७१ ई०) जीता और मुल्हेर, धोड़प इत्यादि दूसरे बड़े बड़े पहाड़ी क़िलोंको घेर लिया। बहुतसे गाँवोको लूटा और अन्नका आना-जाना रोक दिया। नतीजा यह हुआ कि इस प्रान्तके मुग़ल घबरा उठे। उन लोगोमे न तो अपनी रक्षा करनेका बल ही था और न उनका कोई बड़ा नेता ही था।

शिवाजीकी बुन्देला छत्रसालसे भेंट

सन् १६७० ई० के अन्तमे जिस समय यह लड़ाई जारी थी, उसी समय सुप्रसिद्ध बुन्देला वीर, राजा चम्पतरायके पुत्र, छत्रसाल शिवाजीसे भेंट करने आये। छत्रसालने बादमें पन्नाका राज्य और छत्रपुर शहर स्थापित किये थे। छत्रसाल बहुत दिन तक राज्य करके सन् १७३१ ई० में मरे, परन्तु इस समय सन् १६७० ई० मे वे केवल एक धन-वैभवहीन नौजवान ही थे और दक्षिणमे मुग़ल फ़ौजमे कम वेतनके एक मनसबदार थे। इस नौकरीसे ऊबकर छत्रसाल एक दिन शिकारके बहाने अपनी स्त्रीके साथ मुग़ल खेमोसे निकल पड़े और विकट रास्तेसे महाराष्ट्र पहुँचकर शिवाजीके अधीन बादशाहके विरुद्ध लड़नेके लिए सेनापतिका पद चाहा, परन्तु शिवाजी दक्षिणियोंको छोड़ भारतके किसी अन्य प्रान्तके लोगोंका विश्वास नहीं करते थे और न उन्हे ऊँचा पद ही देते थे। उन्होने

साल्हेर क़िलेको जीत लिया। मार्च मासके शुरूमें दाऊदखाँने मराठोंके हाथसे अहिवन्तगढ़ छीन लिया। उसकी इस सफलताने महावतखाँको डाहसे पागल कर दिया, परन्तु उसके बाद फिर मराठोंसे लड़ाई नहीं हुई। मुख्य सेनापति फ़ौजके साथ नासिक और उसके बाद पारनेर शहरमे छः महीने तक आराम करते और तवायफोंका नाच देखते रहे!

यह सब समाचार सुनकर बादशाहने क्रुद्ध हो १६७१ ई० के अक्टूबर महीनेमे बहादुरखाँ और दिलेरखाँको गुजरातसे महाराष्ट्र भेजा। ये दोनो नामी सेनापति साल्हेर क़िलेको रोकनेके लिए इख़लासखाँ मियाना, राजा अमरसिंह चन्द्रावत और दूसरे कर्मचारियोंको भेजकर खुद अहमदनगरसे होते हुए पूना ज़िलेपर आक्रमण करने चले। दिलेरखाँने पूनापर कब्ज़ा किया और नौ वर्षसे कम उम्रवाले बालकोंको छोड़कर बाकी सब लोगोंकी हत्या करवाई; फिर भी इसके एक ही महीने बाद मुग़लोने जबर्दस्त हार खाई। बगलानामे मुग़लोंका जो दल साल्हेर क़िलेको घेरे हुए था उसपर सन् १६७२ ई०की जनवरीके अन्तमें मराठोंके प्रधान सेनापति प्रतापराव, दूसरे सेनापति आनन्दराव और पेशवा मोरे त्र्यम्बकने अनगिनित फ़ौज ले अकस्मात् आक्रमण किया। मुग़लोंका दल जी-जानसे लड़ा, पर संख्यामें कम होनेसे कुछ न कर सका। राजा अमरसिंह, अन्य बहुतसे सेनापति और हज़ारों मामूली सिपाही मारे गये। साथ ही अमरसिंहके पुत्र मुहकमसिंह, इख़लासखाँ और तीस प्रधान कर्मचारी मरे और क़ैद हुए। उनकी सारी जायदाद और तोपे मराठोंके हाथ आईं।

उसके बाद ही पेशवाने मुल्हेर क़िला जीता। इससे सारे बगलाना-

प्रदेशमे मराठोंका निष्कंटक आधिपत्य हो गया। बगलाना सूरतके रास्तेमें है। चारों ओर शिवाजीके नामका आतंक छा गया; सब डरके मारे कॉपने लगे। दोनो मुग़ल सेनापति (बहादुरखॉ और दिलेरखाँ) लड़ाईमे हारकर शर्मके मारे सिर नीचा किये हुए अपनी सीमाके अन्दर अहमदनगरको लौट आये। पूना और नासिकके ज़िले (मराठोंके देश) मुग़लोंसे खाली हो गये।

इधर मार्च महीनेमें सत्नामी विद्रोह और अप्रेलके महीनेमे ख़ैबर घाटीके पठानोके साथ लड़ाई छिड़ जानेसे औरंगजेब इतना व्यस्त हो गया कि कुछ दिन तक उसका दक्षिणके लिए रुपये और फ़ौज भेजना बिलकुल असम्भव हो गया। जून महीने (सन् १६७२ ई०) में शाहज़ादा मुअज्ज़मकी जगहपर बहादुरखाँ दक्षिणका हाकिम नियुक्त हुआ। शाहज़ादा और महाबतखाँ दोनो उत्तर-भारतमें बुला लिये गये।

कोली-देशपर अधिकार

शिवाजीके नामकी जय-जयकार अब चारो ओर सुनाई पड़ती थी। सूरतसे दक्षिणमे बम्बईकी तरफ आनेमे जो पहाड़ी और जंगली देश पड़ता है, उसमें कोली नामक एक लुटेरा जाति रहती है। उस समय यहाँ दो छोटे छोटे राज्य थे—धरमपुर (राजधानी रामनगर, वर्तमान नाम 'नगर', सूरतसे ६० मील दक्षिणमें है) और जौहर (राम नगरसे ४० मील दक्षिणमें है)। इस रामनगरके ठीक पूर्वकी ओर सह्याद्रि पर्वत पार होनेपर नासिक ज़िला या उत्तर-महाराष्ट्र पड़ता है। सन् १६७२ ई० की पॉचवीं जूनको पेशवा मोरो त्र्यम्बकने जौहरपर अधिकार कर लिया। वहॉके राजा विक्रमशाह मुग़ल राज्यमे भाग गये। इसके कुछ दिन बाद मराठोका रामनगरपर भी कब्ज़ा

हो गया । वहाँके राजा सोमसिंहने पुर्तगाली शहर दमनमें आश्रय लिया ।

मराठोंका अड्डा नज़दीक जमनेके कारण सूरत शहर डरके मारे काँपने लगा । रामनगरसे पेशवाने सूरतके हाकिम और मुख्य महाजनोंके नाम लगातार तीन पत्र भेजकर उनसे चार लाख रुपया कर-स्वरूप चाहा, और यह धमकी दी कि इतना रुपया न देनेपर वे सूरतपर कब्ज़ा कर लेंगे । आखिरी चिट्ठीमें शिवाजीकी ओरसे यह लिखा गया था, "यह तीसरी और आखिरी बार हम तुम लोगोंसे कहते है कि सूरत प्रान्तकी मालगुजारीका चौथाई हिस्सा यानी चौथ हमारे पास भेजो । तुम्हारे बादशाहने हमें अपने देश और अपनी प्रजाकी रक्षाके लिए भारी फ़ौज रखनेको मज़बूर किया है, इसलिए शाही रैयत ही इस फ़ौजका खर्चा देगी । यदि ये रुपये जल्दी न भेज सको, तो हमारे लिए वहाँ एक बड़ा मकान तैय्यार कर रखो; क्योंकि हम वहाँ आकर रहेंगे और सूरतकी मालगुजारी तथा वहाँ आने-जानेवाली चीज़ोंपर चुंगी वसूल करेंगे । इस बातमे हमें बाधा दे सकनेवाला तुम लोगोमे कोई भी आदमी नहीं है ।"

इस चिट्ठीके बाद सूरतमें सलाहके लिए एक सभा बैठी । शहरके बाशिन्दे और आसपासके गाँवोंके मुखियोंपर तीन लाख रुपये चन्दा वसूल करनेका भार पड़ा, पर बहुत विचारके बाद लोगोंने कुछ भी न दिया, क्योंकि वे भलीभाँति जानते थे कि शहरका मुग़ल हाकिम ये रुपये खा जायगा, शान्त करनेके लिए मराठोंको वह कुछ भी न देगा ।

उसके बाद जितनी बार मराठोंके आनेका ऐसा समाचार मिलता

सूरतके लोग भागनेका रास्ता ढूँढ़ते फिरते थे। यही कांड अनेक वर्षों तक चलता रहा।

सन् १६७२ ई० के जुलाई महीनेमे पेशवाने नासिक ज़िलेमें घुसकर लूटना आरम्भ कर दिया। वहाँके दो मुग़ल थानेदार हारकर भाग गये। अक्टूबर और नवम्बरमें मराठे घुड़सवार तेज़ीसे बरार और तेलिंगानेमे घुसकर रामगिर ज़िलेको लूटने लगे। मुग़ल सेनापति बहादुरखाँ किसी तरह भी उन्हे न पकड़ सका। मराठे शीघ्र ही अपने देशको लौट आये, लेकिन मुग़लोने दूर तक पीछा करके उनके हाथसे छूटे हुए बहुतसे घोड़े और महाजनोका माल छीन लिया। औरंगाबादके पास एक छोटीसी लड़ाईमे मराठे हार गये। इसी कारण उनकी इस बारकी बरारपर चढ़ाई क़रीब क़रीब बिलकुल ही विफल हुई।

बीजापुरके साथ शिवाजीका संधि-भंग करना

अगले साल (सन् १६७३ ई० में) महाराष्ट्रमे कोई लड़ाई अथवा विशेष हानि-लाभ नहीं हुआ। सूबेदार बहादुरखॉ भीमा नदीके किनारे पेड़गाँवमें डेरा डालकर घाटके रास्तेपर पहरा देने लगा।

इसी साल शिवाजीने अपना जन्मस्थान शिवनेरी-क़िला ले लेनेकी चेष्टा की। औरंगज़ेबने इस क़िलेको अब्दुल अज़ीजखॉ नामक एक एक ब्राह्मण मुसलमानके जिम्मे कर रखा था। वह जैसा विश्वासी था, वैसा ही चालाक और चतुर भी था। शिवाजीने उसको 'पहाड़के बराबर रुपयोका स्तूप' घूसमें देना चाहा। उसने भी उसे स्वीकार करनेका बहाना करके एक रातको क़िला छोड़ देनेका वादा किया। उस रातको शिवाजीकी सात हज़ार फ़ौज क़िलेके पास पहुँची, परन्तु

अब्दुलखाँने इसी बीचमें बहादुरखाँको चुपचाप खबर दे दी। मराठे अपने-आप ही फन्देमें फँस गये। उनमेंसे बहुतेरे मरे, अनेकों जखमी हुए और बाक़ी सब हताश हो लौट गये।

परन्तु दूसरी ओर शिवाजीके लिए एक बड़े सुयोगका मार्ग खुल गया। २४ वीं नवम्बर (सन् १६७२ ई०) को बीजापुरके सुलतान अली आदिलशाह द्वितीय मर गये, और उनकी जगह एक चार वर्षका बालक सिकन्दर सुलतान हुआ। उसका अभिभावक कौन बने, इस बातपर बीजापुरके बड़े बड़े रईसोंके बीच एक भारी झगड़ा उठ खड़ा हुआ। सारे राज्यमें विद्रोहके लक्षण दिखाई पड़ने लगे। बीजापुरके नये वज़ीर ख़वासखाँके साथ शिवाजीने अब पहलेका-सा सद्भाव न रखकर उसके राज्यमें भी उपद्रव करना शुरू कर दिया।

पनहालेकी विजय

सन् १६७३ ई०की ६ठी मार्च (फाल्गुन कृष्णपक्षकी त्रयोदशी) की रातको कोंडाजी फर्जन्द साठ चुने हुए मावले सिपाही लेकर चुपचाप पनहाला-क़िलेके ऊपर चढ़ गये। उनके सिपाहियोंने हाथ पकड़ पकड़ कर एक दूसरेको उस करारे पहाड़के ऊपर खींच लिया। चोटीपर पहुँच कर वे चार दलोंमे विभक्त हो चारों ओरसे ढोल पीटकर क़िलेके बीचसे होकर दौड़े। कृष्णपक्षकी गहरी अँधेरी रातके गहरे सन्नाटेमें, बाहरकी समतल भूमिसे नहीं, बल्कि क़िलेके भीतर ठीक बीचसे यह आकस्मिक आक्रमण देखकर क़िलेके रखवालोंके होश-हवास गायब हो गये। लोग चारो ओर दौड़ने और भागने लगे। कोंडाजीने खुद क़िलेके मालिकको तलवारसे मार डाला। ख़ज़ानची

नागोजी पंडित इस शोरगुलको सुन अपने घरसे बाहर निकले, और एक पहरेवालेसे पूछा, "मामला क्या है?" वह बोला, "अरे महाराज! क्या आप जानते नहीं, मराठोंने क़िला ले लिया और क़िलेके मालिक यहाँ पड़े हैं?" अब तो नागोजी सब कुछ छोड़-छाड़कर जल्दीसे भागे; कहीं वे पकड़ लिये जाते, तो उनको भी मारकर रुपये वसूल किये जाते!

अब नीचेसे सैकड़ो मराठे सिपाही क़िलेमें घुसे। धीरे धीरे सवेरा हुआ। क़िला पूरी तरह शिवाजीके हाथमें आ गया। * मराठोंने बीजापुरके कर्मचारियोंको पीट पीट कर उनकी निजी और सरकारी गुप्त धन-सम्पत्तिका पता लगाकर सबपर कब्ज़ा कर लिया। विजयकी ख़बर पाते ही शिवाजीने शीघ्र ही स्वयं आकर क़िलेको देखा, वहाँ एक महीना ठहरकर उसकी दीवारें मज़बूत कीं तथा और भी तोपें मँगवाकर पनहालेको अपना अजेय आश्रय-स्थान बनाया। कुछ दिनके बाद पारली और सताराके क़िले भी उनके हाथ लगे।

उमराणीकी लड़ाई

इतने क़िले हाथसे निकल जानेके कारण बीजापुरकी राज-सभामें बड़ी खलबली मची। नये वज़ीर ख़वासख़ाँकी बेख़बरीसे यह सब हानि हुई है, यह कहकर सब कोई उन्हींको दोष देने लगा। बहलोलख़ाँ पनहाला-उद्धारके लिए भेजा गया, और तीन बड़े बड़े सेनापतियोंको दूर दूरके प्रदेशोंसे अपनी अपनी फ़ौजके साथ आकर बहलोलकी सहायता करनेका हुक्म भेजा गया।

---

* 'जेधे शकावली' में लिखा है कि शिवाजीने घूस देकर क़िलेके एक ओरके पहरेदारोंको मिलाकर पनहाला दख़ल किया था। हमें भी यह बात सत्य मालूम होती है, क्योंकि ऐसे अजेय क़िलेकी रक्षाके लिए जैसा चाहिये वैसा प्रयत्न नहीं हुआ।

किन्तु सहायता पहुँचनेके पहले ही शिवाजी बहलोलके ऊपर जा टूटे। शिवाजीके प्रधान सेनापति प्रतापरावने पन्द्रह हज़ार घुड़सवारोंके साथ चुपचाप दो रात बड़ी तेज़ीसे चलकर, (बीजापुर शहरसे १८ कोसकी दूरीपर, पश्चिममें) उमराणी नामक गाँवमे पहुँचे और बहलोलकी फ़ौजको एकाएक चारों ओरसे घेर लिया, यहाँ तक कि उनके पानी लानेवाले एकमात्र रास्तेको भी (१५ अप्रेलको) बन्द कर दिया। दूसरे दिन सवेरे मराठोंके दलके दल समुद्रकी लहरोंकी तरह बार बार बीजापुरी फ़ौजके ऊपर टूट पड़ने लगे और सारे दिन लड़ाई चलती रही। बहुतसे मरे, बहुतसे घायल हुए। बहलोलकी अफगान फ़ौजने जी-जानसे लड़कर अपनी जगहकी रक्षा की। अन्तमे शाम हो गई और दोनों पक्ष थककर अपने अपने खेमेमे गये, लेकिन बीजापुरियोंको प्यास बुझानेके लिए एक बूँद भी पानी न मिला।

तब बहलोलने चुपचाप प्रतापरावको बहुतसा रुपया घूँस देकर कहला भेजा—"हमें भाग जानेके लिए एक रास्ता छोड़ दो। तुम लोग हमारे खेमेकी सब चीज़ें ले लेना"; और वैसा ही किया गया।

बहलोल रातो-रात दुश्मनके मोर्चोंके बीचकी एक खुली जगहसे कूच कर बीजापुर लौट गया। बहलोलके छुटकारेकी बात सुनकर शिवाजी क्रोधित हुए, प्रतावरावके ऊपर बहुत बिगड़े।

उसके बाद कुछ महीनों तक कन्नड़-प्रदेशमें लड़ाई चलती रही परन्तु किसी तरफ भी कोई महत्त्वपूर्ण बात न हुई। शिवाजी बेरोक-टोक चारों ओर लूट-मार करने लगे। १० अक्टूबर, विजयादशमीके दिन शिवाजी स्वयं कन्नड़पर चढ़ाई करनेके लिए रवाना हुए, लेकिन

दो महीनेके बाद ही बीजापुरियोंने उन्हें वहाँसे वापिस लौटनेको मजबूर किया। यों इस बार उनको कुछ लाभ न हुआ।

सेनापति प्रतापरावकी मृत्यु

इस हारके अपमानको मिटानेके लिए सन् १६७४ ई० के जनवरी महीनेमे शिवाजीने प्रतापरावको बुलाकर कहा "देखो, बहलोल हमारे राजमे बार बार आता है। तुम फौज लेकर जाओ और इस बार उसे सदाके लिए हरा आओ। नहीं तो फिर कभी हमें अपना मुँह न दिखाना।"

स्वामीकी ऐसी कड़ी बातसे बिगड़कर प्रतापराव बहलोलकी खोजमें निकले और कोल्हापुरसे ४५ मील दक्खिनमे घाटप्रभा नदीसे कुछ दूर नेसरी गाँवमें उसे जा मिलाया। बीजापुरी फ़ौजको देखते ही प्रतापरावने दाहने-बायेंका कुछ भी विचार न किया और सरपट घोड़ा दौड़ाकर उसपर टूट पड़े। सिर्फ छः अनुचर उनके साथ थे, बाकी फ़ौज इस पागलपनको देख पीछे ही रह गई। लेकिन प्रतापरावकी दृष्टि पीछेकी ओर नहीं थी, उन्हे बात सुननेकी भी फ़ुर्सत नहीं थी; दो पहाड़ोंके बीचसे जानेवाला एक छोटासा रास्ता ही उनके सामने था। उस ओर बहलोलके आदमी खड़े थे। उस घाटीमे प्रतापराव घुस गये और दुश्मनोसे घिरकर अपने छः साथियोंके साथ शीघ्र ही मारे गये। अब तो बीजापुरी फ़ौज जीतके उल्लासमें मराठोंके ऊपर टूट पड़ी और उनमेंसे बहुतोंको मार गिराया और (२४ फरवरी, १६७४ ई० को) खूनकी नदी बह चली।

अन्य लड़ाइयाँ

आनन्दरावने हारी हुई पस्तहिम्मत मराठी फ़ौजको साहस देकर

फिर इकट्ठा किया। शिवाजीने उन्हें सेनापति नियुक्त कर लिख भेजा " दुश्मनको न हरा सको, तो जीते मत लौटना।" आनन्दराव अपने घुड़सवारोंको लेकर बीजापुर राज्यके भीतर घुस गये। दिलेरखाँ और बहलोलखाँ दोनोंने मिलकर उनका रास्ता रोका; तब तो आनन्दराव प्रतिदिन ४५ मीलके हिसाबसे इतनी तेज़ीसे कन्नड़की ओर चले कि दोनो ही खाँनोंने हार मानकर उनका पीछा करना छोड़ दिया।

आनन्दराव दक्षिणकी ओर घूमकर कन्नड़में घुसे थे; वहाँ साँप-गाँव शहरके बाज़ारकी लूटसे (२३ मार्चको) साढ़े सात लाख रुपये उनके हाथ लगे। वहाँसे दस कोसकी दूरीपर बंकापुर शहरके पास उन्होंने बहलोलखाँ और खिजिरखाँके अधीन बीजापुरी फ़ौजके एक दलको हरा दिया। इस जीतमें उन्होंने पाँच सौ घोड़े, दो हाथी और दुश्मनकी और भी बहुतसी धनसम्पत्ति छीन ली, परन्तु बहलोल फ़ौरन लौटकर बड़ी तेज़ीसे उनके ऊपर टूट पड़ा। मराठोंने एक हज़ार घोड़े और लूटके मालमेंसे कुछ चीज़े छोड़कर भार हलका किया और लूटकी बाक़ी चीज़ें ले सही-सलामत अपने देशको लौट आये।

आठवीं अप्रेलको शिवाजीने चिपलूण शहरमें इन विजयी फ़ौजोंका मुआयना किया और उन्हे बहुत-कुछ इनाम भी दिया; और हंसाजी मोहितेको 'हम्बीरराव' की उपाधि दे प्रतापरावकी जगह उन्हें सबसे बड़े सेनापतिके पदपर नियुक्त कर दिया।

सन् १६७३ ई० के दिसम्बरसे लेकर अगले वर्षके मार्च महीने तक कोंकण और दूसरी जगहोंमें लड़ाई बहुत धीरे धीरे चलती रही। दोनों ही तरफकी फ़ौजोंने थककर और ऊबकर युद्धमें काफ़ी जी

नहीं लगाया। उनके नेताओंने भी युद्ध करके झगड़ा निपटानेसे लूट खसोटमें ही अधिक आमदनी देखकर उसी ओर ध्यान दिया। इस साल जाड़ेमे बहुत वर्षा होनेसे महाराष्ट्रमे महामारी फैल गई, जिससे बहुतसे घोड़े और आदमी मर गये।

उधर बादशाह औरंगज़ेबने ७ अप्रेल (१६७४ ई०) को दिल्लीसे रवाना हो उत्तर-पच्छिममे अफ़गान सरहदके लिए कूच किया, क्योंकि खैबर घाटीकी पहाड़ी अफ़रीदी जातिने वहाँ घोर विद्रोह मचा रखा था। दिलेरखॉ भी दक्षिणसे बुलाया गया। अब तो दक्षिणमे अकेला बहादुरखॉ रह गया। उसके पास फ़ौज भी इतनी थोड़ी थी कि उसे लेकर कुछ करना असम्भव था। इसी मौक़ेपर शिवाजीने बड़ी धूमधामसे अपने राज्याभिषेकका काम पूरा किया।

आठवाँ अध्याय

शिवाजीका राज्याभिषेक

अभिषेककी आवश्यकता

शिवाजीने बहुतसे देश जीते और प्रचुर धन इकट्ठा किया, परन्तु उन्होंने अब तक अपनेको 'छत्रपति' यानी स्वाधीन राजा घोषित नहीं किया था जिससे उन्हें बहुत कुछ असुविधा और नुक़सान हो रहा था। एक तो अन्य राजा उनको बीजापुरके आश्रित एक ज़मींदार अथवा जागीरदार-मात्र ही समझते थे, और बीजापुरके हाकिमोंकी निगाहमें वे विद्रोही प्रजा-मात्र थे; दूसरे, अन्य मराठे ज़मींदार भोसलोंको अपनेसे किसी भी अंशमें बड़ा मानते न थे, बल्कि उनमें से बहुतसे पुराने घर (जैसे मोरे, यादव, निम्बालकर इत्यादि) शाहजी और शिवाजीको ऐरागैरा अकुलीन कहकर उनकी अवहेलना ही किया करते थे। उधर शिवाजीकी प्रजा भी बड़ी कठिनाईमें पड़ गई थी, क्योंकि जब तक शिवाजी स्वाधीन राजा न कहलावें, तब तक प्रजा नियमानुसार शिवाजीका हुक्म माननेको बाध्य न थी। इसी प्रकार शिवाजीका भूमिदान और सनद आदि भी नियमानुसार प्रमाण नहीं मानी जाती थी।

इन्हीं सब कारणोंसे शिवाजीने अपना अभिषेक कर 'छत्रपति'की उपाधि ग्रहण की, और दुनियाको यह घोषित कर दिया कि वे एक स्वाधीन राजा हैं। उनकी प्रजा अब उनको ही स्वामी मानेगी और किसी दूसरे मालिकके अधिकारको स्वीकार न करेगी। इसके सिवा महाराष्ट्रके

अनेको उत्साही-देशभक्त अपने देशमें स्वाधीन हिन्दू-राज्य—'हिन्दवी स्वराज' स्थापन करनेके लिए बड़े उत्सुक थे। उस समय केवल शिवाजी ही एक ऐसे व्यक्ति थे जो इस जातीय इच्छाको पूरा कर सकते थे। . . . .

अभिषेकका प्रबन्ध

परन्तु शास्त्रके अनुसार क्षत्रियको छोड़ दूसरी जातिका कोई भी आदमी राजा नही हो सकता था, और उन दिनो समाजमे भोसले वंशको लोग शूद्र ही मानते थे। शिवाजीके मुन्शी बालाजी आबाजीने (जो मराठा-जातिके सबसे बड़े पंडित थे) काशीवासी विश्वेश्वर भट्टको (जो गागा भट्टके नामसे पुकारे जाते थे) बहुतसा रुपया देकर अपने हाथमें किया। भट्टजीने शिवाजीको क्षत्रिय सिद्ध कर दिया। शिवाजीके आदिपुरुष सूर्यवंशीय क्षत्रिय चित्तौरके महाराणाके पुत्र थे, इस बातको स्वीकार कर उन्होने इस आशयका एक कागज़ भी लिख दिया, और शिवाजीके अभिषेकका प्रधान पुरोहित होना भी उन्होंने स्वीकार कर लिया। गागा भट्ट दिग्विजयी पंडित थे, वे "चारो वेद, षट्शास्त्र और योगाभ्यासके ज्ञाता, ज्योतिषी, मन्त्रोंके ज्ञाता, सब विद्याओंके पारदर्शी विद्वान् और कलियुगके ब्रह्मदेव थे" (सभासद बखर)। उनके साथ वादविवाद कर सकनेवाला महाराष्ट्रमें उस समय कोई ब्राह्मण न था। इसीलिए शास्त्रार्थमें हार जानेके डरसे और दक्षिणामें बड़ी बड़ी रकमे पानेके लोभसे भी महाराष्ट्रके सब ब्राह्मणोंने शिवाजीको क्षत्रिय मान लिया।

उसके बाद कई महीने तक बहुत धूमधाम और व्ययके साथ अभिषेकका प्रबन्ध होता रहा। भारतवर्षके सब प्रान्तोंसे पंडितगण

आमन्त्रित किये गये। उस समय यद्यपि रास्तोंमें बड़े खतरे थे और एक स्थानसे दूसरे स्थानको जाना-आना बड़ा कठिन और कष्टसाध्य होता था, फिर भी ग्यारह हज़ार ब्राह्मण, जो अपने स्त्री-पुत्रो सहित पचास हज़ारके लगभग हो गए थे, रायगढ़के क़िलेमे आ उपस्थित हुए, और चार महीने तक शिवाजीके खर्चसे मिठाई और पकवान उड़ाते रहे।

अभिषेककी प्रारम्भिक आवश्यक बातें शुरू हुईं। पहले शिवाजीने अपने गुरु समर्थ स्वामी रामदास और अपनी माता जीजाबाईको प्रणाम कर उनसे आशीर्वाद लिया।

शिवाजी और शातकर्णीकी तुलना

आज जीजाबाईके आनन्दकी सीमा न थी। यौवनकालसे ही पतिकी उपेक्षा सहन करते हुए उन्होंने योगिनीकी भाँति सुदीर्घ पचास वर्ष काटे थे, परन्तु शिवाजीकी आजीवन अगाध मातृभक्तिने उनके सब कष्ट भुला दिए। उनके पुत्रके पवित्र चरित्र, दया, चतुरता और अजेय वीरत्वकी ख्यातिसे संसार गूँज रहा था। आज उनके बेटेने स्वदेशवासियोंको पराधीनताके बन्धनसे छुड़ाया था। उसने हिन्दू नर-नारियोंकी अत्याचारसे रक्षा की थी; और सब ओर धर्म और न्यायका राज्य स्थापित किया। ऐसे महान् यशस्वी राजाकी माता कहलाकर वे देशपूज्या हुईं। पन्द्रह सौ वर्ष पूर्व इसी महाराष्ट्र देशकी एक और राजमाता,—आन्ध्रराज श्री शातकर्णीकी माता गोतमीके शब्दोमे वे भी अपने विजयी, धार्मिक पुत्रका गुण-गानकर मानो कह रही थीं—"मैं महारानी गोतमी बालश्री राजराजश्री शातकर्णीकी माता। मेरे पुत्रकी मातृ-सेवा बाधा-रहित है।

सुख-दुःखमे नगरवासियोंसे उसकी पूरी सहानुभूति रहती है। वह शक, यवन, पह्लवोंका नाश करनेवाला है। उसने ब्राह्मणों और अब्राह्मणोंकी सम्पत्ति बढ़ाई है। उसने खखरात-वंशको ख़तम कर दिया है, चारों वर्णोंके सम्मिश्रणको रोका है और अनेक बार लड़ाईमें शत्रुओंको जीता है। वह सज्जनोका आश्रय, लक्ष्मीका पात्र और दक्षिणापथका राजा है।....* ”

ऐसा मालूम होता था कि उनके जीवनकी इस पूर्ण सफलता तथा इस चरम आनन्दको दिखानेके लिए ही भगवानने जीजाबाईको इतने दिन जीवित रखा था। शिवाजीके अभिषकके केवल बारह दिन बाद ही अस्सी वर्षकी उम्रमे उनका देहान्त हुआ।

तीर्थ-यात्रा और प्रायश्चित्त

गुरु और माताका आशीर्वाद पाकर शिवाजी तीर्थ-यात्राको निकले और चिपलूण तीर्थमे जाकर वहाँ परशुरामकी पूजा की तथा प्रताप-गढ़में अपनी इष्टदेवी भवानीपर सवा मन सोनेका एक छत्र चढ़ाकर देवीकी उपासना की। २१ वीं मईको वे रायगढ़ लौट आए और बहुत दिनों तक वहीं देवी-देवताकी पूजामें मग्न रहे।

उनके पुरखे क्षत्रियोका आचरण त्यागकर पतित (शूद्र) हो गये थे, इसलिए शिवाजीने २८ वीं मईको प्रायश्चित्त किया और

---

* “ महादेव्या गोतमी बालश्रीमातुः राजराजस्य श्रीशातकर्णेः गोतमीपुत्रस्य अविपन्नमातृशुश्रूषाकस्य पौरजननिर्विशेषसमसुखदुःखस्य शकयवनपह्लवनिसूदनस्य द्विजावरकुटुम्बाविवर्धनस्य खखरातवंशनिरवशेषकारस्य वितिवार्त्तितचतुर्वर्णसंकरस्य अनेकसमरावजितशत्रुसंघस्य सत्पुरुषाणामश्रयस्य श्रिया अधिष्ठानस्य दक्षिण-पथश्वरस्य......” (Epigraphica Indica, VIII. 60, नासिकगुहाकी शिलालिपिका संस्कृत अनुवाद)

गागाभट्टने उन्हें जनेऊ पहनाकर क्षत्रिय बनाया। उस समय शिवाजीने कहा, "हम द्विज हुए है और सब द्विजोंको वेदका अधिकार है, इसलिए हमारे क्रियाकाण्डमे भी वैदिक मंत्र पढ़ना होगा।" यह सुनकर उस जगह जितने ब्राह्मण इकट्ठे हुए थे वे सब विद्रोही हो उठे और कहने लगे, "कलियुगमें क्षत्रिय-जाति लुप्त हो गई है, अब ब्राह्मणोंको छोड़कर दूसरा कोई द्विज नहीं है।" उन लोगोंने रुपयेके लालचसे भोंसले वंशको क्षत्रिय स्वीकार किया था, अन्यथा शिवाजीका अभिषेक भी होने न पाता और न ब्राह्मणोको इतने लाख रुपये दक्षिणा, दान आदिमें ही मिलते। अब उनकी पहलेवाली सम्मतिका यह स्वाभाविक नतीजा देखकर वे बिगड़ गये। खुद गागाभट्ट भी डर गये और किसी प्रकार इधर उधर कर-कराके जल्दीसे गोल-माल मिटा दिया। अभिषेकमें वैदिक मंत्र नहीं पढ़े गये, परन्तु शिवाजीने विवाहके समय (३० वीं मईको) उन्हीं मंत्रोका व्यवहार किया।

इस व्रत, प्रायश्चित्त और उपनयनके समय बड़ा उत्सव हुआ और बहुतसा रुपया दान दिया गया; गागाभट्टको 'मुख्य अध्वर्यु' होनेसे पैंतीस हज़ार रुपये मिले। दूसरे साधारण ब्राह्मणोंके बीच पचासी हज़ार रुपये बाँटे गये।

दूसरे दिन शिवाजीने अपने ज्ञात और अज्ञात पाप-मोचनके लिए तुलादान किया। सोना चांदी ताँबा इत्यादि सात धातु, महीन सुन्दर वस्त्र, कपूर, नमक, मसाला, घी, चीनी, फल और खानेकी चीज़े इत्यादि बहुतसे पदार्थ उनके शरीरके बराबर (दो मनसे कुछ कम) वज़न करके नक़द पाँच लाख रुपयेके साथ ब्राह्मणोको दान दिये गये। इसके सिवा उनके देश लूटते समय जो गो-ब्राह्मण, स्त्री और बालक

मारे गये थे, उस पापके प्रायश्चित स्वरूप शिवाजीने और आठ हज़ार रुपये ब्राह्मणोंको दान दिये ।

अभिषेकके पहले दिन शिवाजी संयमसे रहे । गंगाजलसे स्नान कर गागा भट्टको पच्चीस हज़ार और दूसरे बड़े बड़े ब्राह्मणोंको पाँच पाँच सौ रुपये दान दिये ।

शिवाजीका अभिषेक

जेठ महीनेकी शुक्ल त्रयोदशी (६ जून, सन् १६७४ ई०) को अभिषेककी शुभ तिथि थी। बहुत तड़के उठकर पहले शिवाजीने स्नान किया, फिर उन्होंने कुलदेव और कुलदेवी,—महादेव और भवानीकी पूजा की और कुलगुरु बालम भट्ट, पुरोहित गागा भट्ट तथा अन्यान्य बड़े बड़े पंडितो और साधुजनोको प्रणाम करके उनका आशीर्वाद लिया और उन्हें वस्त्रालंकार भेंट किए ।

उसके बाद शिवाजी पवित्र श्वेत वस्त्र पहनकर माला, चन्दन और सोनेके गहने धारण कर अभिषेक-स्नानके लिए नियत किये हुए स्थानपर गये । वहाँ जा कर दो फीट लम्बी, दो फीट चौड़ी, दो फीट ऊँची सोनेकी चौकीपर बैठे । उनकी बगलमें रानी सोमराबाई बैठी । सह-धर्मिणी होनेसे रानीका आँचल शिवाजीके दुपट्टेके साथ बाँध दिया गया था । कुछ दूर पीछेकी ओर युवराज शम्भूजी बैठे । आठों कोनोमे सोनोके आठ घड़े और आठ छोटे बर्तनोमे गंगाजल तथा गंगा प्रभृति सात बड़ी नदियोंका और दूसरी प्रसिद्ध प्रसिद्ध नदी, समुद्र और तीर्थोंका जल लाकर रक्खा गया था । प्रत्येक घड़ेके पास अष्ट प्रधानोमेसे एक एक प्रधान खड़ा था । उन लोगोंने ठीक मुहूर्त्तमें यह जल शिवाजी, रानी और राजकुमारके सिरपर छोड़ दिया ।

श्लोकोंके पाठ तथा मंगल-वाद्योकी ध्वनिसे आकाश गूँज उठा। सोलह सधवा ब्राह्मणियोने सुन्दर कपड़े पहनकर, सोनेकी थालियोंमें पंच-प्रदीप ले उनके मस्तकके चारो ओर फिरा फिरा कर मंगल आरती उतारी।

उसके बाद शिवाजीने गीले वस्त्र उतार दिये, और राजाके योग्य ज़रीके कामदार लाल कपड़े और मणिमुक्ता-जटित बहुतसे सुन्दर गहने पहन लिये; गलेमें फूलोकी माला और सिरपर असंख्य मोतियोकी झालरदार पगड़ी रख ली; और अपनी ढाल, तलवार, तीर और धनुषका 'अस्त्र-पूजन' किया। इस उपलक्षमें भी उन्होंने ब्राह्मणोको नमस्कार करके दान-दक्षिणा दी।

सिंहासन-गृहकी सजावट

अन्तमें उन्होने सिंहासन-गृहमें प्रवेश किया। इस गृहकी सजावटमे बहुत ज्यादा धन-रत्न खर्च किये गये थे। छतके नीचे ज़रीका चँदोवा टँगा गया था जिसमें मोतियोंकी लड़ियाँ झूलती थीं। ज़मीनपर मखमलका फर्श बिछा हुआ था। बीचमे बहुत मेहनतसे तैयार किया हुआ निपुण कारीगरीके कामसे शोभित 'अमूल्य नवरत्नोसे खचित' एक बड़ा भारी सोनेका सिंहासन था। सिंहासनके नीचेका भाग सोनेसे मढ़ा हुआ था। आठो कोनोमे सोनेके पत्तरे मढ़े हुए मणि-जटित आठ खम्भे थे। इन आठ खम्भोके सिरेपर चमकीली ज़रीका चँदोवा टँगा था जिसमें जगह जगहपर मोतियोंके गुच्छे, हीरे और पद्मराग इत्यादि झूलते थे। राजाके बैठनेकी गद्दी बाघके चमड़ेके ऊपर मखमलसे ढकी हुई थी। गद्दीके पीछे राजछत्र था।

सिंहासनके दोनों ओर अनेक प्रकारके राज-चिह्न सोनेके नुकीले

भालोके ऊपरसे झूलते थे, जैसे, दाहनी तरफ दो बड़ी मछलियोंका सिर (मुग़लोका शाही मरातिब), बाईं ओर घोड़ेकी पूँछका चँवर (तुर्कोंका राजचिह्न) और भारी मान-दण्ड (यह न्याय-विचारका चिह्न प्राचीन पारस या ईरान राज्यसे लाया गया था)। बाहर राजद्वारका अग्रभाग दोनों पार्श्वोंमें पत्तोंसे मुँह ढके हुए जलके घड़ोंसे सजाया हुआ था। उसके बाद दो हाथीके बच्चे और दो सुन्दर घोड़े थे जिनका साज और लगाम सोने और जवाहरातसे जड़े हुए थे।

सिंहासनपर बैठना और छत्र धारण करना

निर्दिष्ट मुहूर्तमें शिवाजी अपने मान्य जनोको प्रणाम कर सिंहासनकी सीढ़ीसे चढ़कर गद्दीपर जा बैठे। उसी क्षण रत्न-जटित स्वर्ण-कमलके फूल और दूसरे सोने-चाँदीके फूलोंके गुच्छे भर-भरकर सभासदोंके बीच लुटाये गये। फिर सोलह सधवा ब्राह्मणियोने सुन्दर वस्त्र पहनकर, सोनेकी थालियोमे पंच-प्रदीप जलाकर, शिवाजीके चारो ओर घुमाकर अमंगल दूर किया। इकट्ठे हुए ब्राह्मणोंने ऊँचे स्वरसे श्लोक पढ़कर राजाको आशीर्वाद दिया, शिवाजीने भी सिर झुकाकर उसका जवाब दिया। जनसाधारण आसमान फाड़ फाड़ कर चिल्लाने लगे, 'जय, शिवराजकी जय! शिव छत्रपतिकी जय!' जितने बाजे थे, सब एक साथ बज उठे। महाराष्ट्र देशके सब क़िलोंसे ठीक उसी मुहूर्तमें तोपोकी सलामियाँ दगने लगी। देश-भरमे सबको यह मालूम हो गया कि आज उन्हें अपना राजा मिला है।

पहले अध्वर्यु गागा भट्ट, फिर अष्टप्रधान और उनके पीछे अन्य ब्राह्मणोने आगे बढ़कर राजाको आशीर्वाद दिया। शिवाजीके सिरके ऊपर राजछत्र रखा गया। उन्होंने सबको बेशुमार दौलत दी।

दान-पद्धतिके अनुसार सोलह महा-दान इत्यादि सब दान दिये गये। सिंहासनके आठों कोनेंमें अष्टप्रधान यानी मंत्रीगण खड़े थे। उनकी पदवियोंके फारसी नाम बदलकर संस्कृत नाम दिये गये; जैसे, पेशवाके बदले 'मुख्य प्रधान।' शिवाजीने स्वयंको 'छत्रपति' घोषित किया। उस दिनसे 'राज्याभिषेक-शक' नामक एक नया संवत् शुरू हुआ। यही संवत् पीछे सब मराठी सरकारी कागज़-पत्रोंमे व्यवहार किया जाने लगा।

सिंहासनसे कुछ नीचे तीन आसनोंपर युवराज शम्भूजी, गागा भट्ट और पेशवा मोरेश्वर त्र्यम्बक पिंगले बैठे। बाकी मन्त्री लोग दो कतारोंमें सिंहासनके दोनो पार्श्वोंमें खड़े रहे। उनके पीछे कायस्थ 'लेखक' नीलप्रभु (पारसनीस) और बालाजी आवजी (चिटणीस) को स्थान मिला। दूसरे दरबारी लोग इसी क्रमसे दूर दूर खड़े थे।

इन सब कामोंमें आठ बज गये तब नीराजी रावजी (शिवाजीके जज) अंग्रेज़-दूत हेनरी आक्सिण्डेनको सिंहासनके सामने ले गये। दूतने सिर झुकाया और उनके दुभाषिये नारायण शेणवीने अंग्रेज़ कम्पनीकी ओरसे भेंट की हुई एक हीरेके अँगूठी शिवाजीके सामने पेश की। राजाने उन सबोंको और भी नज़दीक बुलाया और खिलअत पहनाकर विदा किया।

रायगढ़में जुलूस

सब काम समाप्त होनेके बाद हाथीपर सवार हो शिवाजी अपने दल-बल सहित रायगढ़के रास्तेसे जुलूस निकालकर चले। आगे दो हाथियोंके ऊपर दो राजपताकाएँ यानी 'ज़री पताका' (ज़रीका) और 'भगवा झंडा' (रामदास स्वामीके गेरुए वस्त्रका टुकड़ा)

थे। नगरनिवासियोंने अपने घर और रास्ते सजा रखे थे। सभी घरोंमे सधवाओंने प्रदीप घुमा घुमा कर राजाकी आरती उतारी, लावा और दूबसे परछन की। उसके बाद रायगढ़ पहाड़के सब मंदिरोंमें जा जाकर प्रत्येक मंदिरमें पूजा, दान, ध्यान कर अन्तमें शिवाजी घर लौटे। तब तक दोपहरका समय हो गया था।

अभिषेकका ख़रचा

दूसरे दिन ब्राह्मणोंको दक्षिणा देनेका और भिखमंगोंकी बिदाईका काम शुरू हुआ। इसके खतम होनेमें बारह दिन लगे और इस बीचमें हरएकको राजाके यहाँसे सीधा मिलता रहा। मामूली ब्राह्मणोंकी दक्षिणा तीनसे लेकर पाँच रुपये तक थी। ब्राह्मणी और लड़कोंकी दक्षिणा दो और एक रुपया थी। इस दानमें साढ़े सात लाख रुपये खर्च हुए।

अभिषेकके दो दिन बाद वर्षा शुरू हुई और दस-ग्यारह दिन तक मूसलाधार पानी बरसता ही रहा। निमन्त्रित आदमियोंको बिदा लेकर लौटनेका रास्ता ही न मिला। १८ वीं जूनको पूर्ण सुख-सम्पत्तिके बीच वृद्धा जीजाबाईका देहान्त हुआ। उनकी पचीस लाख होणकी सम्पत्ति शिवाजीको मिली। यह अशौच खतम होनेपर शिवाजी दूसरी बार सिंहासनपर बैठे।

कृष्णाजी अनन्त सभासदने कुछ बढ़ाकर लिखा है कि अभिषेकके समय सात करोड़ दस लाख रुपये खर्च हुए थे।* परन्तु सब मिला-

---

* सभासद लिखता है कि "सिंहासनमे बत्तीस मन सोना (दाम चौदह लाख रुपये), चुने हुए हीरे और मणि-माणिक्य लगाए गए थे। अष्ट-प्रधानोमेंसे हरएकको एक लाख होण (अर्थात् पाँच लाख रुपये) नगद और हाथी, घोड़े, कपड़े तथा गहने इनाममें मिले थे; गागा भट्टको 'अपारिमित द्रव्य' दिया गया था।"

कर अगर पचास लाख रुपये रखे जायँ, तो सच हो सकता है।

फिर लड़ाई छिड़ गई

अभिषेककी धूम-धाममे शिवाजीका राजकोष खाली हो गया। इसीलिए उनको फिर लूटके लिए बाहर निकलना पड़ा। इसके ठीक एक महीने बाद आधी जुलाईके लगभग यह अफ़वाह फैली कि मराठे घुड़सवारोंका एक दल एक गाँव लूटनेवाला है। ऐसी अफ़वाह सुनकर मुग़ल सूबेदार बहादुरखाँ पेडगाँवका अपना खेमा छोड़कर फ़ौजके साथ पचास मील दूर उनको रोकने गया। उसी मौक़ेपर सात हज़ार मराठोंके एक अन्य दलने दूसरे रास्तेसे आकर पेडगाँवके अरक्षित मुग़ल शिविरपर अचानक हमला कर दिया और वहाँ बिना किसी रोक-टोकके एक करोड़ रुपये और दो सौ अच्छे अच्छे बादशाही घोड़े लूटकर शिविरमे आग लगा दी और वह चलता बना। जाड़ेके दिनोमे मराठे लोग कुछ महीनो तक कोली देश, औरंगाबाद, बगलाना और खानदेश लूटते फिरे। सन् १६७५ ई० की जनवरीके अन्तमे उन्होंने कोल्हापुरसे साढ़े सात हज़ार रुपये वसूल किये, परन्तु आधी फरवरीके लगभग मुग़ल कल्याण शहरको जलाकर चल दिये।

मुग़ल, बीजापुरी और शिवाजी

सन् १६७५ ई० के मार्चसे मई तक तीन महीने शिवाजीने फिर मुग़ल-बादशाहके अधीन होनेकी इच्छाके बहाने सन्धि करनेका विचार प्रकट कर सूबेदार बहादुरखाँको चकमेमें डाल रखा। इसी बीचमें कोल्हापुरपर (मार्चमे) तथा फोण्डके प्रसिद्ध क़िलेपर (जुलाईमें) अधिकार कर लिया। इस प्रकार अपना मतलब सिद्ध हो जानेपर शिवाजीने बहादुरखाँके दूतको बेइज्ज़तीके साथ भगा दिया।

क्रोध और लज्जासे व्यथित होकर बहादुरखाँ शिवाजीको दबानेके लिए बीजापुरके वज़ीर खवासखाँसे मिल गया, परन्तु ११ वीं नवम्बरको बीजापुरके अफ़गान दलने खवासखाँको कैद कर लिया और राज-काजका अख़्तियार उसके हाथसे छीन लिया। बेचारे बहादुरखाँकी मन्शा पूरी न हो सकी।

सन् १६७६ ई०के शुरूहीमे शिवाजी बहुत बीमार पड़े। सतारामें तीन महीने दवा करनेपर मार्चके अन्तमे जाकर कहीं वे अच्छे हुए।

इधर खवासखाँके पतनके बादहीसे बीजापुरमें अफ़गान और दाक्षिणी उमराओंके बीच बड़ा भारी घरेलू झगड़ा शुरू हो गया। बहादुरखाँ बीजापुरके नये वज़ीर अफ़गान-नेता बहलोलखाँके ऊपर चढ़ाई करनेके लिए (३१ मई, १६७६ ई०को) रवाना हुआ। बहलोलने झट शिवाजीसे सन्धि कर ली। उसकी शर्तें ये थीं कि बीजापुर-सरकार शिवाजीको हर साल नकद तीन लाख रुपये और एक लाख होण (यानी पाँच लाख रुपये) कर स्वरूप देगी, शिवाजीके जीते हुए देशोपर शिवाजीका ही अधिकार मानेगी, और अगर मुग़ल चढ़ाई करें, तो शिवाजी अपनी फौजसे आदिलशाही राज्यकी रक्षा करेंगे। परन्तु, बीजापुरके घरेलू झगड़ों और नये परिवर्तनोंके बीच यह सन्धि बहुत दिन नहीं चली। लेकिन उससे शिवाजीकी कोई हानि नहीं हुई। वे दूसरी ओर बहुत धनी देश,—पूर्व-कर्णाटक अर्थात् मद्रास प्रान्तको जीतनेके लिए चल दिये।

नवाँ अध्याय

छत्रपति शिवाजीका दक्षिण-विजय

पूर्व कर्णाटकके राज्य और उनका ऐश्वर्य

किसी समय विजयनगरका प्रसिद्ध साम्राज्य कृष्णा नदीके किनारेसे सारे दक्षिण देशमे, पूर्वीय समुद्र-तटसे पश्चिमी समुद्रके किनारे तक, अर्थात् मद्राससे लेकर गोआ तक फैला हुआ था। परन्तु, सन् १५६५ ई० मे दक्षिणके सब मुसलमान सुलतानोंने मिलकर विजयनगरके सम्राट्को लड़ाईमें पराजित कर मार डाला, और राजधानी बदलनेका प्रयत्न किया। परन्तु इस लड़ाईके बाद ही विजयनगरका साम्राज्य टूटने लगा; कुछ प्रदेश तो मुसलमानोंने छीन लिये और कुछ भाग स्वतन्त्र हो गये। विजयनगरके अन्तिम सम्राट् श्रीरंग रावलने अपना सर्वस्व खोकर अपने ही एक सामन्त श्रीरंगपत्तनके राजाके यहाँ आश्रय लिया (१६५६ ई०)।

इसी बीच बीजापुर और गोलकुण्डाके सुलतानोंने विजयनगरको कर देनेवाले छोटे छोटे राजाओंके हाथसे वर्त्तमान मैसूरराज्य और मद्रासके आसपासका प्रायः समस्त प्रदेश छीन लिया। ये राजा लोग शक्तिशाली विजयनगर सम्राज्यके आश्रयको त्याग कर अपनी अपनी सीमामें खुदमुख्तार होनेके गर्व और स्वार्थमें अन्धे हो रहे थे। अतः शक्तिशाली मुसलमान शत्रुओंके विरुद्ध वे संगठित न हो सके। फल यह हुआ कि मुसलमानोंने उन्हें एक एक करके सहजहीमें हरा

दिया। इस प्रकार सन् १६३७ और १६५६ ई० के बीच कुतुबशाहने गोलकुण्डाके दक्षिणपूर्वकी ओर बढ़कर कडापा, उत्तरी अर्काटका ज़िला (पलार नदीके उत्तरका हिस्सा) और शिकाकोलसे मद्राज बन्दर (मद्रासके प्रायः ५० मील दक्षिण) तक मद्रासके समुद्र-तटका प्रदेश अपने अधिकारमे कर लिया। इसको नाम दिया गया 'हैदराबादी कर्णाटक।' इसके ठीक दक्षिणमें पराल नदीसे कावेरी नदी तककी चौरस ज़मीन और लगभग सारे मैसूर प्रदेशमे आदिल शाहने अपना राज्य फैलाया जो 'बीजापुरी कर्णाटक' कहलाया।

धन-धान्य और जनसंख्यामे यह कर्णाटक प्रदेश भारतके अन्य सब प्रदेशोसे कहीं बढा-चढ़ा था। वहाँकी ज़मीन बहुत उपजाऊ तथा वहाँके अधिवासी बड़े परिश्रमी और शिल्प-कार्यमे चतुर थे। मणि-माणिक्यकी खानो और हाथियोसे भरे जंगलोसे राजाको खूब आमदनी होती थी। इन्हीं सब कारणोसे देशकी आमदनी शीघ्रतासे बढ़ती जाती थी। इस आयका बहुत कम हिस्सा खर्च होता था, क्योकि प्रजा बड़ी मितव्ययी थी और वहाँ किसी भी प्रकारकी विलासीता न थी। लोग बासे भातमे इमलीका पानी और नमक-मिर्च मिलाकर आनन्दसे खाते, और लँगोटी पहनकर बारहो महीना गुज़र करते थे। इस कारण हर साल कर्णाटकमे बहुत-सा धन जमा होता था जिसका कुछ हिस्सा बड़े बड़े मन्दिरोके बनानेमे खर्च होता था, बाकी धन ज़मीनमे गाड़ दिया जाता था। इसीलिए युग-युगान्तरसे कर्णाटक-प्रदेश सुवर्णमय देशके नामसे प्रसिद्ध था। समय समयपर विदेशी राजा और सामन्त लोग इस देशसे अगाध धन-रत्न लूट ले गये थे। इस समय शिवाजीकी भी दृष्टि इसी कर्णाटकपर पड़ी।

कर्णाटकके बीजापुरी जागीरदारोंमें घरेलू कलह और उनकी नीति

सन् १६७६ ई०में वर्तमान मैसूर राज्यका समस्त भाग बीजापुरके अधीन था और वह कई हिस्सोमे बँटा हुआ था। उनमें कुछ तो उमरावोंकी जागीरे थीं और कुछ कर देनेवाले छोटे छोटे हिन्दू राजाओंके राज्य थे। इसको लोग 'कर्णाटक बालाघाट' (अर्थात् 'ऊँची जमीन') कहते थे। मैसूरके पूर्वकी ओर बंगालकी खाड़ी तक फैली हुई जो समभूमि है (अर्थात् मद्रासके अर्काट आदि ज़िले) उसका नाम था 'कर्णाटक पाइनघाट' (यानी 'नीचा देश')। मैसूरके पहाड़से इस मैदानमे उतरनेपर उत्तरसे दक्षिणकी ओर जानेके मार्गमें क्रमसे तीन बीजापुरी उमरावोंकी जागीरें पड़ती थीं। पहले जिंजीके प्रसिद्ध क़िलेके अधीनका प्रदेश था जिसका हाकिम नासिर महम्मदख़ाँ (मृत वज़ीर खवासखाँका सबसे छोटा भाई) था। उसके बाद बलिकन्तपुरम् था, जहाँ वानरराज बालीको श्रीरामचन्द्रजीके दर्शन हुए थे; इसके मालिक शेरखाँ लोदी (अफ़गान वज़ीर बहलोल लोदीके जाति-भाई) थे। अन्तमे कावेरीके पार तंजोर पड़ता था जिसे शिवाजीके सौतेले भाई व्यंकोजी उर्फ एकोजीने सन् १६७५ ई० मे अपने अधिकारमे कर लिया था। इससे और भी दक्षिणमे मदुराका स्वाधीन राज्य पड़ता था। इसके सिवा वेल्लूर, अरणि आदि प्रसिद्ध क़िले अलग अलग अफ़सरोंके हाथमे थे।

इन सब बीजापुरी उमरावोमें अपने अपने स्वार्थके लिए हमेशा लड़ाई-झगड़ा, मार-काट और छीना-झपटी चलती रहती थी। कोई भी अपने ऊपर सुलतानके अधिकारको नहीं मानता था, क्योंकि

गोले तथा पाँच हजार फौज देकर वे शिवाजीकी सहायता भी करेंगे। शिवाजीके चतुर दूत प्रह्लाद नीराजीने मादन्नाके साथ बातचीत करके यह बन्दोबस्त पक्का किया।

शिवाजीने सोचा कि कर्णाटक-विजय करना कठिन काम है, अतः वहाँ खुद न जाकर केवल सेनापतिको भेजनेसे कोई फल न होगा, और इसमें कमसे कम एक वर्ष लगेगा। इधर इतने दिनों तक स्वदेश छोड़कर सुदूर कर्णाटकमे रहनेपर शत्रु लोग ऐसा मौका पाकर राज्यमें महा अनिष्ट कर सकते हैं। इसी कारण शिवाजी मुग़ल-सरकारसे मेल करनेके लिए उत्सुक हुए। सन् १६७६ ई० के अन्तमें मुग़ल और बीजापुरकी जैसी अवस्था थी, उससे शिवाजीको बड़ा सुभीता हुआ। बीजापुरमें नये वज़ीर बहलोलखाँके अफ़गानदल और उनके शत्रु दक्षिणी तथा हबशी उमराओंके बीच ज़ोरकी मार-काट और लड़ाई चल रही थी। उधर मुग़ल सूबेदार बहादुरखाँ बहलोलके ऊपर बिगड़ा हुआ था, इसलिए वह मौका देख दक्षिणियोका पक्ष ले बीजापुरके ऊपर (३१ मई, १६७६ ई०को) चढ़ाई कर बैठा और इस लड़ाईमें एक वर्षसे भी ज़्यादा समय तक उलझा रहा। इस समय किसीको भी शिवाजीकी ओर ध्यान देनेका मौक़ा न मिला।

बहादुरखाँने देखा कि बीजापुरपर आक्रमण करनेसे पहले यदि शिवाजीको हाथमे न कर लिया जायगा, तो मुग़लोंके अधीन प्रदेश अरक्षित और खतरेमें ही रहेगे। उस ओर शिवाजीने भी देखा कि जब वे खुद कर्णाटकको सर करनेमें व्यस्त रहेंगे, उस समय यदि मुग़ल-सूबेदार शत्रुता करे तो महाराष्ट्र देशकी बड़ी भारी हानि होगी। इसीलिए 'तुम हमे न जलाना, हम तुम्हें न छूएँगे' इस शर्तपर

दोनों पक्षोंने मेल कर लिया। शिवाजीके दूत नीराजी रावजी पण्डितने बहादुरखाँको गुप्त रूपसे बहुत रुपये घूँस दिये और प्रकटमें बादशाहके लिए कुछ रुपये या भेट देकर सन्धिकी लिखा-पढ़ी करा ली।

हनुमन्ते वंशकी सहायता

भाग्य सदा उद्योगी पुरुष-सिंहके ऊपर प्रसन्न रहता है। शिवाजीको कर्णाटक-विजयके लिए एक बड़ा सहायक भी मिल गया। रघुनाथ नारायण हनुमन्ते नामका एक चालाक, अनुभवी, प्रभावशाली और धनी ब्राह्मण शाहजीके समयसे व्यङ्कोजीका संरक्षक और वज़ीर होकर कर्णाटकका राज-काज करता आता था। इसीलिए रघुनाथ और उसके भाई जनार्दनको लोग उस देशके राजाके समान मानते थे। व्यङ्कोजीने बड़े होनेपर शासनका भार अपने हाथमे लिया और रघुनाथसे राजस्वका हिसाब माँगा। रघुनाथ इतने वर्षोतक मालिकके बहुतसे रुपये हड़पता रहा था, इस बातको ईर्षासे अन्य मंत्रियोने जाहिर कर दिया। इतने दिन तक आधिपत्य करनेके बाद हिसाब देने और व्यङ्कोजीके आज्ञानुसार चलनेमे रघुनाथ अपना अपमान समझने लगा और वज़ीरीसे इस्तीफा देकर काशी-यात्राके बहाने तंजोरसे सपरिवार चला आया। यह खबर पाकर शिवाजीने उसे बड़े आदरसे बुलाया और अपने राज्यमें नौकरी दी। रघुनाथने उनको कर्णाटककी सब जगहोंकी नस-नसकी बात बता दी, और अपने वंशकी इतने दिनोंकी प्रतिष्ठाद्वारा शिवाजीके कर्णाटक-आक्रमणमें विशेष सहायता की।

पेशवाको अपना प्रतिनिधि नियुक्त कर कोंकण प्रदेशका शासन-भार अन्नाजी दत्त (सुरनीस) को देकर और दोनोंके अधीन

एक एक बड़ी फौज रखकर सन् १६७७ ई० के जनवरीके आरम्भमें शिवाजीने रायगढ़से प्रस्थान किया।

इसी बीचमे उनके दूत प्रह्लाद नीराजीने गोलकुण्डाके सुलतान कुतुबशाहको शिवाजीके साथ मुलाक़ात करनेके लिए राज़ी कर लिया था। पहले तो सुलतानको भय हुआ कि कहीं उनकी भी दशा अफ़जल या शायस्ताखाँकी तरह न हो, परन्तु प्रह्लादने अनेक प्रकारसे धर्मकी शपथ खाकर उनको समझाया कि शिवाजी कभी विश्वास-घात न करेंगे। मादन्नाने भी इस बातका समर्थन किया और सुलतानको समझाया कि शिवाजीको पास बुलाकर मैत्री कर लेनेसे भविष्यमे मुग़लोंके आक्रमणसे गोलकुण्डाकी रक्षाका निश्चित उपाय हो सकेगा।

शिवाजीका गोलकुंडा राज्यमें प्रवेश

अपनी आँखोंके सामने फौजोको शृंखलापूर्वक चलाकर नित्य-नियमित कूच करके शिवाजी एक महीनेमे (फरवरीके पहले सप्ताहमें) हैदराबाद शहरमे जा पहुँचे। उन्होने कड़ा हुक्म जारी कर दिया था कि कोई सिपाही या नौकर-चाकर रास्तेमे किसी गाँववालेकी चीज़ोंपर हाथ न डाले और न स्त्रियोंकी आबरू ही बिगाड़े। पहले दो चार मराठोंने इस नियमको भंग किया; पर अपराधियोको फाँसी अथवा हाथ-पैर काटनेकी सजा देनेसे ऐसा भय फैला कि पचास हज़ार हथियारबन्द सिपाहियोका दल एक महीने तक बड़े शान्त और साधु-भावसे यात्रा करता रहा, फिर भी पेड़के एक तिनके या अन्नके एक दानेकी भी किसीकी हानि नहीं हुई। इस कारण चारो ओर शिवाजीका यश फैल गया।

कुतुबशाहने राजधानीसे कई कोस आगे बढ़कर शिवाजीकी अभ्य-र्थना करनेका प्रस्ताव किया। परन्तु शिवाजीने नम्र होकर उन्हे मना करा दिया। वे बोले, " आप हमसे बड़े हैं, गुरुजनोंको इतना आगे बढ़कर छोटेका सम्मान करना अनुचित है "। इसलिए केवल मादन्ना, उनके भाई अकन्ना और हैदराबादके बड़े बड़े लोगोंने शहरसे पाँच-छः कोस आगे बढ़कर शिवाजीकी अभ्यर्थना की और वे उन्हे राजधानीमें ले आये।

हैदराबाद शहरमें शिवाजीकी अभ्यर्थना

शिवाजीके स्वागतके लिए राजधानी हैदराबादने आज अत्यन्त सुन्दर वेश स्वरूप धारण किया था। बड़े बड़े रास्ते और गलियाँ कुंकुम और केसरसे लाल-पीली दिखाई देती थीं। जगह-जगहपर फूल बिछे थे और रंगीन ध्वजा-पताका तथा फाटकोंसे सारा शहर सजाया गया था। लाखोंकी संख्यामें नगरवासी अच्छी अच्छी पोशाकें पहनकर रास्तोंके किनारे खड़े थे। छज्जे और बरामदे वस्त्रा-भूषणोंसे सुसज्जित महिलाओंसे भरे थे।

शिवाजीने भी अपनी फ़ौजको इस दिनके लिए खास कपड़े पह-नाये थे। चमकीली पोशाक और हथियारोंके कारण उनके सिपाही धनी उमरावोंकी तरह मालूम पड़ते थे। कुछ चुने-हुए सिपाहियोंकी पगड़ियोंमें मोतीकी झालरें ('तोड़े'), हाथोंमें सोनेके कड़े, बदनपर सफ़ेद वर्म्म और ज़रीकी पोशाकें भी थीं।

दोनों राजाओंकी मुलाक़ातके लिए निर्दिष्ट शुभ दिनको यह पचास हज़ार मराठी फ़ौज हैदराबादमे घुसी। उनकी वीरताकी कहा-नियाँ कई दिनोंसे दक्षिणमें लोगोमें मुँह मुँह प्रचलित हो रही थीं,

कितनी ही गाथाओं (बेलेडमें) और गीतोंमें गाई जाती थीं। आज लोग आश्चर्यके साथ उन्हीं सब प्रसिद्ध वीर नेताओं और सिपाहियोंकी ओर टकटकी लगाये देख रहे थे। इतने दिन तक जिनके नाम ही सुनते आते थे, आज उनको अपनी आँखोंके सामने देखा।

सबकी नज़र सेनापति, मंत्री और रक्षकोंसे घिरे हुए वीरश्रेष्ठ शिवाजीके ऊपर जा अटकती थी। उनका शरीर छरहरा और मझोले क़दका था। पिछले सालकी बीमारीसे और महीने-भरकी प्रतिदिनकी यात्राके कारण वे और भी दुबले-पतले दिखाई देते थे, परन्तु उनके गोरे मुँहसे सर्वदा हँसी टपकती थी। उनकी तीखी चमकीली आँखे इधर उधर घूमती दिखाई पड़ती थीं। शहरके लोग आनन्दसे 'जय शिव, छत्रपतिकी जय' की ध्वनि करने लगे। महिलाएँ बरामदेसे सोने-चाँदीके फूल बरसाने लगीं, या आकर उनके मुखके चारों ओर आरती उतार स्वागत-गान गाने और आशीर्वादके वचन उच्चारण करने लगीं। शिवाजी भी जनतामें मोहरें और रुपये लुटाने लगे। उन्होने हरएक मुहल्लेके प्रधान मुखियाको खिलअत और अलंकार प्रदान किये।

शिवाजी और कुतुबशाहकी भेंट

इस प्रकार जुलूस कुतुबशाहके दाद-महल (न्याय-प्रासाद) के सामने पहुँचा। वहाँ और सब शान्त-शिष्ट भावसे रास्तेमे खड़े हो गये। केवल शिवाजी पाँच प्रधान कर्मचारियोंको साथ ले सीढ़ीसे दरबार-गृहमें पहुँचे। वहाँ कुतुबशाह उनकी प्रतीक्षामें थे। उन्होंने दरवाजे तक आकर शिवाजीको आलिंगन किया और हाथ पकड़कर

उन्हें अपनी बगलमें गद्दीपर बैठाया। मंत्री मादन्नाको फर्शपर बैठनेकी अनुमति दी गई। और सब खड़े ही रहे। अन्तःपुरकी बेगमें दोनों ओरकी पत्थरकी जालियोंके छिद्रोंसे बड़े आश्चर्यके साथ यह अपूर्व दृश्य देखने लगीं।

कुतुबशाहने तीन घंटेतक बातचीत की। उन्होंने शिवाजीके मुँहसे उनके जीवनकी आश्चर्य-जनक घटनाएँ और वीर-कीर्तियोंका लम्बा-चौड़ा बयान बड़े चावसे सुना। अन्तमें उन्होंने खुद अपने हाथसे शिवाजीको पान-इतर दे तथा मराठे मंत्रियो और सेनापतियोंको खिलअत, अलंकार, हाथी, घोड़े आदि उपहार देकर विदा किया। वे स्वयं शिवाजीके साथ साथ सीढ़ीके नीचे तक पहुँचानेके लिए आये। वहाँसे शिवाजी रास्तेमें रुपये लुटाते हुए अपने डेरेको लौट गये।

दूसरे दिन मादन्ना पंडितने शिवाजी और उनके प्रधान कर्मचारियोको निमंत्रण देकर भोजन कराया; अतिथियोंके लिए उनकी माताने स्वयं रसोई बनाई थी। भोजनके अन्तमे अनेक उपहार लेकर मराठे डेरेपर लौटे।

गोलकुंडा राज्यके साथ सन्धि

अब कामकी बातें शुरू हुईं। बहुत कुछ बहसके बाद शिवाजीके साथ सन्धिकी ये शर्तें तय हुई कि (१) कुतुबशाह प्रतिदिन पन्द्रह हज़ार रुपये नकद और अपने सेनापति मिर्ज़ा महम्मद अमीनके अधीन पाँच हज़ार सेना, कई तोपें और गोला-बारूद देकर शिवाजीको कर्णाटक जीतनेमें सहायता देंगे। शिवाजीने प्रतिज्ञा की कि (२) कर्णाटकका जो अंश उनके पिता शाहजीका था, उसको छोड़ समस्त जीता हुआ प्रदेश वे कुतुबशाहको देंगे। इसके सिवा उन्होंने कुतुबशाहके

सामने धर्मकी शपथ खाकर कहा कि (३) मुग़लोंका आक्रमण होने-पर वे गोलकुंडा राज्यकी रक्षा करनेके लिए फौरन आयँगे। उसके लिए (४) कुतुबशाहने शिवाजीको पूर्व स्वीकृतिके अनुसार पाँच लाख रुपयेका वार्षिक कर नियमित रूपसे देनेका आश्वासन दिया।

गुप्त रूपसे यह सब मन्त्रणाएँ और संधि-चर्चा हो रही थी, और प्रकटमें मराठोंका और नगरवासियोंका समय आनन्द-मंगल, तमाशे और भोजमें सुखसे बीत रहा था। शिवाजीने दूसरी बार कुतुब-शाहसे मुलाकात की। दोनों शासक प्रासादके बरामदेमें पास ही पास बैठे। समस्त मराठी फ़ौज कूच करके उनके सामनेसे निकाली गई, गोलकुण्डाके सुलतानने शिवाजीको नाना उपहार भेंट किये। शिवाजीके घोड़े तकको एक मणि और हीरेकी माला गलेमें पहनाई गई, क्योंकि वह भी उनके युद्ध-जयका साथी था।

एक दिन कुतुबशाहने पूछा, "आपके यहाँ कितने हाथी हैं?" शिवाजीने अपने हज़ारों मावले पैदलोंको दिखाकर कहा, "यही हमारे हाथी है।" तब सुलतानके एक बड़े भारी मत्त हाथीके साथ मावले सेनापति येसाजी कंकने तलवार लेकर युद्ध किया और उसको कुछ देर तक रोक कर अन्तमे एक चोटमें उसकी सूँड़ काट डाली। हाथी हारकर भाग गया।

इस प्रकार एक महीने बाद रुपये और चीज़-वस्तु लेकर शिवाजी मार्च महीनेके शुरूमें हैदराबादसे रवाना हुए। दक्षिणकी ओर जाकर शिवाजीने कृष्णा नदीके तीर 'निवृत्ति संगममें' (भवनाशी नदीके संगम-क्षेत्रमे) स्नान, पूजा, दानादि कर फौजको अनन्तपुर भेज दिया, और स्वयं थोड़ेसे रक्षक और कर्मचारियोंको ले शीघ्रतासे

श्रीशैलके दर्शनको चल दिये ।

शिवाजीका श्रीशैल-दर्शन

यह स्थान कुर्नूल शहरसे ७० मील पूर्वकी ओर है । यहाँ कृष्णा-नदीसे हज़ार फीटकी ऊँचाईपर एक समतल भूमिमें जनहीन वनके बीच मल्लिकार्जुन शिवजीका मन्दिर है । द्वादश ज्योतिर्लिङ्गोंमेंसे यह भी एक लिंग है । मन्दिर पचीस-छब्बीस फीट ऊँची दीवारसे घिरा हुआ है, और इसके चारों ओर खूब चौड़ा आँगन है । यह दीवार बड़े बड़े चौकोर पत्थरोंसे बनी है और इसमें हाथी, घोड़े, बाघ, शिकारी, योद्धा, योगी और रामायण तथा पुराण आदिके दृश्य बड़ी सुन्दरतासे खुदे हुए हैं । शिव-मन्दिरके चारों कोने बराबर हैं । विजयनगरके दिग्विजयी सम्राट् कृष्णदेव रायके धनसे मन्दिरके चारों ओरकी दीवार और तमाम छत सोनेके चमकदार पत्तरोंकी चादरसे मढ़ी गई थीं (१५१३ ई०) । इस वंशकी एक साम्राज्ञीने ऊपरसे नीचे कृष्णाके जलकी धारा तक हज़ार फीटसे भी अधिक लम्बे मार्गमें पत्थर जड़वा दिये थे । उसके नीचेके घाटका नाम था 'पाताल गंगा'; और कुछ दूर नीचे ही नदीके दूसरे तटपर 'नील गंगा' नामका दूसरा घाट था । ये दोनों प्रसिद्ध तीर्थ थे । शिव-मन्दिरके पास एक छोटा-सा दुर्गाजीका मन्दिर भी है ।

शिवाजीने श्रीशैलमें जाकर स्नान, पूजा, दान, लक्ष-ब्राह्मण-भोजन इत्यादि पुण्य-कार्य करते हुए वहींपर नवरात्र (अर्थात् चैत्र शुक्ल पक्षके प्रथम नौ दिन, २४ मार्चसे लेकर १ अप्रेल १६७७ ई० तक) बिताया । इस तीर्थ-स्थानके शान्त स्निग्ध सौन्दर्य, रम्य निर्जनता और धार्मिक भाव जगानेवाली स्वाभाविक शक्ति देख वे आनन्दमें मग्न हो

गये। यह स्थान उनको द्वितीय कैलास या शिवके स्वर्गके समान जान पड़ा। मरनेके लिए ऐसा उपयुक्त स्थान और समय फिर न आयेगा, ऐसा विचारकर शिवाजीने देवीकी मूर्तिके चरणोपर अपना सिर काटकर देह त्यागनेका निश्चय किया। कहते हैं कि भगवतीने स्वयं प्रकट हो शिवाजीकी उठाई हुई तलवारको छीनकर फेंक दिया और उन्हे रोककर कहा, "बचा, इस उपायसे तुझे मोक्ष नहीं मिलेगी। ऐसा काम मत करना। तेरे ऊपर अब भी बहुत बड़े बड़े कार्योंका भार है।" यह कहकर देवी अन्तर्द्धान हो गई और शिवाजी भी स्थिर हुए।

जिंजीपर अधिकार

अप्रेलकी ४ और ५ तारीखको अनन्तपुर लौटकर शिवाजी फौजके साथ चटपट मद्रासकी ओर चल पड़े। भारत-भरमें प्रसिद्ध तिरुपति पर्वतके मन्दिरको देख वे इस ओरकी समभूमिमें उतरे और मईके प्रथम सप्ताहमें मद्रास शहरसे सात मील पश्चिमकी ओर पेड्डा-प्रोलम नामक नगरमे जा पहुँचे। यहाँसे उनकी आगे चलनेवाली फ़ौज,—पाँच हज़ार घुड़सवार बड़ी तेज़ीसे जिंजीके क़िलेमें जा पहुँचे। उस क़िलेके मालिक नसीर महम्मदखाँने वार्षिक पचास हज़ार रुपयेकी आमदनीकी जागीर और कुछ नक़द रुपये मिलनेका वचन पाकर उसी दम (१२ वीं मईको) यह अजेय दुर्ग मराठोंके सुपुर्द कर दिया। शिवाजी फ़ौरन वहाँ जा पहुँचे, और जिंजीको अपने अधिकारमें करके उसकी दीवार, परिखा, बुर्ज इत्यादिको इतने मज़बूत कर दिये कि 'युरोपियन लोग भी वैसा करनेमें गर्व अनुभव करते'।

वहाँसे चलकर शिवाजीने २३ वीं मईको वेल्लूरदुर्ग जा घेरा। यह भी जिंजीकी ही तरह एक दुर्जेय गढ़ था। इसके शासनकर्ता थे आदिलशाहके विश्वासी कर्मचारी हब्शी अबदुल्लाखाँ। वे मराठोंकी तमाम गोलाबारी और आक्रमणकी उपेक्षा करते हुए बड़े पुरुषार्थके साथ चौदह महीने तक लड़ते रहे, किन्तु अन्तमें जब उन्होंने देखा कि उनके मालिकसे मदद मिलनेकी कोई आशा नहीं है और किलेके भीतर रक्षा करनेवाली फ़ौजके ५०० सैनिकोंमेंसे केवल एक सौ बचे हैं, तब अबदुल्लाने शिवाजीके लिए किला छोड़ दिया (२१ अगस्त, १६७८ ई०)। इसके बदलेमे उसको डेढ़ लाख रुपये नक़द और उतनी ही आमदनीकी जागीर देनेकी शर्त तय हुई।

मराठोंका कर्णाटक लूटना

शिवाजीकी सेनाने जल्दी जल्दी कूच कर बाढ़की तरह मद्रास प्रदेशकी समभूमिको ढक लिया। उसने चारों ओर जिधर जो कुछ मिला, हड़प लिया। उसका सामना करनेकी किसीकी भी हिम्मत न हुई। केवल दो-चार इने गिने किले पानीसे घिरे हुए द्वीपकी नाईं कुछ दिनके लिए स्वाधीनतासे खड़े रहे। पहले एक हज़ार मराठे घुड़सवार दो दिनके रास्तेपर आगे आगे चले। उनके पीछे बाकी फ़ौज लेकर शिवाजी खुद आये और सबके पीछे नौकर-चाकर तथा सिंहके पीछे पीछे सियारोंके झुंडकी तरह लूटके लोभसे आये हुए स्थानीय छोटे छोटे जमींदार, डाकुओंके सरदार और जंगली जातियोंके दलपति ('पलिगर') चले। रुपये वसूल करनेके लिए शिवाजीका नृशंसतापूर्ण बर्ताव तथा उनकी सेनाके विक्रम और कठोरताका समाचार आगे आगे चलता था। बड़े आदमी

जिधर रास्ता मिला उसी ओर भागने लगे, कोई वनमें और कोई स्त्री-पुत्र और धन-रत्न लेकर साहबोंके सुरक्षित बन्दरगाहोंमें आश्रय लेने लगे।

इधर शिवाजीको रुपयेकी बड़ी ज़रूरत थी। उन्होंने प्रतिज्ञा-भंग करके कुतुबशाही सरकारको जिंजीका किला न देकर उसे अपने ही क़ब्ज़ेमे रख लिया था जिससे गोलकुण्डासे पन्द्रह हज़ार रुपये रोज़की आमदनी बन्द हो गई। तब शिवाजीने इस प्रदेशके बड़े बड़े शहरोंको चिट्ठी भेजकर दस लाख रुपया कर्ज़ चाहा। इस ऋणके चुकानेकी आशा अवश्य ही न थी, परन्तु कर्ज़ देकर माँगनेकी हिम्मत भी किसमे थी? शिवाजीने इस देशके धनी लोगोंके नाम-धाम और उनकी जायदादकी एक तालिका तैयार की। उनसे चौथ वसूल करनेके लिए शिवाजीद्वारा भेजे हुए तहसीलदार देश-भरमे छा गये। बीस हज़ार ब्राह्मण इसी नौकरीके भरोसे उनके साथ आये थे। 'उन लोगोने बिलकुल निर्लज्ज हो लोगोंसे उनकी आखिरी कौड़ी तक छीन ली,—न्याय-विचार, दया इत्यादिकी कुछ भी परवाह न की।' (फ्रान्सोयो मार्टिनके मेमायर)। अँग्रेज़, फरासीसी और डच कोठीके महाजनोंने बार बार दूत और भेटे भेज भेज कर शिवाजीको खुश रखा।

शेरखाँ लोदीकी हार

जिंजी प्रदेशसे दक्षिणमे कावेरी नदीतक फैली हुई शेरखाँ लोदीकी बड़ी भारी जागीर थी। वह युद्ध-विद्यासे बिलकुल ही अनजान था और सब काम अपने चालाक द्रविड़ ब्राह्मण-मन्त्रियोकी सलाहसे ही किया करता था। इन लोगोने उसको समझा दिया था कि शिवाजीकी फ़ौज कुछ भी नहीं है; परन्तु उसके मित्र और मददगार

पाण्डीचेरीके शासनकर्त्ता फ्रान्सोयो मार्टिनने उससे कहा कि यह शत्रु बड़ा भयंकर है। चार हज़ार डरपोक और निकम्मे घुड़सवार तथा तीन-चार हज़ार प्यादोंकी फ़ौज लेकर शेरखाँ तिरुवड़ीमें (कड्डालोरसे १३ मील पश्चिममे) १७ वीं जूनसे मराठोका रास्ता रोके बैठा था। २३ वीं मईको शिवाजी जिंजीसे वेलूर पहुँचकर वहाँ एक महीने तक ठहरे और इस क़िलेको घेरनेका बन्दोबस्त ठीक-ठाक करके छः हज़ार घुड़सवारोंके साथ २६ वीं जूनको तिरुवड़ी आये। उनको देखते ही शेरखाँ अपनी फ़ौज सजाकर उनके ऊपर चढ़ाई करनेको आगे बढ़ा, परन्तु मराठे लोग अपनी जगहपर स्थिर होकर चुपचाप खड़े खड़े शत्रुकी राह देखते रहे। यह दृश्य देख शेरखाँका हृदय काँपने लगा। उसे बड़ी भारी आफ़त सामने दिखाई पड़ने लगी। उसने अपनी फ़ौजको लौटनेकी आज्ञा दे दी। इससे वे और भी डरे और छितरा गये। ठीक इसी मौक़ेपर शिवाजी घोड़ा दौड़ाकर उनके ऊपर दौड़ पड़े। शेरखाँकी सब सेना जान लेकर भागी और चारों ओर तितर-बितर हो गई।

शेरखाँ भागकर तिरुवड़ीके छोटे क़िलेमें घुस गया और भीतरसे दरवाज़ा बन्द करके बैठ रहा। कड्डालोरमे आश्रय लेनेकी इच्छासे वह रातको वहाँसे बाहर निकला। परन्तु मराठोको यह बात मालूम हो गई, और उन लोगोने उसका पीछा करके उसे अकालनायकके जंगलमें खदेड़ दिया। चन्द्रमा अस्त होनेपर अन्धकारकी आड़में जंगलसे बाहर शेरखाँ केवल एक सौ सवार ले ('२७ वीं जूनको) बाईस मील दूर भेलार नदीके उत्तर किनारेपर बोनगिरपट्टन नामक एक छोटेसे क़िलेमे घुसा। परन्तु उसके पाँच सौ घोड़े, दो हाथी, बीस ऊँट और

तम्बू, नगाड़ा, पताका तथा लदुवे बैल आदि सब सामान मराठोंने छीन लिया। इसके बाद कुछ ही दिनोंमें शेरखाँकी रियासतके बहुतसे शहर और किले शिवाजीने बेरोक-टोक ले लिये। अन्तमे ५ वीं जुलाईको खाँने सन्धि कर शिवाजीको अपना सारा देश दे डाला और अपने छुटकारेके लिए एक लाख रुपये देनेका वचन दिया। रुपये अदा न करने तक उसने अपने लड़के इब्राहीमखाँको ज़ामिनके तौरपर शिवाजीके अधीन रखा। शिवाजीने प्रतिज्ञा की कि वे शेरखाँको परिवारके साथ खुले आम इस किलेसे बाहर निकलने देंगे और कड्डालोरमे रखी हुई उसकी सम्पत्ति ले जाने देंगे। *

शिवाजीसे व्यङ्कोजीकी मुलाक़ात और झगड़ा

शिवाजीने यहाँसे और भी दक्षिणकी ओर कूच कर (कावेरीके मुहानेके पासकी सबसे उत्तरकी शाखा) कोलेरुण नदीके तीर तिरुमलवाड़ी नामक स्थानमें १२ वीं जुलाईको पहुँचकर वर्षाऋतु बितानेके लिए फ़ौजका डेरा डाला। व्यङ्कोजीकी राजधानी तंजोर शहर यहाँसे केवल दस मील दक्षिणकी ओर है। बीचमे केवल कोलेरुण नदी पड़ती है। यहीं बैठे बैठे मदुराके राजासे कर वसूल करनेकी कोशिश होने लगी। एक करोड़ रुपये माँगे गये, परन्तु अन्तमें तीस लाखपर मामला तय हुआ। यह भी तय हुआ कि इतने रुपये मिल जानेपर शिवाजी फिर मदुरापर आक्रमण न करेंगे।

इसी बीच शिवाजीने अपने सौतेले भाई व्यंकोजीको मुलाक़ातके लिए बुला भेजा। पहले उनके अनुरोधसे व्यंकोजीका मंत्री शिवाजीके साथ

---

* अन्तमें सन् १६७८ ई० के अप्रैल महीनेमे राज्य-रहित पूँजी-हीन शेरखाँने मदुरा-राज्यके द्वारपर आश्रय लिया।

सलाह करने आया। जब वह लौटने लगा तब शिवाजीके तीन मंत्री निमन्त्रणपत्र और साथ ही शिवाजीके अभय वचन लेकर उसके संग व्यंकोजीके यहाँ आये। व्यंकोजी दो हज़ार सवारोंके साथ आधी जुलाईके लगभग तिरुमलवाड़ी पहुँचे। शिवाजीने उनका स्वागत किया और कई दिनतक भोज और उपहारोंका आदान-प्रदान चलता रहा।

उसके बाद कामकी चर्चा चलने लगी। मरनेके समय शाहजी जो कुछ धन-सम्पत्ति और जागीर कर्णाटकमे छोड़ गये थे, वह सब व्यंकोजीके हाथ लगी थी। पिताके ज्येष्ठ पुत्रकी हैसियतसे शिवाजीने अपने बारह-आना हिस्सेका दावा किया, परन्तु व्यंकोजीने चौथाई हिस्सा लेकर सन्तोष करनेसे इनकार किया। तब शिवाजीने गुस्सेमे आकर उनको खूब धमकाया और नज़रबन्द कर दिया। व्यंकोजीने देखा कि सब धन-सम्पत्ति बिना सौंपे छुटकारा मिलना मुश्किल है; किन्तु वे भी तो शिवाजीके भाई ही थे। चुपचाप सब बन्दोबस्त ठीक कर एक दिन रातको शौचके बहाने नदीके किनारे वे एक निर्जन स्थानमें गये। वहाँ पाँच आदमी नावोंका बेड़ा लेकर तैयार थे। व्यंकोजी उसमे कूद पड़े और नदी पार होकर अपने राज्यमें (२३ जुलाईको) जा पहुँचे।

दूसरे दिन सबेरे खबर पानेपर शिवाजी बड़े बिगड़े और कहने लगे, "वह भागा ही क्यो? क्या हम उसे पकड़ने जाते थे? भागनेकी क्या बात थी? हम जितना चाहते थे अगर वह उतना न देना चाहता था, तो वैसा कह देता, हम उसे छोड़ देते। पर छोटा तो छोटा ही है, बुद्धि भी लड़केकी तरह दिखाई।" व्यंकोजीके मन्त्री भी मालिकके भागनेकी खबर पाकर भागनेवाले थे, पर वे पकड़कर शिवाजीके पास

लाये गये। कुछ दिन रोककर शिवाजीने उन लोगोंको छोड़ दिया, और खिलअत और इनाम देकर, तंजोर भेज दिया। उन्हें तकलीफ देनेसे शिवाजीको बदनामीके सिवा कुछ हाथ लगनेवाला न था। उन्होंने कोलेरुणके उत्तरमे शाहजीकी सम्पूर्ण जागीरपर कब्ज़ा कर लिया।

शिवाजीके शिविरका वर्णन

फरासीसी दूत जारमाय्याने तिरुमलवाड़ीमें शिवाजीके शिविरको देखकर उसका वर्णन इस प्रकार किया है—

"उनके शिविरमे किसी प्रकारकी धूमधाम नहीं है। भारी-भरकम चीज़ों या स्त्रियोकी झंझट भी नहीं है। सारे शिविरमे केवल दो तम्बू है, वह भी छोटे और साधारण मोटे कपड़ेके बने हुए: एकमें शिवाजी रहते है और दूसरेमे उनके पेशवा। मराठे सवारोका मासिक वेतन दस रुपया है। उनको घोड़े और साईस राजाकी ओरसे ही मिलते हैं। दो दो सिपाहियोमे तीन तीन घोड़े रखे जाते है, इस लिए वे खूब तेज़ीसे चल सकते है। शिवाजी गुप्तचरोको खुले हाथ रुपये देते है, और वे भी उनको सच्चे समाचार देकर उनकी विजयमें विशेष सहायता करते है।"

व्यंकोजीको लौटा लानेकी आशा न देख शिवाजी २७ जुलाईको तिरुमलवाड़ी छोड़ फिर उत्तरकी ओर आये। वलिकन्तपुरम्से चल कर रास्तेमें चिदम्बरम् और वृद्धाचलममे (दो प्रसिद्ध तीर्थ) देव-दर्शन करके धीरे धीरे २ अक्टूबरको वे मद्राससे दो दिनके रास्तेकी दूरीपर आ पहुँचे। इसी बीचमें आरणि आदि किले भी उनके हाथमे आ गये।

कर्णाटकमें नये राज्यका बन्दोबस्त

अब उनको खबर मिली कि एक महीने पहले औरंगजेबके हुक्मसे

मुग़ल सूबेदारने बीजापुरके साथ मिलकर गोलकुण्डापर आक्रमण कर दिया है, क्योकि कुतुबशाहने शिवाजीके समान विद्रोहीके साथ मैत्री की थी। इधर शिवाजीको भी अपना राज्य छोड़े दस महीने हो गये थे, और वहाँका काम-काज भी बहुत अच्छी तरहसे नहीं चल रहा था। इसलिए उन्होने अब अपने देशको लौटनेका ही निश्चय किया।

नवम्बरके प्रथम सप्ताहमें चार हज़ार सवारोंको साथ ले वे कर्णाटककी समर-भूमि छोड़ मैसूरकी अधित्यकाके ऊपर चढ़े और वहाँ अपने पिताकी जागीरके सब महाल अधिकार करके महाराष्ट्रको लौट आये। उनके बहुतसे सिपाही फिलहाल कर्णाटकमें ही रह गये; क्योंकि उस ओर उन्होंने जो राज्य जीता था वह बहुत बड़ा और धनशाली था। यह प्रदेश लम्बाईमें १८० मील और चौड़ाईमें १२० मील था। उसमे ८६ क़िले थे। उसकी सालाना मालगुज़ारी ४६ लाख रुपयेसे भी अधिक थी। इस नये राज्यमें जिंजी और वेलूरके ज़िले भी आते थे। इसकी राजधानी थी जिंजीका क़िला। शाहजीके दासी-पुत्र शान्ताजीको यहाँका शासनकर्त्ता, रघुनाथ हनुमन्तेको दीवान और हम्बीरराव मोहितेको सेनापति नियुक्त कर शिवाजी लौट आये। रंगोनारायण मैसूरकी अधित्यकाके विजित महालोंके हाकिम हुए।

इसी बीचमें व्यंकोजी कर्णाटकमें पिताकी जागीरके उद्धारके लिए चारो ओर षड्यन्त्र रचने लगे; पर कुछ कर न सके। अन्तमे १६७७ ई० की १६ नवम्बरको वे कोलेरुण पार होकर चौदह हज़ार सेनाके साथ शान्ताजीकी बारह हज़ार सेनापर टूट पड़े। सारे दिन लड़नेके बाद शान्ताजी हार मानकर एक कोस पीछे हटे। परन्तु रातको जब व्यंकोजीकी विजयी सेना थककर अपने खेमोंमें घोड़ोंके ज़ीन खोलकर

सुस्ता रही थी तब शान्ताजीने अपनी हारी हुई फौजको फिर इकट्ठा किया, और उसमें नया जोश भरकर अच्छे घोड़ोपर चढ़ा एक विकट रास्तेसे ले जाकर अकस्मात् व्यंकोजीके शिविरपर धावा कर दिया। व्यंकोजीका दल आत्म-रक्षा न कर सका। बहुतसे मारे गये और बाक़ी सब नदी पारकर तंजोर भाग गये। तीन प्रधान फौजी अफ़सर पकड़े गये। शत्रुके एक हज़ार घोड़े, तम्बू और अनेकों चीज़ें शान्ताजीके हाथ लगीं।

व्यंकोजीके साथ आख़िरी निपटारा

दोनो भाइयोंमें कुछ दिन तक और भी छोटी-मोटी लड़ाइयाँ होती रहीं। देशकी अवस्था दिनपर दिन बिगड़ती ही गई। अन्तमें शिवाजीने देखा कि अपनी इतनी फ़ौज और बड़े बड़े सेनापतियोंको कर्णाटकमें अधिक दिन तक अटका रखनेसे महाराष्ट्रकी रक्षा कठिन हो जायगी। तब उन्होने व्यंकोजीके साथ सन्धि कर ली। व्यंकोजीने उनको छः लाख रुपये दिये। उसके बदलेमें शिवाजीने कर्णाटकके उत्तर जिंजी और वेलूर-प्रदेश अपने कब्ज़ेमे रखकर बाक़ी सब देश (कोलेरुणके उत्तरके कई महाल और उसके दक्षिणमे तंजोरका सम्पूर्ण राज्य) भाईको दे दिया। कुछ दिन बाद मैसूरकी जागीर भी व्यंकोजीको मिली। इस प्रकार शान्ति स्थापित हो जानेपर हम्बीरराव शिवाजीकी बाक़ी फ़ौज लेकर देश लौट आये। कर्णाटककी रक्षाके लिए रघुनाथ हनुमन्तेने वहींके लोगोंकी दस हज़ारकी एक फ़ौज बनाई।

कर्णाटकसे जो धन-रत्न शिवाजीको मिला वह कल्पनातीत था।

दसवाँ अध्याय

शिवाजीकी सामुद्रिक शक्ति

राजापुरके अँग्रेज़ोंकी शिवाजीके साथ शत्रुता

सन् १६५९ ई०के अन्तमें जब शिवाजी बीजापुर राज्यमे बहुतसे स्थान जीतनेमें लगे थे, उस समय अँग्रेज़ोंकी प्रधान कोठी सूरतमें थी। सूरत मुग़ल-साम्राज्यमे था। बम्बई-द्वीप तब पुर्तगालियोके हाथमे था। इसके आठ वर्ष बाद अँग्रेज़ोके बादशाह द्वितीय चार्ल्सको पुर्तुगालके बादशाहने विवाहमे दहेज-स्वरूप यह द्वीप दिया। कई वर्ष बाद अँग्रेज़ोंका प्रधान दफ्तर सूरतसे यहाँ लाया गया। सूरतके अतिरिक्त राजापुर (रत्नागिरि जिलेका बन्दर), कारवार (गोआके दक्षिणका बन्दर), कनाड़ाकी अधित्यकाका हुबली और खानदेश-प्रदेशका धारणगाँव इत्यादि कतिपय बड़े व्यापारिक केन्द्रोमे अंग्रेज़ोकी कोठियाँ और कपड़े तथा मिरिचकी आढ़तें थीं।

सन् १६६० ई० के जनवरीके शुरूमे ही शिवाजीकी सेनाने कुछ दिनके लिए राजापुर बन्दरपर कब्ज़ा कर लिया। वहाँकी अँग्रेज़ी कोठीके मालिक हेनरी रेंव्हिग्टनने बीजापुरी अफ़सरोंके मालको कम्पनीका माल बनाकर मराठोंको उसे लेनेसे रोका। इस घटनासे शिवाजीके साथ अँग्रेज़ोंका झगड़ा हुआ, परन्तु वह जल्दी ही निपट गया।

इसके कुछ महीने बाद जब सिद्दी जौहरने शिवाजीको पनहाला क़िलेमें घेर लिया, तब उसी रेंव्हिग्टन और दो-चार अँग्रेजोने कुछ छोटी

तोपे (मार्टर) और एक खास प्रकारके गोले (ग्रेनेड) जौहरको बेचनेके लिए निकाले और वहाँ जाकर उनकी शक्ति दिखानेके लिए शिवाजीके क़िलेपर कुछ गोले (ग्रेनेड) छोड़े। शिवाजीने देखा कि अँग्रेज़ी झंडेके नीचे गोरोंका एक दल ये गोले छोड़ रहा है।

राजापुरकी अँग्रेज़ी कोठीकी लूट

इस अकारण शत्रुताकी सज़ा विदेशी बनियोंको दूसरे साल मिली। सन् १६६१ ई० के मार्च महीनेमें शिवाजीने रत्नागिरि ज़िलेपर कब्ज़ा कर लिया, और फिर राजापुर पहुँचकर अँग्रेज़ी कोठीवालोंको क़ैद कर लिया। कोठी लूटने और जलाकर भस्म करनेके बाद रुपयेकी तलाशमे ज़मीन खोदी गई। इसका नतीजा यह हुआ कि राजापुरमें अँग्रेज़ोका कारबार नष्ट हो गया। मराठोने यह कहकर कि 'बहुत रुपये लिए बिना न छोड़ेगे' उस समयके चार अँग्रेज़ क़ैदियोंको दो वर्ष तक अपने पहाड़ी क़िलोंमें रोक रखा।

कम्पनीके मालिकोंने कहा कि जब रेव्हिंगटन-प्रभृति कर्मचारियोंने अपनी स्वार्थ-सिद्धिके लिए शिवाजीके साथ शत्रुता कर स्वयं आफ़त मोल ली है, तब रुपये देकर उन्हें छुड़ानेकी कम्पनीको कोई आवश्य-कता नहीं। अन्तमे बहुत कष्ट झेलनेके बाद उन लोगोंने सन् १६६३ ई० की फरवरीमें यों ही छुटकारा पाया।

उसके बाद कम्पनीने राजापुरकी कोठी लूटने और ध्वंस करनेकी क्षतिपूर्तिका दावा किया। शिवाजीने इस लूटपाटमें अपनी जिम्मेदारी अस्वीकार कर दी, अथवा बहुत थोड़े रुपये देने चाहे। इस बातपर बीस वर्षसे भी अधिक समय तक वाद-विवाद और लिखा-पढ़ी चलती रही। अँग्रेज़ोंने आश्चर्यजनक सहनशीलता और ज़िदका परिचय दिया,

और बहुत दिनों तक अपना दावा न छोड़ा। शिवाजीके पास वे बार बार दूत * भेजते रहे। बादमें जब मराठोंने हुबली, धारणगाँव आदि स्थानोंकी अँग्रेज़ी कोठियाँ भी लूटीं, तब तो उनकी भी माँग पेश की गई। यह झगड़ा शिवाजीके जीते जी नहीं निपटा, परन्तु इसके लिए दोनों दलोमें लड़ाई भी न हुई, क्योंकि उन दिनों अँग्रेज़ और शिवाजी दोनो ही बहुत-सी बातोंमें एक दूसरेके मुखापेक्षी थे। बम्बई टापूमें तरकारी, चावल, जलानेकी लकड़ी, मांस आदि कुछ भी नहीं होता था। ये सब चीज़े उस पार शिवाजीके देशसे न आनेपर बम्बईके लोग भूखो मर जाते, और शिवाजीके राज्यमे नमक, मोम-बत्ती, बारीक रेशमी कपड़े (बनात और दुलाई), तोप, बारूद आदि चीज़े अँग्रेज़ वणिक ही लाकर दे सकते थे। इसके सिवा अँग्रेज़ोके व्यापारसे शिवाजीकी प्रजाको और हाटबाज़ारके महसूलसे सरकारको बहुत आमदनी होती थी; इसीसे यह झगड़ा कभी युद्धमें परिणत न हुआ।

राजपुर-कोठीकी हानिका दावा

अँग्रेज़ बनियोंको अच्छी तरह मालूम था कि शिवाजीको चिढ़ानेसे उनके विस्तृत राज्यमें उनकी खरीद-बिक्री एकबारगी ही बन्द हो जायगी, और उन लोगोंमें इतनी शक्ति भी नहीं थी कि वे युद्ध करके शिवाजीको अपने वशमें करते या उनसे अपना हरजाना वसूल करते। दूसरी ओर उनको यह भी डर था कि यदि वे शिवाजीको तोप और बारूद आदि न बेचेंगे, तो शिवाजी चिढ़कर उनका व्यापार बन्द कर देंगे। इसके अलावा एक और भी बड़ी आफ़त यह थी कि

* उस्टिक (१६७२ ई०), निकोलस (१६७३ ई०), हेनरी आक्सिण्डेन (१६७५ ई०)।

मराठा-राजाको इस प्रकारकी मदद देनेकी बात यदि प्रकट हो गई, तो मुग़ल बादशाह गुस्सा होकर अँग्रेज़ी कोठीको अपने राज्यसे हटा देंगे और अँग्रेज़ व्यापारियोंको कैद कर लेंगे। फरासीसियोंने इस मौकेपर चुपके चुपके कुछ छोटी छोटी तोपें और शीशे शिवाजीके हाथ बेचे भी।

होशियार अँग्रेज़ मालिकोंने अपने स्थानीय नौकरोंको लिख भेजा, "इन दोनों संकटोंके बीच बड़ी सावधानीसे चलना जिसमें कोई भी पक्ष न चिढ़े। शिवाजीके हाथ तोप-बारूद मत बेचना और खुल्लमखुल्ला बेचनेसे इनकार भी मत करना। खुलासा जवाब न देकर जितने अधिक दिन काटे जायँ, काटना। शिवाजीको यह लोभ दिखाकर कि हम लोग अपने जहाज़ और तोपें ले जाकर हबशी-राजधानी दण्डा-राजपुरी जीतनेके लिए उनकी मदद कर सकते हैं, बातचीत छेड़ना। इस प्रकार उनको बहुत दिन तक अपने हाथमें रखना।"

शिवाजी भी जो रुपये एक बार हाथ लगे, उनको वापस देनेको राज़ी न थे। इस हालतमें राजापुर कोठीकी क्षतिपूर्तिकी बातका निपटारा होना असम्भव था। अंग्रेज़ोंने एक लाखका दावा किया था। शिवाजीके मन्त्रियोंने पहले हानिका हिसाब बीस हज़ार लगाया था। बादमें अट्ठाईस हजारपर आये। अन्तमें चालीस हज़ार तक पहुँचे; परन्तु वह भी नक़द देनेवाले न थे। इसमेंसे ३२ हज़ार रुपयोंमे कुछ नक़द और कुछ व्यापारका माल देकर चुकता किया जायगा। बाक़ी आठ हज़ार रुपये तीनसे लेकर पाँच वर्ष तक राजापुर-बन्दरमें अँग्रेज़ोंकी आनेवाली चीज़ोंके ऊपर महसूल माफ़ कर पूरे किये जायँगे।

शिवाजीके राज्याभिषेकके दरबारमें (जून १६७४ ई० मे) उपस्थित होकर अँग्रेज दूत हेनरी आक्सिएडेनने निम्नलिखित तीन शर्तें तय करके एक सन्धिपत्रपर दस्तखत करा लिये:—

(१) क्षतिपूर्तिके लिए शिवाजी अँग्रेजोंको चालीस हजार रुपये देगे । इसका एक-तिहाई हिस्सा नकद और माल (सुपारी) के रूपमें शिवाजीके जीवन-कालमे चुकता किया जायगा ।

(२) शिवाजी अपने राज्यकी अँग्रेजी कोठियोकी रक्षा करेगे और तदनुसार सन् १६७५ ई० में अँग्रेजोंने राजापुरमें फिर अपनी कोठी खोली ।

(३) उनके राज्यके समुद्र-तटपर यदि तूफानमे कोई जहाज आकर जमीनपर अचल हो जाय अथवा टूटे हुए जहाजका माल आवे, तो वे उसे खुद जब्त न करके जहाजके मालिकको लौटा देंगे।

परन्तु शिवाजी अँग्रेजोंकी चौथी प्रार्थना यानी उनके राज्यमें अँग्रेजोके सिक्के चलानेकी बातपर किसी प्रकार भी राजी न हुए ।

शिवाजीके साथ अँग्रेज बनियोंकी भेंट

राजापुरकी नई कोठीके साहबोंने सन् १६७४ ई०में शिवाजीके साथ मुलाकात की जिसका सुन्दर वर्णन इस प्रकार लिखा मिलता है—

"२२ मार्चको दोपहरके समय राजा आये । उनके साथमें बहुतसे सवार और डेढ़ सौ पालकियाँ थीं । उनके आनेका समाचार मिलते ही हम लोग तम्बूसे बाहर निकले और थोड़ी ही दूरपर उनसे मिले । हम लोगोंको देख उन्होने पालकी रुकवाई, और नजदीक बुलाकर कहा कि हमारे साथ मुलाकात करने आनेसे तुम लोगोपर हम बहुत खुश हुए, परन्तु इस समयकी भीषण गर्मीमें तुम्हें खड़ा

न रखकर शामको बुलायेंगे ।

*　　*　　*　　*

" २३ मार्चको राजा फिर आये और पालकी रुकवाकर हम लोगोंको अपने पास बुलाया । हम लोगोंके पास आनेपर हाथसे इशारा करके उन्होंने और भी पास आनेके लिए कहा । जब हम उनके पास गये तो उन्होने अचरजके मारे हमारी जुल्फ़ोंको टटोल इधर उधर हिलाया और बहुत-सी बातें पूछीं । जवाबमें उन्होंने कहा कि हम राजापुरकी तुम्हारी सब असुविधायें दूर कर देंगे और तुम्हारे सब उचित अनुरोधोंको मान लेंगे ।

*　　*　　*　　*

" दूसरे दिन फिर हम लोगोको बुलाया गया । दो घंटे तक बातचीत हो चुकनेपर हम लोगोंकी दरख़ास्तका मराठी अनुवाद उनको सुनाया गया । उन्होने हम लोगोकी सब प्रार्थनाएँ स्वीकार कर फ़र्मान देनेका वादा किया । "

जंजीराके हबशी

भारतके पश्चिमी किनारेपर बम्बईसे ४५ मील दक्षिणमें जंजीरा नामक पत्थरका एक छोटा-सा द्वीप है । उसके आध मील पूर्वकी ओर समुद्रकी एक खाड़ी कोलाबा जिलेके भीतर घुस गई है । इसी खाड़ीके मुहानेमें उत्तरी किनारेपर दंडा नामक शहर है । इसके तीन ओर समुद्रका जल है । दंडासे दो मील उत्तर-पश्चिमकी ओर राजपुरी नामक और एक नगर है । (राजापुर-बन्दर यहाँसे बहुत दूर दक्षिणमें है) । यह सब प्रदेश और इसके आसपासकी ज़मीनको मिलाकर एक छोटा राज्य है, जिसका मालिक हबशी-जातिका है । यह जाति

अफ्रिकाके अबिसीनिया प्रदेशसे आई थी। हबशियोंका रंग अत्यन्त काला, होंठ मोटे और बाल घूँघरवाले होते हैं।

वहाँ हबशियोंके केवल दो-चार घर थे। उनको भारतके असंख्य लोगोंके साथ रहकर उनपर अपनी प्रभुता जमानी थी। वे सब लड़ाई करने और जहाज़ चलानेके काममे बड़े होशियार थे, और इसके सिवाय दूसरा कोई काम नहीं करते थे। हरएक अपनेको एक छोटा-मोटा रईस समझता था, और राजपुत्रकी शान और घमंडसे रहता था। उनका दलपति बापके उत्तराधिकारीके क्रमसे नहीं होता था। अपनी जातिके सबसे बुद्धिमान् और कामकाजमें होशियार वीरको चुनकर वे उसे नेता स्वीकार करते थे और उसकी आज्ञा मानते थे। उस समय भारतवर्षमे हबशी-जाति अपनी बहादुरी, परिश्रम, कष्ट सहन करनेकी शक्ति, लड़ाई और राज-काजमें एकसी बुद्धिमानी तथा स्वामि-भक्तिके लिए प्रसिद्ध थी; और यह जाति मनकी स्थिरता, लोगोंको संचालन करनेकी शक्ति और जल-युद्धके परिपक्व ज्ञानमे यूरोपियनोंके सिवा और सब जातियोंसे श्रेष्ठ थी। ये सिद्दी (=सैयदी या उच्च वंशमें पैदा होनेवाले) कहलाते थे।

शिवाजी और सिद्दियोंमें झगड़ेका कारण

जंजीराके पूरबकी समुद्र-तटकी भूमि कोलाबा ज़िलेमें पड़ती है। यहाँ हबशियोंके खाने-पीनेका अन्नादि पैदा होता था; राजस्व जमा होता था और अनुचर लोग भी यहीं बसते थे। शिवाजीने उत्तर-कोकणमे कल्याण,—यानी वर्तमान थाना ज़िलेपर कब्ज़ा कर लिया। उसके बाद ही कोलाबा ज़िलेमें प्रवेश करनेपर हबशियोंके साथ उनकी मुठभेड़ हुई। ऐसा होना अनिवार्य था, क्योंकि इस समुद्र-तटकी ज़मीनको खो बैठने

पर हबशी लोग भोजन बिना भूखों मरते, इसलिए वे दंडा-राजपुरीको अपने हाथमे रखनेके लिए दिलो-जानसे लड़ने लगे। दूसरी ओर शिवाजी यह भी जानते थे कि तटभूमि और जंजीरेके टापूसे हबशियोको भगाये अथवा उन्हें वशमें किये बिना कोकण प्रदेशका उनका स्थलभाग भी विभक्त और अरक्षित ही रहेगा। ये सब शत्रु जहाज़मे चढ़ जिधर चाहे उधर उतरकर गाँव लूटेगे और प्रजाको दास बनाकर ले जायँगे। 'जैसे घरका चूहा, सिद्दी लोग भी ठीक उसी प्रकारके बैरी है।' (सभासद)। खासकर वे हिन्दू प्रजापर अत्यन्त भीषण अत्याचार करते थे। ब्राह्मणोको पकड़कर उनसे मेहतरका काम करवाते और छोटे-मोटे लोगोके तो नाक-कान तक काट लेते थे। साथ ही वे इस टापू और क़िलेके आश्रयमें अपने जहाज़ रखकर, समुद्रमें जब तब मराठोंके जहाज़ पकड़ सकते थे।

सिद्दियोंके साथ मराठोंका युद्ध

इसलिए जंजीरा द्वीपपर अधिकार कर पश्चिमी समुद्र-तटसे सिद्दियोंके प्रभावको बिलकुल नष्ट कर डालना शिवाजीके जीवनका व्रत हो गया। इस काममे वे असंख्य फौज लेकर पानीकी तरह रुपये खर्च करने लगे।

परन्तु मराठोके पास न तो अच्छी तोपे थीं और न तोप चलानेकी सहूलियत ही। उनके जहाज़ हबशियोके जहाज़ोके सामने कुछ भी नहीं थे। इन दो शक्तियोकी लड़ाई बंगालमे लड़कोको भुलावा देनेवाली 'सुन्दरवनके शेर और मगर'की कथाकी तरह हुई। शिवाजीकी फौज अगणित और स्थल-युद्धमें अजेय थी। उधर हबशी लोग जल-युद्धमें मोर्चा लेनेमें उतने ही श्रेष्ठ थे, परन्तु उनकी स्थल-

सेना एक हज़ारसे ज़्यादा न थी।

सन् १६५८ ई० से कोलाबा ज़िलेमें लगातार अधिकाधिक फौज भेजकर शिवाजी हबशी राज्यके स्थलभागपर जितना हो सका, उतना अधिकार जमाने लगे। लड़ाई बहुत दिन तक चली। कभी यह दल जीतता, तो कभी वह दल। अन्तमें शिवाजीने दंडा-दुर्ग छीन लिया और केवल टापू ही सिद्दियोंके हाथमे रह गया। उन लोगोंने तट-प्रदेशके समस्त क़िले और शहर गँवा दिये, परन्तु 'पेट भरनेके लिए' वे जहाज़ोंके द्वारा रत्नागिरी ज़िलेमें जा-जाकर गाँव लूटने लगे। हर साल वर्षाऋतुके बाद शिवाजी कई महीनों तक समुद्र-तटसे जंजीरा-द्वीप पर गोले छोड़ते थे, परन्तु उससे कुछ भी लाभ न होता था। अन्तमे शिवाजीने सोचा कि जब तक लड़ाईके जहाज़ अपने खुदके न होंगे, तब तक उनके लिए अपनी इज्ज़त और राज्य कायम रखना मुश्किल होगा, इसलिए नौ-बल संगठित करनेकी आवश्यकता उन्हे मालूम हुई।

शिवाजीका नौ-बल

शिवाजीके जंगी जहाज़ों और सामुद्रिक प्रभावके विस्तारका पूरा-पूरा हाल मालूम किया जा सकता है। सन् १६५९ ई० में कल्याणपर अधिकार करनेके बाद उसके नीचे (बम्बईसे २४ मील पूरबकी ओर) समुद्रकी खाड़ीमे शिवाजीने पहला जहाज़ तैयार कराकर उसे समुद्रमें प्रवेश कराया। इस नई शक्तिकी जागृतिसे पुर्तगीज़ लोगोंके मनमे भय और ईर्ष्याका संचार हुआ। बादमे कोंकणके तटपर जैसे जैसे जल्दी जल्दी उनका राज्य फैलने लगा, वैसे वैसे उसके साथ साथ जहाज़ बनाना, नौ-सेना भर्ती करना, किनारेपर जहाज़ोंके अड्डेके

लिए जल-दुर्ग और बन्दर बनाने आदिका भी काम बढ़ता गया। '‌राजाने समुद्रकी पीठपर भी ज़ीन चढ़ाई।' (सभासद)।

सब मिलाकर शिवाजीके चार सौ जहाज़ थे। उनमे छोटे-बड़े सब किस्मके जहाज़ थे; जैसे गुराब (तोपवाला, चौरस और ऊँचे फर्शका युद्ध-जहाज़), गलवत (जल्दी चलनेवाला पतला लड़ाईका जहाज़), ताण्डे, शिबाड़ और मचवा (माल ढोनेवाले जहाज़), पगार इत्यादि। उनके अधिकांश जहाज़ छोटे थे। वे भारी धातुकी चादरोंसे मढ़े हुए न होते थे, किनारा छोड़कर समुद्रमें बहुत दूर जाकर देर तक ठहर नहीं सकते थे और तोपके गोलेके पड़ते ही डूब जाते थे। अँग्रेज़ी कोठीके अध्यक्षने इनके बारेमे लिखा है— "ये सब जहाज़ निकम्मे हैं। अँग्रेज़ोंका एक अच्छा जंगी जहाज़ ऐसे सौ जहाज़ोंको मज़ेमें डुबा दे सकता है।" यानी इनको "मच्छर जहाज़ कहा जाना चाहिए। सूरत, बम्बई और गोआको छोड़ पश्चिमी किनारेके प्रायः सब बन्दरोंमें पानीकी गहराई इतनी कम है कि बड़े बड़े जहाज़ न तो वहाँ जा सकते है और न आँधीके समय आश्रय ही ले सकते है, इसीलिए पुराने ज़मानेसे ही मलाबारके समुद्र-तटोंकी व्यापारिक वस्तुएँ छोटी और छिछली (चिपटे पेंदेवाली) नावोंमें ही इधरसे उधर भेजी जाती थीं। ये सब नावें तूफ़ान देखते ही किनारेके पास, जहाँ मन चाहा वहाँ, छोटी खाड़ी या नदीमे भागकर अपना बचाव कर लेती थीं। इस देशके लड़ाईके जहाज़ भी उसी ढंगसे बनाये जाते थे। ये सब छोटे ही होते थे। इनमें बड़ी बड़ी अथवा बहुत-सी तोपें वहन करनेकी शक्ति न थी। तूफानके समय समुद्रमें टिकनेके लिए अथवा ज़मीनका किनारा छोड़ दूर

जाकर बहुत दिनतक एक साथ बेड़ेमें चलनेके लिए ये उपयुक्त नहीं थे। संख्याके ज़ोरसे ही लड़ाई जीतनेकी वे कोशिश करते थे, तोपके गोलोके ज़ोरसे नहीं।" शिवाजीने भी अपने जहाज़ इसी पुराने ढाँचेके तैयार कराये, और जल-युद्धकी इस पुरानी शैलीमे कोई परिवर्तन या उन्नति नहीं की। इसीसे अंग्रेज़ोकी बात तो दूर रही वे सिद्दियोंसे भी सहजहीमे हार जाते रहे।

शिवाजीके नाविक और नौ-सेनापति

शिवाजीका नौ-बल दो हिस्सोमें बॉटा गया था। दरिया सारंग (मुसलमान) और मयानायक (हिन्दू) उपाधिधारी दो नौ-सेनापति (एडमिरल) इनके नेता थे। रत्नागिरी ज़िलेमे समुद्रके किनारेके गाँवोमे भंडारी खेतिहर मछुवे बहुत रहते हैं। वे समुद्रमें रहनेमे, जहाज़ चलानेमे और समुद्री लड़ाई लड़नेमे पुश्त दर पुश्तसे अभ्यस्त थे। पहले ये समुद्री डकैती करते थे। इनका शरीर पुष्ट, बलिष्ठ और कसरत करनेसे गठीला था। स्थल-युद्धमे जिस प्रकार मराठे और कुनबी जाति बड़ी होशियार थी, ठीक उसी प्रकार जल-युद्धमें ये लोग कुशल थे। इन भंडारी तथा कोली, संघर, बघेर आदि दूसरी कई नीच हिन्दू जातियों और आंग्रे घरानेसे शिवाजीको बहुत अच्छे जल-सैनिक और नाविक मिले।

बादमें (सन् १६७७ ई०में) घरेलू झगड़ोके कारण सिद्दी सम्बल और उसके भतीजे सिद्दी मिसरी इन दोनों हबशी सरदारोंने शिवाजीके अधीन नौकरी कर ली। उनके दूसरे मुसलमान नौ-सेनापतिका नाम दौलतखाँ था, परन्तु जंजीरेके सिद्दियोंके जहाज़ मराठोंके जहाज़ोंकी अपेक्षा अधिक मज़बूत, सुरक्षित, अच्छी तोपों और चालाक

सैनिकोंसे पूर्ण थे। इसीलिए लड़ाईमे सिद्दियोकी ही जीत होती रही। मराठे अकसर अपने बहुतसे आदमियो और नावोंको खोकर भाग निकलते थे।

शिवाजीके अनेको जहाज़, उनका तथा उनकी प्रजाका माल लेकर अरबके मोचा और फारसके बसरा इत्यादि बन्दरोमे जा-जाकर विभिन्न देशोसे व्यापार करने लगे। दक्षिणके आठ-दस बन्दरगाह उनके इन व्यापारी जहाज़ोके केन्द्र और विश्राम-स्थान थे। उनकी युद्धकी नावें जब सम्भव होता तब समुद्रमे वैरियोके अरक्षित जहाज़ों और समुद्र-तटपर अन्यान्य राजाओके बन्दरगाहोको लूटती थीं। बादशाही प्रजाको सूरतसे मक्केकी हजको ले जानेवाले जहाज़ोपर भी शिवाजीके जहाज़ अकसर आक्रमण करते थे, और कभी कभी उन्हे पकड़ भी ले जाते थे। अन्तमे औरगज़ेबने बहुत अधिक वेतन देकर इन सब जहाज़ोंकी रक्षा करने तथा पच्छिमी समुद्रमे पहरा देकर शिवाजीकी जल-शक्तिको दमन करनेका भार सिद्दियोके ऊपर रखा।

जंजीरामें विप्लव और सिद्दी कासिमका दंडा जीतना

शिवाजी जितने दिन जीवित रहे, प्रायः हरसाल जंजीरेके ऊपर चढ़ाई करते रहे। इस लगातार निष्फल चेष्टाका विस्तार-पूर्वक वर्णन करनेकी आवश्यकता नहीं है। सन् १६६९–७० ई०मे उन्होने लगातार घमासान युद्ध करके सिद्दी-सरदार फतहखाँको परेशान कर डाला। अन्न न मिलनेसे जंजीराका प्रायः पतन हो गया होता। ऐसी स्थितिमे भी सिद्दियोको अपने शासक आदिलशाहसे किसी प्रकारकी मददकी उम्मीद न थी, अतएव फतहखाँने रुपये और जागीर लेकर यह द्वीप शिवाजीको दे देना स्वीकार कर लिया; परन्तु अन्य तीन सिद्दी-

सरदारोंने उसको क़ैद करके जंजीरा और सिद्दियोंके जहाज़ोंका अधिकार अपने हाथमें ले लिया। मुग़ल बादशाहने सिद्दी-सरदारको पुश्त दर पुश्तके लिए ' याकूतखाँ ' की पदवी और तीन लाख रुपये वार्षिक वेतन देकर उसे अपना नौकर बना लिया और समुद्रमे पहरा देनेका काम उसे सौपा। सिद्दी क़ासिम जंजीरेके और सिद्दी ख़ैरियत स्थलभूमिके हाकिम नियत हुए, और सिद्दी सम्बल जहाज़ोका नेता (एडमिरल या अमीर अल-बहर) हुआ।

सिद्दी क़ासिम बड़ा चतुर, साहसी और परिश्रमी आदमी था। उसने सुशासन और काम-काजमे सर्वदा तेज़ नज़र रखी, लड़ाईके जहाज़ो और गोला बारूदको बढ़ाया, और बहुतेरे मराठे जहाज़ोको पकड़ पकड़ कर धन वसूल किया। अन्तमे सन् १६७१ ई० की १० वीं फरवरीको, दंडा-दुर्गके मराठे सिपाही दिन-भर होली खेलकर मतवाले हो जब रातमे थके-माँदे बेख़बरीसे सो रहे थे, तब क़ासिम चुपचाप चालीस जहाज़ोमें फ़ौज लेकर बिना आवाज़के दंडाके पास किलेकी दक्षिण तरफ समुद्र-किनारेके घाटपर जा पहुँचा। दूसरी ओर सिद्दी ख़ैरियतने पाँच सौ सेना साथ ले स्थलकी ओर (किलेके उत्तरमे और दीवालके समीप) जाकर, बड़े बाजे-गाजेके साथ हल्ला मचा कर उस दीवालपर चढ़ाई करनेका बहाना किया। मराठी फौजके अधिकांश लोग इधर ही टूट पड़े। इसी मौकेपर कासिम बिना रोक-टोकके घाटकी दीवालके ऊपर चढ़कर किलेमे घुस गया। उसके कुछ लोग मरे ज़रूर, परन्तु वहाँ मराठोंके जितने सिपाही थे, सब हारकर भाग गये। क़ासिम क़िलेके भीतर और भी आगे बढ़ा। इसी समय अकस्मात् किलेके बारूदखानेमें आग लग गई जिससे मराठे क़िलेदार

और दोनों पक्षके बहुतसे लोग जलकर ख़ाक हो गये। इस आकस्मिक दुर्घटनाके मारे फौजके लोग स्तंभित हो ठगे-से खड़े रह गये। क़ासिम उसी समय चिल्ला उठा,—"खासुसु खासुसु (उसकी लड़ाईका नाद)! बहादुरो! घबड़ाओ मत। हम ज़िन्दा हैं। हमें कोई चोट नहीं लगी है।" उसके बाद उसका दल शत्रुओंको मारता-काटता आगे बढ़कर पूरबसे आये हुए ख़ैरियतके दलके साथ जा मिला। इस प्रकार समूचे क़िलेपर क़ब्ज़ा करके मराठोंको ख़त्म कर दिया गया।

इधर जब शिवाजी रात-दिन जंजीरा लेनेकी चिन्तामें थे, उधर दंडा भी उनके हाथसे निकल गया। इस खबरसे उनको बड़ी भारी धक्का पहुँचा। लोग कहते हैं कि रातको जिस समय दंडामें आग लग जानेसे बारूदका गोदाम उड़ गया था, उस समय शिवाजी चालीस मीलकी दूरीपर अपने गढ़में सो रहे थे; एकाएक उनकी नींद टूट गई और वे बोल उठे—"मन न जाने कैसा हो रहा है; दंडामें अवश्य कोई विपत्ति आ पड़ी है।"

इस विजयके उपरान्त कासिमने इस प्रदेशके और भी सात किले मराठोंके हाथसे छीन लिये, और हारे हुए लोगोंके ऊपर चरम सीमाका अत्याचार किया। बादमें शिवाजी और शम्भूजी दोनोंने अपने शासन-कालमें इस प्रदेशको पुनः जीतनेकी कोशिश की, लेकिन सफल न हुए।

शिवाजी और औरंगज़ेब दोनों ही एक दूसरेको जहाज़ोंके द्वारा एकबारगी हरा देनेके लिए बम्बईके अँग्रेज़ोंकी सहायता प्राप्त करनेकी कोशिश करने लगे, परन्तु अँग्रेज़ वणिकोंके उपयुक्त नौकर अपनी शान्तिपर

दृढ रहे। इस अवसरपर फ्रेंच कम्पनीने चुपचाप शिवाजीको ९० छोटी तोपें और दो हज़ार मन शीशा बेचकर काफ़ी नफ़ा उठाया। डच लोगोने शिवाजीसे प्रस्ताव किया, "आप फौज दे, हम जहाज़ देंगे और यों दोनों मिलकर बम्बईके ऊपर आक्रमण करके अँग्रेज़ोंको निकाल बाहर करेगे। फिर उसके बाद दंडा छीनकर आपको देंगे।" परन्तु शिवाजीने इस बातपर ध्यान न दिया। उसके बाद कई वर्ष तक यह लड़ाई धीरे धीरे चलती रही। दोनो पक्ष अमानुषिक अत्याचार करते रहे।

शिवाजीका जल-युद्ध

सन् १६७४ ई० के मार्चके महीनेमे सिद्दी सम्बलने सातवली नदीके मुहानेकी खाड़ीमे घुसकर शिवाजीके नौ-सेनापति दौलतखाँपर आक्रमण किया, पर अन्तमे उसको हार मानकर लौटना पड़ा। इस लड़ाईमे दोनो पक्षके प्रधान सेनापति आहत हुए तथा १४४ आदमी मारे गये। सिद्दी सम्बल अन्यान्य हबशियोके साथ झगड़ा करनेके कारण जल-सेनापतिके पदसे हटा दिया गया। अन्तमे वह (१६७७ ई० नवम्बर-दिसम्बरमे) अपने जहाज़ और अपनी जातिका साथ छोड़कर अपने परिवार और अनुचर लेकर शिवाजीके अधीन नौकरी करने लगा।

खान्देरी द्वीपके लिए अँगरेज़ोंके साथ लड़ाई

जंजीरा-जयकी आशा छूट जानेपर शिवाजीने अपना एक जहाज़ी अड्डा स्थापित करनेकी इच्छासे आसपास ही एक दूसरा द्वीप ढूँढ निकाला। इसका नाम था खान्देरी। यह बम्बईसे ग्यारह मील दक्षिण और जंजीरासे ३० मील उत्तरमे था। सन् १६७९ ई० के सितम्बर

महीनेमे उनके डेढ़ सौ आदमियोंने चार तोपे लेकर मयानायकके अधीनस्थ जहाज़ोंपर जाकर इस छोटे निराले द्वीपपर कब्ज़ा कर लिया, तथा चटपट पत्थर और मिट्टीकी दीवाल खड़ी कर उसे चारो ओरसे घेर दिया। शिवाजीने इसके खर्चके लिए पाँच लाख रुपये मंजूर किये। इससे अँग्रेज़ोंको डर हुआ, क्योकि बम्बईमें जो जहाज़ आते जाते थे, वे सब खान्देरीसे मज़ेमे दिखाई देते थे, और वहाँसे उनपर शीघ्रता एवं आसानीसे आक्रमण किये जा सकनेकी पूरी सम्भावना भी थी। यदि खान्देरी शत्रुद्वारा अभेद्य हो जायगी, तो इसके सहारे मराठोंके जंगी जहाज़ोको समुद्रमे अँग्रेज़ोके व्यापारी जहाज़ोका नाश करना सहज हो जायगा।

इसलिए बम्बईमें रहनेवाली अँग्रेज़ी फौज और उनके लड़ाकू जहाज़ मराठोंको खान्देरीसे भगानेके लिए आये। १९ वीं सितम्बर सन् १६७९ ई० को अँग्रेज़ो और मराठोंके बीच पहली लड़ाई हुई। अँग्रेज़ हारे। सच पूछिए तो यह स्थल-युद्ध ही था। बड़े बड़े अँग्रेज़ी जहाज़ किनारेसे बहुत दूर रुककर खान्देरीकी खाड़ीमे घुसनेसे हिचकिचाते थे, क्योकि उस समय तक उस स्थानके पानीकी थाह नहीं ली गई थी। ऐसे समय प्रधान सेनापतिकी आज्ञा न मानकर लेफ्टिनेण्ट फ्रान्सिस थार्पने सिपाहियोंसे लदे तोप-हीन केवल तीन छोटे शिबाड़ (माल लादनेवाले जहाज़) साथ ले, इस द्वीपमे उतरनेकी कोशिश की। किनारेसे उनके ऊपर गोली बरसने लगी। थार्प और कुछ अँग्रेज़ मारे गये, बहुत-से ज़खमी हुए और बहुतसे किनारेपर उतरनेके बाद मराठोंके हाथ क़ैद हुए। थार्पके शिबाड़पर शत्रुओंने अधिकार कर लिया। अन्य दो शिबाड़ बाहर समुद्रमें

भाग गये ।

१८ वीं अक्टूबरको दूसरी वार जल-युद्ध हुआ । उस दिन सवेरे दौलत खाँने ६० जंगी जहाज़ ले आक्रमण किया । अँग्रेज़ोंके केवल आठ जहाज़ थे, उनमेसे 'रिव्हेंज' नामका फ्रिगेट और दो गुराव बड़े थे, वाक़ी सब छोटे थे । इन सबोंमे दो सौ अँग्रेज़ी सेना, तथा देशी और गोरे मल्लाह थे । चौल दुर्गके कुछ उत्तरमे किनारेकी ओर अपने आश्रयसे वाहर निकलकर मराठे जहाज़ सामनेके हिस्सेसे तोप दागते हुए इतनी तेज़ीसे आगे वढ़े कि खान्देरीके वाहर अँग्रेज़ी जहाज़ोंको लंगर उठाकर भागनेका भी समय न मिला । आध घंटेके अन्दर ही अँग्रेज़ोंके 'डोव्हर' नामक गुरावमे सार्जण्ट मालिव्हरर और कई एक गोरोने अत्यन्त कायरताके साथ आत्म-समर्पण कर दिया और जहाज़-सहित सब मराठोंके हाथ क़ैद हुए । * अन्य छः छोटे अँग्रेज़ी जहाज़ मारे डरके रणस्थलसे दूर ही रहे । परन्तु एक सिंह ही हज़ारो सियारोको हरा सकता है । चारो ओर शत्रुओंके जहाज़ोंके बीच 'रिव्हेज' फ्रिगेटने निर्भयतासे खड़े होकर तोपके गोलोंसे पाँच मराठे गलबट डुबा दिये, और अन्य दूसरोकी भी ऐसी दशा कर डाली कि दौलतखाँ अपना जहाज़ ले नागोठाणाको भाग गया । 'रिव्हेज' उसके पीछे पीछे चला ।

दो दिन वाद दौलतखाँ खाड़ीसे वाहर आया, परन्तु अँग्रेज़ी जहाज़को अपनी ओर आते देख पुनः लौटकर भागा । नवम्बरके

* शिवाजीने इनको सुरगढ़-क़िलेके अन्दर बन्द रखा । वहाँ ६ ठी नवम्बरको २० अँग्रेज़, फ़रासीसी और डच, २८ पुर्तगाली अर्थात् फिरंगी और ९ खलासी क़ैद थे ।

अन्तमें सिद्दी कासिम ३४ जहाज़ ले अँग्रेज़ोंके साथ जा मिला और दोनों दल खान्देरीके ऊपर रोज़ गोलावारी करने लगे।

परन्तु इन सब लड़ाइयोंके खर्च और शिवाजीके राज्यमें अपना व्यापार बन्द होनेके डरसे अँग्रेज़ोंके मालिक डर गये। धन और जनकी उनमें कमी थी। गोरे सिपाहियोंके मरनेपर नये लोगोंका मिलना कठिन था, इसलिए उन लोगोंने शिवाजीको खूब मीठी भाषामें चिट्ठी लिखकर निपटारा कर दिया। जनवरी महीनेमें अँग्रेज़ी जंगी जहाज खान्देरीकी खाड़ी छोड़ बम्बई लौट गये।

सिद्दीके साथ जल-युद्ध

परन्तु सिद्दी कासिमने खान्देरीके पास उन्देरी द्वीपपर कब्ज़ा कर लिया। वहाँपर वह तोपें चढ़ा, दीवाल बाँध (१६८० ई० की ८ वीं जनवरीको) खान्देरीके ऊपर गोले दागने लगा। दौलतखाँने नागोठाणा खाड़ीसे जहाज़ोंके साथ आकर दो रात तक उन्देरीपर कब्ज़ा करनेकी वृथा चेष्टा की। २६ वीं जनवरीको उसने तीनों ओरसे उन्देरीपर आक्रमण किया। चार घंटे तक लड़ाई हुई। अन्तमें मराठे लोग हार कर चौलको लौट गए। उनके चार गुराब और चार छोटे जहाज़ भी नष्ट हो गये, दो सौ सिपाही मरे, एक सौ घायल हुए और बहुतसे शत्रुके हाथ कैद हुए। दौलतखाँके पैरमें बड़ी भारी चोट आई। सिद्दीकी तरफ एक भी जहाज़का नुकसान न हुआ; केवल चार आदमी मरे और सातको चोट लगी।

ग्यारहवाँ अध्याय

कनाड़ामें मराठा-प्रभाव

शिवाजीने इतने देशोपर चढ़ाइयाँ कीं और इतने देश जीते कि उन सबका विस्तारपूर्वक वर्णन करना यहाँ संभव नहीं। दक्षिण-कोंकण और उत्तर-कनाड़ामें (गोआके उत्तरी और दक्षिणी किनारोपर) उन्होंने क्या किया, केवल उसीका वृत्तान्त यहाँ दिया जाता है। बम्बईके पश्चिमी किनारेपर रत्नागिरि और उत्तर-कनाडाके ज़िलोमे कई बन्दरगाह थे—जैसे, राजापुर, खारेपटन, वेंगुरला, मालवन, कारवार, मिरजान इत्यादि। इनमेसे बहुतोंमें यूरोपीय बनियोकी कोठियाँ और जहाज़ लगनेके घाट थे। अति उपजाऊ कनाड़ा देशसे मिर्च, इलायची, मलमल, रेशम, लोहा इत्यादि अनेक क़ीमती चीजे इन बन्दरोंके द्वारा देश-विदेशोको भेजी जाती थीं, और इसी कारण इस देशमे अगाध धन जमा होता था।

दक्षिणी-कोंकण और कनाड़ा 'रुस्तम-ए-जमानी' उपाधिधारी एक बीजापुरी उमरावके अधीन थे। शिवाजीने कई वार चढाई करके सन् १६६४ ई० में गोआके उत्तरके सारे प्रदेशको—रत्नागिरि और सावन्तवाड़ीको—अपने राज्यमे मिला लिया; परन्तु गोआके दक्षिण और पूर्वके बीजापुरी भागपर अधिकार जमानेमे उनको अनेको बाधाओंका सामना करना पड़ा और बहुत समयके बाद ही उन्हे इस काममे कुछ सफलता मिली। पश्चिमी कनाड़ाकी अधित्यकामें दो बड़े हिन्दू राज्य थे—बिदनौर और सौन्दा। सन् १६६३ ई० मे बीजापुरके

सुलतानके आक्रमण करनेपर बिदनौरके राजा बीजापुरके क़ावूमे आये और उन्हे ३५ लाख रुपये नज़रानाके रूपमें देना पड़े। उसके बाद अकसर बीजापुरी फौज इस देशमे घुसा करती थी। अब मराठोने भी वही रास्ता पकड़ा। रुस्तम-ए-ज़मा दो पुश्तसे शिवाजीके घरानेका दोस्त था। वह कभी मराठोंके विरुद्ध होकर नहीं लड़ता था। बनावटी लड़ाई लड़कर सुलतानको भुलावा-मात्र देता था। यह बात देशके सब लोग, यहाँ तक कि अँग्रेजी कोठीके साहब लोग भी, जानते थे।

घोरपड़ेका नाश और सावन्तवाड़ीपर अधिकार

सन् १६६४ ई० के अप्रेल महीनेमें बीजापुरके उमराओंने फिर बिद-नौरपर आक्रमण किया, क्योंकि वहाँके राजघरानेमें झगड़ा और ख़ून-ख़राबी शुरू हो गई थी। इसी मौकेपर शिवाजी कई महीने तक इस देशको मनमाने तौरपर लूटने गये और नगरोंपर अधिकार जमाने लगे। अक्टूबर और नवम्बरके महीनेमे बहलोल खाँके साथ उनकी दो बार लड़ाई हुई। पहली बार शिवाजीकी हार और दूसरी बार जीत हुई। इसी समय उन्होने मुधोल नामक गाँवपर आक्रमणकर वहाँके ज़मींदार घोरपड़ेके वंशको प्रायः निर्मूल कर दिया। मराठोमे ऐसी दन्तकथा प्रचलित है कि जब (१६४८ मे) बीजापुरके वज़ीरने जिंजीके पास शाहजीको क़ैद किया था, तब बाजी घोरपड़ेने विश्वासघात कर शाहजीके भागनेमे बाधा डाली थी और उनको पकड़वा दिया था। इसी कारण शाहजीने शिवाजीको पत्र लिखा था— "अगर तुम हमारे लड़के हो, तो इस नीच कर्मके लिए घोरपड़ेसे बदला लेना।" परन्तु यह किंवदन्ती विश्वास करने योग्य नहीं है,

क्योंकि मुधोल जीतनेसे दस महीने पहले ही शाहजीकी मृत्यु हो चुकी थी।

सन् १६६४ ई० के दिसम्बर मासमें शिवाजीने रत्नागिरी ज़िलेके दक्षिण-पूर्व अंश, वर्तमान सावन्तवाड़ीकी ज़मींदारी, पर कब्जा जमाया। यहाँके छोटे-छोटे देसाई (ज़मींदार) बीजापुरके अधीन थे। वे शिवाजीके डरसे सर्वस्व छोड़कर पहले जंगलोंमें भाग गये और फिर गोआमें जा बसे। गोआमें बैठकर उन्होने अपने अपने राज्य लौटानेकी व्यर्थ चेष्टामे अनेक बार फौज़ इकट्ठी की। इसी कारण शिवाजीने गुस्सेमे आकर पुर्तगाली राजप्रतिनिधिको एक पत्र लिखा, जिसके फलस्वरूप राजप्रतिनिधिने इन देसाइयोंको अपने इलाक़ेसे बाहर निकाल दिया (मई १६६८)। इसके बाद कुडालेके देसाई लखम सावन्तने (वर्तमान सावन्तवाड़ी राज्यके आदिपुरुष, जो जातिके भोंसले थे) शिवाजीकी अधीनता स्वीकार कर ली और उनके अधीन जागीरदार बनकर अपनी ज़मींदारी वापस प्राप्त कर ली, परन्तु उनको क़िला बनाने और अपनी निजी सेना रखनेकी मनाही रही।

रुस्तम-ए-ज़मा भीतर ही भीतर शिवाजीका सहायक हो गया था। यहाँ तक कि वह मराठोंके साथ मिलकर अपने ही राजाकी प्रजाके लूटके मालमें साझा लगाता था, इसलिए अब इस प्रदेशमें शिवाजीके विरुद्ध खड़ा होने योग्य कोई भी न रहा। इस देशके धनी और बनियें मराठोंके डरसे त्राहि त्राहि करते हुए घर-द्वार छोड़कर भागे। इस देशका इतना बड़ा और इतना प्रसिद्ध व्यापार प्रायः बन्द हो गया। कोई जगह भी उनसे न छूटी।

बसरूर और कारवारकी लूट

बिदनौरका प्रधान बन्दर बसरूर था (अँग्रेज़ी नक़शोंमें इसका नाम Barcelore लिखा है)। वह हिन्दू राज्यमें पड़ता था। वहाँके राजाने शिवाजीको कभी कोई नुकसान नहीं पहुँचाया था और न वह कभी महाराष्ट्रकी सीमाके पास जाता था, परन्तु व्यापार और शिल्पकी वस्तुओंको बेचनेसे ऐश्वर्यमें बसरूर इस प्रदेशका एक बेजोड़ स्थान हो गया था। अतएव सन् १६६५ ई० की ८ वीं फरवरीको ८८ जहाज़ोंमें फौज़ भरकर रत्नागिरी ज़िलेके किनारेसे होते हुए शिवाजी एकाएक बसरूरमे आ धमके। शिवाजी यहाँ आयेंगे, यह किसीने स्वप्नमे भी नहीं सोचा था, इसलिए कोई अपने बचावके लिए तैयार न था। एक ही दिनकी बेरोक-टोक लूटसे मराठोंने असंख्य धन-रत्न पाया। दूसरे दिन इस शहरको छोड़कर शिवाजी समुद्र-तटके भारत-प्रसिद्ध गोकर्ण नामक तीर्थमें पहुँचे और वहाँके शिवमन्दिरके सामने उन्होंने स्नान, पूजा आदि धर्मकार्य समाप्त किया। उसके बाद सब जहाज़ोंको देश लौटाकर वे स्वयं चार हज़ार सिपाहियोंके साथ उत्तरकी ओर कूच करके अंकोला होते हुए कारवार नगरमें * जा पहुँचे।

इस बन्दरमे अँग्रेज़ोंकी एक बड़ी कोठी थी। वे डरके मारे शिवाजीके राज्यमें अनेक स्थानोंमें वेतन देकर जासूस रखते थे और

* यह शहर अब बम्बई प्रदेशके एक तालुकेका सदर मुकाम है। स्व० सत्येन्द्र-नाथ ठाकुर आई० सी० एस० यहाँ काम करते थे और श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर भी अपने शुरू जीवनमे कुछ दिन यहाँ रहे थे। उन्होंने इस स्थानके निवासके संस्मरण भी लिखे हैं।

उनके द्वारा शिवाजीकी चाल-ढाल और उद्देशोंकी पक्की खबर पहलेसे ही जान लेते थे। इस बार भी शिवाजीके इस तरफ आनेकी खबर पाते ही उन लोगोंने कम्पनीका रुपया-पैसा और माल किरायेके एक छोटे जहाज़में लाद दिया और कोठी छोड़कर उसी जहाज़पर आश्रय लिया। इसी दिन रातको बहलोलखाँका नौकर शेरखाँ (हबशी) अपने मालिककी माताकी मक्का-यात्राके लिए जहाज़ ठीक करनेको इस बन्दरमे आया। पहुँचनेके बाद उसने पहली बात यह सुनी कि शिवाजी भी वहाँ आये है। उसने फौरन अपने डेरेको चारो ओरसे क़िलेकी तरह घेरकर अपने साथके पाँच सौ रक्षक सैनिकोंको चारों ओरसे पहरेपर खड़ा कर दिया और धन तथा मालको सुरक्षित करके उसी रातको शिवाजीसे कहला भेजा कि वे उस शहरमे न घुसे, क्योंकि यदि वे घुसनेकी चेष्टा करेंगे, तो शेरखाँ आखिरी दम तक उनसे लड़ेगा। शेरखाँकी दिलेरी और वीरता किसीसे छिपी न थी, और बहलोल भी बीजापुरका सबसे बड़ा उमराव था। इन्हीं सब कारणोंसे शिवाजीने शेरखाँके ऊपर चढ़ाई करनेकी हिम्मत न की और कारवार शहरको बिना कोई हानि पहुँचाए ही नदीके किनारे कुछ दूर अपना खेमा गाड़ा।

दूसरे दिन (२३ फरवरीको) यहाँसे दूत भेजकर उन्होंने शेरखाँसे कहलाया—"या तो अँग्रेज़ोंको पकड़कर हमारे हाथमे सौंप दो, नहीं तो शहर छोड़कर चले जाओ। हम वहाँ आकर अंग्रेज़ोंसे बदला लेंगे, क्योंकि वे हमारे चिरशत्रु है।" शेरखाँने अँग्रेज़ोंसे इसका जवाब पुछवाया। उन लोगोंने कहला भेजा—"हम लोगोंके पास इस जहाज़के गोला बारूदके सिवा और कुछ धन-दौलत

नहीं है। अगर उनकी समझमें यह गोला-बारूद रुपयेका काम दे सकता हो, तो वे आकर इसे ले सकते है। " इस जवाबसे शिवाजी बहुत क्रुद्ध होकर बोले—" अच्छा, जानेके पहले हम अँग्रेजोंको देख लेंगे। " कारवारके बनियोंनें डरके मारे चन्दा * वसूल कर उनको कुछ नज़राना दिया। उसे लेकर शिवाजी उसी दिन चले गये। जाते समय उन्होंने कहा—" शेरखाँने इस बार हमारी होलीके समयका शिकार खराब कर दिया। " उसके बाद (१४ मार्चको) भीमगढ़ होते हुए शिवाजी देश लौट गये, क्योंकि इसी महीनेमें जयसिंहने उनके आश्रय पुरन्दर-दुर्गपर आक्रमण किया।

इसी आक्रमणके समय बीजापुरियोंने दक्षिण-कोंकणके बहुतसे हिस्सो (बेगुरला और कुडाल) का शिवाजीके हाथसे उद्धार किया था। कनाड़ाके किनारेके कारवार इत्यादि स्थान दोनों पक्षों द्वारा लूटे जाने लगे।

फोंडा-दुर्गपर अधिकार

गोआकी पूर्वी सीमाके पास बीजापुर राज्यका सबसे बड़ा क़िला फोंडा था। सन् १६६६ ई० के शुरूमें शिवाजीने सेनाका एक दल भेजकर फोडा घेरा, परन्तु-बीजापुरियोंकी एक बड़ी फौजने आकर शिवाजीके आदमियोंको भगा दिया और इस क़िलेको बचाया। उन लोगोंने इस प्रदेशके और भी दूसरे चार क़िलोंको (मार्च १६६६ में) शिवाजीसे छीन लिया।

---

* इस चन्देमें अँग्रेजोंने भी नौ सौ रुपये दिये थे, क्योंकि कारवार शहरमें उनकी जो सम्पत्ति थी उसका मूल्य चालीस हजार रुपयेके लगभग था।

उसके बाद सात वर्ष तक शिवाजीकी दृष्टि इस ओर नहीं पड़ी। सन् १६७३ ई० के अप्रैल महीनेमें उनकी सेनाने कनाड़ाकी अधित्यकामें प्रवेशकर अनेक नगर और दुर्ग लूटे। उनका सेनापति प्रतापराव हुबलीकी अँग्रेजी कोठीसे कम्पनीके चालीस हज़ार रुपयेके मालके सिवा वहाँके कर्मचारियोंकी निजी सम्पत्ति भी ले गया, परन्तु बीजापुरसे मुजफ्फरखाँके चार हज़ार घुड़सवारोंके आ जानेपर मराठे लोग हुबली छोड़कर भाग गये। जल्दीमें वे लूटके मालकी गाँठेंकी गाँठे रास्तेमे ही फेकते गए।

इसी साल विजयादशमीके दिन (१० अक्टूबर १६७३ को) शिवाजी पचीस हज़ार सैनिकोंकी फौज ले देश जीतने चले। साथमें बीस हज़ार बड़ी बड़ी थालियाँ थीं जिनमें लूटका माल रखकर लाया जाता था। इस दौरेमें वे कनाड़ा तक गये परन्तु आधे दिसम्बरके लगभग बहलोल और शर्जाखाँके हाथों दो बार हारकर देशको लौट आये।

बीजापुरके दरबारमें धीरे धीरे गोलमाल मचने लगा और वहाँवालोंका नैतिक पतन भी होने लगा। फलतः बीजापुर राज्यके दूर-दूरके प्रदेशोंकी अत्यन्त दुर्दशा हुई क्यों कि उन सबकी रक्षा करनेकी शक्ति बीजापुरकी सलतनतमें न रही। इस सुयोगसे लाभ उठाकर शिवाजीने सन् १६७५ ई० में कनाड़ाके किनारेपर स्थायी रूपसे कब्ज़ा कर लिया।

नौ हज़ार सैन्य लेकर ८ अप्रैलको शिवाजीने फोंडा-दुर्गका घेरा आरम्भ कर दिया। दुर्गका मालिक मुहम्मदखाँ एक महीने तक बड़ी बहादुरी और सहिष्णुताके साथ लड़ता रहा। शिवाजीने किलेकी दीवारोंके नीचे चार सुरंगें खुदवाई, परन्तु मुहम्मदखाँने उन सबको नष्ट कर दिया। शिवाजीने एक मिट्टीकी दीवार खड़ी कर

क़िलेको चारों ओरसे घेर लिया। मराठा सेना उसकी आड़में बैठी मज़ेसे गोलियाँ छोड़ने लगी। उन्होंने दीवारकी खाईको एक जगहपर मिट्टीसे भरकर क़िलेकी दीवार तक रास्ता बनाया। आध आध सेर भारी पाँच सौ सोनेके कड़े बनवाकर शिवाजीने घोषित किया कि जो सिपाही क़िलेकी दीवारके ऊपर चढ़ सकेगा, उसे वे दिये जायँगे। अन्तमे कोई सहायता न मिलनेके कारण एक महीने बाद (६ मईको) फोंडाका पतन हुआ। आसपासके महालोंपर कब्ज़ा करनेमें सहायता देनेकी शर्तपर मुहम्मदखाँ और चार-पाँच प्रधान लोगोंको प्राण-दान मिला। क़िलेके और सब लोग मारे गये। थोड़े ही दिनोंके भीतर दक्षिणमे गंगावती नदीतकका इस ज़िलेका सब हिस्सा शिवाजीके अधिकारमे आ गया।

परन्तु कनाड़ा अधित्यकामे बड़ी लड़ाईके बाद भी शिवाजीका अधिकार चिरस्थायी न हुआ। बिदनौरकी रानीने मराठा राजाको कर देना स्वीकार किया। उसके बाद बिदनौर और सोन्दामे लड़ाई, बीजापुरी उमराओंका हस्तक्षेप, मराठी फौजकी लूट, इत्यादिसे देशमें बराबर अशान्ति बनी रही और हानि होती गई।

पुर्तगालियोंके साथ शिवाजीका सम्बन्ध

शिवाजीके राज्यकी पश्चिमी सीमाके पास ही पुर्तगालियोंका भारतीय प्रदेश था। उत्तरमे दमन ज़िला; बीचमें बम्बई, थाना, बसई (Bassein), चौल; दक्षिणमें गोआ, बार्देश, शाष्ठि (Salsette) थे ×।

× इनमेसे बम्बई-द्वीप सन् १६६८ सालमें इंग्लैण्डको दे दिया गया। वर्तमान् पुर्तगाली-भारतके अनेक स्थान—जैसे, फोंडा, बिचोली, पेड्ने, सांकली आदि शिवाजीकी मृत्युके पचास वर्ष बाद ही पुर्तगालियोंके अधिकारमें आये।

बहुतै-सी छोटी छोटी बातोपर खासकर भारत-सागरमें पुर्तगालियोंका एकाधिपत्य और अधिक प्रभुताके दावेको लेकर शिवाजीके साथ गोवा-सरकारका झगड़ा हुआ, परन्तु वह कभी युद्धकी अवस्था तक न पहुँचा क्योकि पुर्तगालियोका धन-बल बहुत कम था, उनके स्थानीय देशी सैनिक (कनाड़ी) बड़े डरपोक थे, और गोरे सिपाही (जो असलमे सम्मिश्रित जातिके फिरंगी थे) शुद्ध यूरोपीयोकी अपेक्षा बहुत निकम्मे। इसीलिए पुर्तगाली गवर्नरने अनेक उपाय करके और बातोका भुलावा दे-देकर शिवाजीको शान्त रखा। दो बार (सन् १६६७ और १६७० मे) उन लोगोके बीच लिखित सन्धि होकर सब झगड़ोका निपटारा भी हुआ।

चौथकी उत्पत्ति

रामनगरके कोली-जातिके राजा इस देशके पश्चिमी समुद्र-तटके अनेको गाँवोसे लूट-मार न करनेके बदलेमे प्रतिवर्ष कुछ रुपये पाते थे। उन्हीं रुपयोंको साधारणतया 'चौथ' कहते थे, परन्तु वह सब जगह राज्य-करका ठीक चौथाई हिस्सा नहीं होता था। किसी गॉवमें मालगुज़ारीका दसवॉ हिस्सा, किसीमें आठवाँ हिस्सा और किसीमे छठा हिस्सा था; दो-एक जगहोमे चौथाई भी था। इन राजाओंको लोग 'चौथिया राजा' कहकर पुकारते थे। बम्बईके उत्तरमें पुर्तगालियोंके दमन ज़िलेके कई गॉव उनको चौथ देते थे। सन् १६७६ ई० में शिवाजीने जब कोली देशपर स्थायी रूपसे अधिकार किया, तब कोली राजाओंके स्वत्वके अनुसार इन सब गाँवोसे उन्होने भी चौथका दावा किया। गोआके गवर्नरने अनेको आपत्तियॉ पेश करके समय बिताकर खुलासा जवाब देनेमे जितनी हो सकी देरी की।

अन्तमें शिवाजीने लड़ाईकी धमकी दी, परन्तु शिवाजीकी अकाल-मृत्यु हो जानेसे बादमें उनके पुत्रके समय यह लड़ाई हुई।

सावन्तवाड़ीका लखम सावन्त और दूसरे देसाई लोग शिवाजीके आक्रमणसे अपना राज छोड़कर गोआ भाग गये, और वहाँ जाकर शिवाजीके कर्मचारियोंके विरुद्ध षड्यन्त्र रचने लगे। इस बातके लिए सज़ा देनेके अभिप्रायसे १७ नवम्बर सन् १६६७ ई० में मराठा सैनिकोंके एक दलने गोआके अधीन बार्देश ज़िलेमें घुसकर कई आदमियों और मवेशियोंको पकड़कर उनका चालान किया। परन्तु यह झगड़ा दूत भेजकर मित्रतापूर्वक निपटाया गया। क़ैदी छोड़ दिये गये और गवर्नरने (१६६८ में) देसाइयोंको पुर्तगाली सीमाके बाहर निकाल दिया।

गोआपर अधिकार करनेकी विफल चेष्टा

गोआके पूरबकी ओर पहाड़ हैं। उनपर जानेके लिए दो-एक छोटे ऊँचे दर्रोंको छोड़कर और कोई पथ नहीं है। पश्चिम और दक्षिणकी ओर समुद्र और खाड़ी है। मज़बूत जहाजों और तोपोंके बिना उस तरफसे गोआपर आक्रमण करना असम्भव है। सन् १६६८ ई०के अक्टूबर महीनेमे शिवाजीने गोआ-प्रदेशमें घुसनेकी एक चाल सोची। उन्होने चार-पाँच सौ मराठा सैनिकोंको छोटी छोटी टोलियोंमे बाँटकर नाना प्रकारके गुप्त भेषोमें धीरे धीरे इस घाटीसे गोआ राज्यमें भेज दिया, और उन्हें सिखला दिया कि जब इस प्रकार एक हज़ार आदमी इकट्ठे हो जायँ, तब वे एक रातको एकाएक पुर्तुगाली पहरेदारोंको मारकर पहाड़की एक घाटीपर दखल जमा लें; फिर उसी रास्तेसे शिवाजी दलबलके साथ इस राज्यमें घुसकर देश

जीतेंगे। परन्तु, या तो किसीने षड्यंत्रका भेद खोल दिया अथवा पुर्तुगाली गवर्नरको स्वयं ही सन्देह हो गया जिससे उसने अपने इलाकेके सब शहरोंमें कड़ी खानातलाशी लेकर इन छिपे हुए मराठे सिपाहियोंको गिरफ्तार कर लिया, और पीट पीटकर उन लोगोंसे सच्ची बातका पता लगा लिया। इसके बाद उसने शिवाजीके दूतको बुलाया और अपने हाथसे उसकी कनपटीपर दो तीन घूँसे जमाकर उसे तथा अन्य क़ैदी मराठे सिपाहियोंको गोआ राज्यके बाहर निकाल दिया।

बारहवाँ अध्याय

शिवाजीकी जीवन-सन्ध्या

स्त्रियोंकी वीरता

पूर्वीय कर्णाटक-विजयके बाद शिवाजी मैसूर होते हुए सन् १६७८ ई० के शुरूहीमें पश्चिम कनाड़ा बालाघाट, अर्थात् महाराष्ट्रके दक्षिणमें वर्तमान धारवाड़ ज़िलेमें जा पहुँचे। इस प्रदेशके लक्ष्मीश्वर इत्यादि नगर लूटकर और वहाँसे चौथ वसूलकर जब वे उसके उत्तरमें बेलगाँव किलेके तीस मील दक्षिण-पूर्वमें बेलवाड़ी नामक गाँवपर होकर जा रहे थे तब उस गाँवकी पटेलिन (ज़मींदारिन) सावित्रीबाई नामकी कायस्थ विधवाके नौकरोंने मराठी फ़ौजके माल लादनेके कितने ही बैल छीन लिये। इस कारण गुस्सा होकर शिवाजीने बेलवाड़ीका किला जा घेरा। सावित्रीबाईने इतने बड़े विजयी वीर और उनकी अगणित सेनाके विरुद्ध अदम्य साहससे भिड़कर सत्ताईस दिन तक अपने छोटे किलेकी रक्षा की। अन्तमें उसकी रसद और बारूद खतम हो गई। मराठोंने बेलवाड़ीपर कब्ज़ा कर लिया। वीर नारी पकड़ी गई। एक ऐसे छोटे स्थानमें इतने दिन तक कुछ कर-धर न सकनेके कारण शिवाजीकी बड़ी भद्द उड़ी। अँग्रेजी कोठीके साहब (२८ फरवरी, १६८७ ई० को) लिखते हैं—"शिवाजीके ही आदमी वहाँसे आकर कहते हैं कि बेलवाड़ीमें उन्हें जितनी हैरानी उठानी पड़ी उतनी मुगलों या बीजापुरके साथ लड़नेमें भी नहीं उठानी पड़ी

थी। जिन्होंने इतने राज्य जीते है, वे क्या अन्तमें एक औरतको भी नहीं हरा सकते !"

बीजापुर दुर्ग पानेकी कोशिश बेकार

इसी बीचमें शिवाजीने घूँस देकर बीजापुरका किला लेनेकी चाल चली। बात यह थी कि वज़ीर बहलोलखाँकी मृत्यु (२३ दिसम्बर, १६७७ ई०) के बाद उसके गुलाम जमशेदखाँको इस क़िले और बालक राजा सिकन्दर आदिलशाहकी देख-रेखका भार सौंपा गया था; किन्तु जब उसने देखा कि उनकी रक्षा कर सकनेकी उसमें शक्ति नहीं है, तब वह तीस लाख रुपयोंके बदलेमें नाबालिग़ सुलतान और राजधानीको शिवाजीके हाथ सौंपनेके लिए राज़ी हो गया। यह खबर सुन अडोनीके नवाब सिद्दी मसऊदने (मृत सिद्दी जौहरका दामाद) चुपकेसे यह प्रचार कर दिया कि वह सख़्त बीमार है। अन्तमें उसने अपने मरनेका हल्ला भी मचवा दिया, यहाँ तक कि एक पालकीमें उसका नक़ली ताबूत (लाश रखनेका बक्स) रखाकर कई हज़ारकी गारदके साथ क़ब्रमे दफ़नानेका लिए अडोनी भेज दिया गया! उसकी बाक़ी फौज,—चार हज़ार सवारोंने बीजापुर जाकर जमशेदसे कहा—"हमारे मालिकके मर जानेसे हमें रोटी नहीं मिलती, आप हमें अपनी खिदमतमें रख ले।" उसने भी उन लोगोंको भर्ती कर क़िलेके भीतर स्थान दे दिया। उन लोगोंने दो दिन बाद जमशेदको क़ैदकर बीजापुरका फाटक खोल सिद्दी मसऊदको भीतर बुलाया। मसऊद (२१ वीं फरवरीको) वज़ीर बना। शिवाजी इस अन्तिम लाभकी आशामे विफल हो पश्चिमकी ओर मुड़े और फिर उन्होंने (अन्दाजन १६७८ ई० की ४ अप्रेलको) अपने पनहालेके

क़िलेमें प्रवेश किया।

मराठोंकी अन्य लड़ाइयाँ और देश जीतना

कर्नाटककी चढ़ाईमें जिस समय शिवाजी पन्द्रह महीने तक अपने देशसे गैरहाज़िर थे, उस समय उनकी फौजने गोआ और दमनके अधीन पुर्तुगालियोंके प्रदेशपर आक्रमण किये, पर इनका कोई फल न हुआ। सूरत और नासिक ज़िलोंको पेशवाने तथा पश्चिम-कनाड़ाको दत्ताजीने कुछ दिन तक लूटा, किन्तु इसपर भी वे देश नहीं जीते जा सके।

सन् १६७८ ई० के अप्रेलके आरम्भमें शिवाजीने देश लौटकर कोपल प्रदेश,—अर्थात् विजयनगर शहरके उत्तरमें तुंगभद्रा नदीके उस पार और उसके पश्चिममें गदग महाल जीतनेके लिए सेना भेजी। हुसेनखाँ और क़ासिमखाँ मियाना, दोनों भाई बहलोलखाँकी ही जातिके थे। कोपल प्रदेश इन दोनों अफ़गान उमराओंके अधीन था। शिवाजीने सन् १६७८ ई० में गदग और दूसरे साल मार्चके महीनेमे कोपलपर अधिकार कर लिया। कोपल दक्षिण देशका 'प्रवेश-द्वार' है। यहाँसे तुंगभद्रा नदी पार कर उत्तर-पश्चिमके कोनेसे सहज ही मैसूर जाया जा सकता है। इस रास्तेसे घुसकर मराठोंने इस नदीके दक्षिणमें बेलारी और चितलदुर्ग ज़िलोंके अनेक स्थानोंपर अपना अधिकार जमाया और पलिगरोंको वशमें कर लिया। इस प्रान्तके जीते हुए देशोंको मिलाकर शिवाजीने उसे अपने राज्यका एक नया प्रदेश बनाया और उसके हाकिम हुए जनार्दन नारायण हनुमन्ते।

शिवाजीके देश लौटनेके एक महीने बाद ही उनकी सेनाने फिर रातको शिवनेर दुर्गपर आक्रमण किया, किन्तु बादशाही क़िलेदार

अब्दुल अज़ीज़ख़ाँ जागता था। उसने आक्रमणकारियोंको मारकर भगा दिया, क़ैदी शत्रुओंको भी छोड़ दिया और उनके द्वारा शिवाजी-को कहला भेजा कि जितने दिन मै क़िलेदार हूँ, उतने दिनों तक इस क़िलेपर अधिकार करना तुम्हारे लिए सम्भव नहीं।

इधर बीजापुरकी हालत बड़ी ही ख़राब हो चली थी। वज़ीर सिद्दी मसऊद ही सर्वेसर्वा था, बालक सुलतान उसके हाथकी कठपुतली था। चारो ओर शत्रुओंके उत्पातसे वज़ीर घबरा उठा। मृत बहलोल-ख़ाँका अफ़ग़ान-दल रोज़ उसका अपमान करता और उसे डराता था। राज्यके चारो ओर शिवाजी बिना रोक-टोक लूट-मार करते और प्रदेशोंपर दख़ल जमाते जाते थे। राज-कोषमें रुपया नहीं था। दलबन्दीके कारण राज-शक्तिमे कुछ दम रहा न था। कुछ दिन पहले जिन शर्तोंपर मुग़ल सेनापतिके साथ कुलबर्गेमें सन्धि हुई थी, उन्हे बीजापुर-राजवंशके हक़मे बहुत अपमानजनक और हानिकारक बताकर सब लोग मसऊदको धिक्कारने लगे। चारों ओर अँधेरा देख किंकर्तव्यविमूढ़ मसऊदने शिवाजीसे मदद माँगते हुए कहा, "आपने (शिवाजीने) भी आदिलशाही वंशका नमक खाया है, और हम दोनो एक ही देशके रहनेवाले हैं। मुग़ल दोनोंके शत्रु है। दोनोंको मिलकर मुग़लोंको दबाना उचित है।" इस सन्धिकी बातचीत सुनकर दिलेरख़ाँने गुस्सेमे भरकर (सन् १६७८ के अन्तमे) बीजापुरपर आक्रमण कर दिया।

शम्भूजीका भागकर दिलेरख़ाँसे जा मिलना

शिवाजीके बड़े लड़के मानो पिताके पापके फलस्वरूप जन्मे थे। इक्कीस वर्षहीकी उम्रमे वे उद्धत, मनमौजी, नशेबाज़ और लम्पट

हो गये थे। एक सधवा ब्राह्मणीका धर्म नष्ट करनेके कारण न्यायपरायण पिताके आदेशसे वे पनहाला-क़िलेमे बन्द कर दिये गये थे। वहाँसे शम्भूजी अपनी स्त्री येसूबाईको साथ ले चुपचाप भागकर दिलेरखाँसे (१३ दिसम्बर १६७८ को) जा मिले। शम्भूजीको पाकर तो दिलेर मारे खुशीके फूल गया। "इसी बीचमें मानो उसने सारा दाक्षिणात्य जीता हो, ऐसी उछल कूद करने लगा। उसने यह खुशखबरी बादशाहके पास भी भेजी।" औरंगज़ेबकी ओरसे शम्भूजीको सात हज़ारकी मनसबदारी, राजाकी उपाधि और एक हाथी दिया गया। उसके बाद दोनों बीजापुरका कब्ज़ा करने चले।

इसी आफ़तके समय सिद्दी मसऊदने शिवाजीकी शरण ली थी। शिवाजीने चटपट छह-सात हज़ार अच्छे अच्छे सवार बीजापुरकी रक्षाके लिए भेजे। उन लोगोने जाकर राजधानीके बाहर ख़ालापुरा और खसरूपुरा गाँवोमे अड्डा जमाया, और कहला भेजा कि बीजापुर-किलेका एक दरवाज़ा और बुर्ज उनके अधिकारमे कर दिया जाय। मसऊदने उनके ऊपर विश्वास न किया। तब मराठोंने बीजापुरपर दखल करनेकी एक और चाल सोची। उन्होंने कुछ हथियार चावलके बोरोमें छिपाकर उन्हे बैलोंकी पीठपर लाद दिये और अपने कुछ सिपाहियोंको बैल-हाँकनेवालोंकी पोशाकमे बाज़ार भेजनेके बहाने क़िलेके भीतर घुसानेकी चेष्टा की; लेकिन वे पकड़े गये और खदेड़ दिए गये। उसके बाद मराठोंने मित्रके इन गाँवोंको लूटना आरम्भ किया। मसऊदने आजिज़ आकर दिलेरखाँके साथ निपटारा कर लिया। उसने बीजापुरमे मुग़ल फौजको बुलाकर मराठोको भगा दिया।

दिलेरका भूपालगढ़ जीतना

उसके बाद शम्भूजीको साथ ले दिलेरखाँने शिवाजीका भूपालगढ़ नामक क़िला तोपके ज़ोरसे छीन लिया। वहाँ उसने प्रचुर अन्न, धन, जायदाद आदि लूटे और बहुतसे लोगोंको क़ैद किया। इन क़ैदियोंमें-से कुछको उनका एक एक हाथ कटवाकर छोड़ दिया, बाकी सब गुलाम बनाकर बेच दिये गये (२ अप्रेल, १६७६ ई०)। क़िलेकी दीवारें और बुर्ज़ तोड़ डाले गये। उसके बाद छोटी-मोटी लड़ाइयाँ और बीजापुर-दरबारकी अनन्त दलबन्दी और षड्यन्त्र कई महीनों तक चलते रहे; किसीकी कुछ व्यवस्था न हो सकी।

जज़ियाके विरुद्ध शिवाजीका पत्र

सन् १६७६ ई० की २ अप्रेलको औरंगज़ेबने हुक्म जारी किया कि मुग़ल राज्यमें सर्वत्र हिन्दुओंकी गिनती की जाय और हरएकके लिए हरसाल आमदनीके हिसाबसे तीन श्रेणीका १३॥/), ६॥/) और ३।/) ' जज़िया कर ' लिया जाय। बादशाहके इस नये और अन्यायपूर्ण प्रजापीड़नका समाचार पाकर शिवाजीने उनको नीचे लिखा हुआ एक पत्र लिखा। नीलोजी प्रभु मुन्शीने सुललित फारसीमें इस पत्रकी रचना की थी।

"बादशाह आलमगीर! सलाम। मै शिवाजी आपका पक्का शुभचिंतक और चिरहितैषी हूँ। ईश्वरकी दया और सूर्य-किरणसे भी उज्ज्वलतर बादशाहके अनुग्रहके लिए धन्यवाद प्रदान कर निवेदन करता हूँ कि—

" यद्यपि यह शुभाकांक्षी दुर्भाग्यवश आपकी महिमामंडित सन्निधिसे बिना अनुमति लिये ही आनेको बाध्य हुआ था, तथापि मैं जितना सम्भव और उचित हो सकता है, सेवकके कर्त्तव्य और

कृतज्ञताका दावा सम्पूर्ण रूपसे पूरा करनेमें हमेशा तत्पर रहता हूँ।

× × × ×

"सुनता हूँ कि मेरे साथ लड़ाई लड़नेके कारण आपका धन और राज्य-कोष खाली हो गया है, और इसी कारण आप हुक्म दे बैठे हैं कि जज़िया नामक कर हिन्दुओंसे वसूल किया जाय कि वह आपके अभावको पूर्ण करनेमें काम आवे।

"बादशाह सलामत! इस साम्राज्य-रूपी भवनके निर्माता बादशाह अकबरने पूर्ण गौरवसे ५२ (चान्द्र) वर्ष राज्य किया। उन्होंने क्रिश्चियन, यहूदी, मुसलमान, दादूपन्थी, नक्षत्रवादी (फलकिया= गगनपूजक?), परीपूजक (मालाकिया), विषयवादी (आनसरिया), नास्तिक, ब्राह्मण, श्वेताम्बर-दिगम्बर, आदि सब धर्म-सम्प्रदायोंके प्रति सार्वजनीन मैत्री (सुलह-इ-कुल=सबके साथ शान्ति) की सुनीतिको ग्रहण किया था। सबकी रक्षा और पोषण करना ही उनके उदार हृदयका उद्देश्य था। इसीलिए वे 'जगद्गुरु' कहलाए।

"उसके बाद बादशाह जहाँगीरने २२ वर्ष तक अपनी दयाकी छाया जगत् और जगतवासियोंके सिरके ऊपर फैलाई। उन्होंने बन्धुओंके तथा प्रत्यक्ष कार्य करनेमें अपना हृदय लगा दिया, और इस प्रकार मनकी इच्छाओंको पूर्ण किया। बादशाह शाहजहाँने भी ३२ वर्ष राज्यकर सुखी पार्थिव जीवनके फलस्वरूप अमरता अर्थात् सौजन्य और सुनाम कमाया। फारसीका पद्य है—

'जो आदमी जीवनमें सुनाम अर्जन करता है वह अक्षय धन पाता है, क्योंकि मृत्युके उपरान्त उसके पुण्य-चरित्रकी कथा ही

उसके नामको बनाए रखती है।'

"अकबरकी उदारताका ऐसा पुण्य-प्रभाव था कि वह जिस ओर जाता विजय और सफलता आगे बढ़कर उनका स्वागत करती थी। उनके शासन-कालमें बहुतसे देश और किले जीते गये। इसीसे शुरूके सम्राटोंकी शक्ति और उनका ऐश्वर्य सहज ही समझमें आता है। जिनकी राजनीतिका अनुसरणमात्र करनेमें ही आलमगीर बादशाह विफल और व्यग्र हो गये है, उन बादशाहोंमे भी जज़िया-कर लगानेकी शक्ति थी; परन्तु उन लोगोने अन्ध-विश्वासको हृदयमे स्थान नही दिया, क्योकि वे जानते थे कि ईश्वरने ऊँच-नीच, सब आदमियोका भिन्न भिन्न धर्मोमें विश्वास और उनकी विभिन्न प्रवृत्तियोंके दृष्टान्त दिखानेके लिए ऐसी सृष्टि की है। उनके दया-दाक्षिण्यकी ख्याति उनकी स्मृतिके रूपमे चिर काल तक इतिहासमे लिखी रहेगी, और छोटे बड़े सभी आदमियोके कंठो और हृदयमे इन तीन पवित्र आत्माओं (सम्राटो) के लिए प्रशंसा और मंगल-कामना बहुत दिन तक वास करेगी। लोगोकी हृद्गत आकांक्षाके कारण ही सौभाग्य और दुर्भाग्य आते है, अतएव उनकी धन-सम्पत्ति दिनपर दिन बढ़ती ही गई। ईश्वरके प्राणी उनके सुशासनके कारण शान्ति और निर्भयतासे शय्यापर आराम करने लगे, और उनके सब काम सफल हुए।

"और आपके शासन-कालमें? बहुतसे किले और प्रदेश आपके हाथसे निकल गये और बाकी भी शीघ्र ही चले जायँगे, क्योंकि उनके नाश और छिन्न-भिन्न करनेमे मेरी ओरसे कोशिशमें कमी न होगी। आपके राज्यमे रिआया कुचली जा रही है। हरएक गाँवकी आमदनी कम हो गई है। एक लाखकी जगह एक हज़ार और एक हज़ारके स्थानमें दस

ही रुपये वसूल होते हैं और वे भी बड़े कष्टसे। बादशाह और राजपूतोंके दरबारमे आज दरिद्रता और भिक्षावृत्तिने अड्डा जमा लिया है। उमरावो और अमलोकी हालत तो सहजमे ही सोची जा सकती है। आपकी अमलदारीमे सेना अस्थिर है, और बनिये अत्याचारसे पिसे हुए हैं। मुसलमान रोते है। हिन्दू जलते हैं। प्रायः सारी प्रजाको ही रातको रोटी नसीब नहीं होती है, और दिनमे मनके सन्तापके कारण हाथ मारनेसे उनके गाल लाल हो जाते हैं।

“ऐसी दुर्दशामें प्रजाके ऊपर जज़ियाका बोझ लाद देनेके लिए आपके राज-शाही दिलने आपको कैसे प्रेरित किया? बहुत जल्द ही पश्चिमसे पूर्व तक यह अपयश फैल जायगा कि हिन्दुस्तानके बादशाह भिक्षुकोंकी थालियोंपर लुब्ध दृष्टि डालकर ब्राह्मण पुरोहित, जैन यति, योगी, संन्यासी, वैरागी, दिवालिया, निर्धन और अकालके मारे हुए लोगोंसे जज़िया ले रहे है और भिक्षाकी झोलीकी छीना-झपटीमे आपका विक्रम प्रदर्शित हो रहा है! आपने तैमूरवंशके नाम और मानको बाट्टु दिया है!

“बादशाह सलामत! यदि आप खुदाकी किताब (=क़ुरान-शरीफ) में विश्वास करते हों, तो उसे देखें; आपको मालूम होगा कि वहाँ लिखा है कि ईश्वर सबका मालिक है (रब्-उल्-आलमीन्) केवल मुसलमानोंका ही मालिक (रब्-उल्-मुसलमीन्) नहीं है। यथार्थमें इसलाम और हिन्दू-धर्म दो भिन्नता-वाचक शब्दमात्र हैं, मानो ये दो भिन्न रंग है जिनसे स्वर्गस्थ चित्रकारने रंग देकर मानव-जातिके (नाना वर्णपूर्ण) चित्रपटको पूरा किया है।

“मसजिदमे उसके स्मरणके लिए अज़ान दी जाती है। मन्दिरमें उसकी खोजमे हृदयकी व्याकुलता प्रकाशित करनेके लिए घंटा

बजाया जाता है। अतएव अपने धर्म और कर्मकाण्डके लिए कट्टर-पन दिखाना ईश्वरके ग्रन्थकी बातोंको बदल देनेके सिवा और कुछ नहीं है। चित्रके ऊपर नई रेखा खींचकर हम लोग दिखाते हैं कि चित्रकारने भूल की है!

"यथार्थमें धर्मके अनुसार जज़िया किसी प्रकार भी न्यायसंगत नहीं है। राजनीतिके पहलूसे देखनेसे भी जज़िया केवल उसी युगमें न्याय्य हो सकता है जिस युगमे सुन्दरी स्त्रियाँ सोनेके गहने पहनकर बेखटके एक जगहसे दूसरी जगह सहीसलामत जा सकती है; परन्तु आजकल जब आपके बड़े बड़े शहर लूटे जा रहे हैं, तब गाँवोकी तो बात ही क्या? ऐसी हालतमे तो जज़िया न्याय-विरुद्ध है ही। उसके सिवा इस भारतमें यह एक नया अत्याचार है, और पूरी तरह हानिकारक भी है।

"अगर आप खयाल करे कि रिआयाके ऊपर ज़ुल्म करनेसे और हिन्दुओको डर दिखाकर दबा रखनेसे ही आपका धर्म प्रमाणित होगा, तो पहले हिन्दुओंके सिरमौर महाराणा राजसिंहसे जज़िया वसूल कीजिए। उसके बाद मुझसे वसूल करना कठिन न होगा, क्योंकि मैं तो आपकी सेवाके लिए हरदम हाज़िर हूँ। परन्तु इन मक्खियों और चींटियोको तकलीफ देनेमें कोई पुरुषार्थ नहीं है।

"मेरी समझमे नहीं आता कि आपके कर्मचारी क्यों ऐसे अद्भुत प्रभुभक्त बने है कि वे आपको देशकी असली अवस्था नहीं बताते, बल्कि उलटे जलती हुई आगको तिनकोसे दबाकर छिपाना चाहते है।

"आपका राजसूर्य गौरवके गगनमें कान्ति विकीर्ण करता रहे।" *

---

* लन्दनकी 'रायल एशियाटिक सोसाइटी' में रक्षित हस्तलिखित फारसी प्रतिलिपिका अनुवाद।

दिलेरका बीजापुरपर आक्रमण करना
और
शिवाजीका आदिलशाहके पक्षमें जा मिलना

सन् १६७९ के १८ अगस्तको दिलेरखाँने भीमा नदी पारकर बीजापुर राज्यके ऊपर चढ़ाई की। मसऊदने निरुपाय हो शिवाजीके पास हिन्दूराव नामक दूत द्वारा यह करुण निवेदन भेजा कि, " इस राज्यकी हालत आपसे छिपी नहीं है। हम लोगोंके पास सैन्य नहीं है, रुपये नहीं है, रसद नहीं है,—क़िलेके बचावके लिए कुछ भी सामान नहीं है। मुग़ल शत्रु प्रबल और हमेशा लड़नेके लिए तैयार है। आप इस वंशके दो पुश्तके नौकर है। इन सुलतानोंके हाथसे आपने मान-मर्यादा पाई है, अतएव इस राजवंशके लिए दूसरोंकी अपेक्षा आपको ज्यादा दुःख-दर्द होना चाहिए। आपकी सहायता बिना हम लोग इस देश और इस किलेकी रक्षा करनेमें असमर्थ है। नमकहलाली कीजिए। हम लोगोंके पक्षमें आइए। आप जो चाहेंगे, हम देंगे।"

इसपर शिवाजीने बीजापुरकी रक्षाका भार लिया। मसऊदकी सहायताके लिए उन्होंने दस हज़ार सवार और दो हज़ार बैलोंपर रसद लादकर राजधानीमें भिजवाई, तथा अपनी प्रजाको हुक्म दिया कि जिससे जितना हो सके, वह उतनी खानेकी चीज़े, कपड़े इत्यादि बीजापुरमे बेचे। उनके दूत विसाजी नीलकंठने जाकर मसऊदको ढाढ़स दिया—" आप किलेकी रक्षा कीजिए। हमारे प्रभु जाकर दिलेरको उचित शिक्षा देंगे। "

१५ सितम्बरको भीमाके दक्षिण किनारे धूलखेड़ गाँवसे चलकर दिलेरखाँ ७ अक्टूबरको बीजापुरसे उत्तरमें छः मीलकी दूरीपर जा

पहुँचा। इस महीनेके आखिरमें शिवाजी अपनी दस हज़ार फौज लेकर बीजापुरसे लगभग पचास मील पश्चिमकी ओर सेलगुड़ नामक स्थानपर पहुँचे। इससे पहले उनके जो दस हज़ार सवार बीजापुरकी ओर थे, वे भी यहाँ उनसे आ मिले। सेलगुड़से शिवाजी खुद आठ हज़ार सवार ले सीधे उत्तरकी ओर, और उनके दूसरे सेनापति आनन्द राव दस हज़ार घुड़सवार लेकर उत्तर-पूर्वकी ओर मुग़ल राज्य लूटने और भस्म करनेके लिए चले। उन्होने सोचा कि दिलेर अपने प्रदेशकी रक्षा करनेके लिए जल्द ही बीजापुर राज्य छोड़कर भीमा पार होकर उत्तरकी ओर लौटेगा, परन्तु दिलेरने बीजापुरकी राजधानी और सुलतानको अपने अधिकारमें करनेके लोभमे पड़कर अपने मालिकके राज्यकी दुर्दशाकी ओर दृष्टि भी न डाली।

दिलेरकी निष्ठुरता और शम्भूजीका पनहाले लौटना

बीजापुरके समान मज़बूत और बड़े क़िलेको जीतना दिलेरका काम न था। स्वयं जयसिंह भी यहाँ आकर विफल हुए थे। एक महीना व्यर्थ नष्ट करके, १४ नवम्बरको दिलेरखाँने बीजापुर शहरसे हटकर उसके पश्चिमके धनशाली नगरो और ग्रामोको लूटना आरम्भ किया। इस ओर मुग़ल आकर हमला करेंगे, इसकी आशंका किसीको भी न थी, क्योंकि मुग़लोके पीछेकी ओर राजधानी तब भी जीती नहीं गई थी। इसलिए इस ओरके शहर और गाँवके लोग भागे न थे, और न उन्होंने अपने स्त्री, पुत्र, धन-सम्पत्ति आदिको ही किसी निरापद स्थानमें हटाया था। इस प्रकार अचानक दुश्मनोंके हाथमे पड़कर उनकी बड़ी मिट्टी-पलीद हुई। "हिन्दू और मुसलमान स्त्रियोंने

बच्चोंको छातीसे चिपटाकर घरके कुओंमें कूद कूद कर अपना सतीत्व बचाया। गाँवके गाँव लूटकर उजाड़ दिये गये। एक बड़े गाँवके तीन हज़ार हिन्दू-मुसलमान, जिनमें बहुतसे नज़दीकके छोटे छोटे गाँवोंके भागे हुए शरण खोजनेवाले भी थे, गुलाम बनाकर बेच डाले गये!"

इस प्रकार बहुतसे स्थानोंको ध्वंस करता हुआ दिलेरखाँ बीजापुरसे ४३ मील पश्चिमकी ओर आथनी पहुँचा। उसने इस बड़े धन-जनपूर्ण शहरको लूटकर जला डाला और २० नवम्बरको वहाँके बाशिन्दोंको गुलाम बनाना चाहा। वे सबके सब हिन्दू थे, एवं शम्भूजीने इस अत्याचारमें बाधा डाली, परन्तु उनके मना करनेपर भी दिलेर न माना। इसपर शम्भूजी उसी रातको अपनी स्त्रीको पुरुषकी पोशाक पहनाकर घोड़ेपर सवार हो, केवल दस सवारोंको साथ ले दिलेरखाँके शिविरसे चुपचाप बाहर निकले और दूसरे दिन बीजापुर पहुँचकर उन्होंने मसऊदके यहाँ आश्रय लिया। यहाँ रहना भी निरापद न जानकर वे फिर भागे। रास्तेमें पिताके कतिपय सैनिकोंसे भेट हुई, और उनकी मददसे (४ दिसम्बर, १६७६ ई०को) वे पनहाला पहुँचे।

शिवाजीका जालना लूटना और आफतसे बचना

इसी बीचमें शिवाजी ४ नवम्बरको खेलगुड़से बाहर निकलकर मुग़ल राज्यमे घुस गये, और रास्तेके दोनों ओरके स्थानोंको लूटते-पाटते और जलाते हुए आगे बढ़ने लगे। क़रीब १५ नवम्बरको उन्होने (औरंगाबादसे ४० मील पूर्व) जालना शहर लूटा। परन्तु इस धन-जनपूर्ण वाणिज्यके केन्द्रमे उतना धन नहीं मिला जितना मिलना चाहिए था। बादमे उनको मालूम हुआ कि यहाँके महाजनोंने अपना

अपना रुपया-पसा शहरके बाहर सैयद जानमहम्मद नामक मुसलमान साधुके आश्रममें छिपा रखा है, क्योंकि यह सभी जानते थे कि शिवाजी मन्दिरो, मसजिदो, मठो और पीरोंके स्थानोकी इज्जत करते हैं, और उनपर हाथ नहीं डालते। इसपर सब मराठे सिपाही उस आश्रममें घुस गये और उन्होने भगोड़ोंके रुपये-पैसे छीन लिए। इस लूट-पाटमें मराठोने किसी-किसीको तो घायल भी किया। जब साधुने आश्रमकी शान्ति भंग करनेको मना किया, तब वे सब उसको गाली देने लगे और मारनेको भी तैयार हो गये। इसपर गुस्सा होकर उस महाशक्तिवान् पुण्यात्माने शिवाजीको शाप दिया। इसके पॉच महीने बाद ही शिवाजीकी मृत्यु हुई। लोगोंका कहना था कि पीरके क्रोधके कारण ही ऐसा हुआ।

मराठी फौज चार दिन तक जालना नगर और उसके आस-पासके गाँव और बगीचे लूटकर पश्चिमको अपने देशकी ओर लौटी। साथमे लूटके असंख्य रुपये, गहने, हीरे-जवाहरात, कपड़े, हाथी और घोड़े थे, इसलिए वे धीरे धीरे जा रहे थे। रणमस्तखाँ नामक एक साहसी और तेज़ मुग़ल फौज़दारने उस समय पीछेसे आकर मराठी फौजपर आक्रमण किया। शिधोजी निम्बालकरने पाँच हज़ार फौज ले उसकी ओर मुड़कर उसे रोका। तीन दिन तक लड़ाई चली। शिधोजी और उनकी दो हज़ार फौज मारी गई। इसी बीच रणमस्तखॉकी सहायताके लिए मुग़लोंकी दाक्षिणात्यकी राजधानी औरंगाबादसे बहुत-सी फौज आ रही थी। तीसरे दिन नई मुग़ल सेना लड़ाईकी जगहसे छः मीलकी दूरीपर पहुँचकर रातको वहीं ठहर गई। अब तो शिवाजी चारो ओरसे घिर गये और उनके पकड़े जानेमे कोई संशय नहीं रहा, लेकिन इस नई फौजके सरदार केसरीसिंहने चुपचाप उसी

रातको शिवाजीको कहला भेजा कि सामनेका रास्ता बन्द होनेसे पहले ही आप सर्वस्व छोड़कर इसी दम देश भाग जायँ। हकीकतमे बहुत बुरी हालत देखकर शिवाजी लूटका माल, दो हज़ार घोड़े इत्यादि सब सामान उसी जगह छोड़कर केवल पाँच सौ चुने हुए सवार लेकर स्वदेशकी ओर रवाना हो गये। उनके चालाक प्रधान चर बहिरजीने एक अज्ञात रास्ता दिखाकर, तीन दिन तीन रात लगातार कूच करके उन्हें एक निरापद स्थानमें पहुँचा दिया। इस प्रकार शिवाजीके प्राणोंकी रक्षा हुई। लेकिन इस लड़ाई और भागनेमे उनके चार हज़ार सैनिक मारे गये। सेनापति हम्बीरराव भी इसी लड़ाईमें काम आये, और बहुतसे मराठे योद्धा मुग़लो द्वारा क़ैद कर लिए गये।

लूटका सब माल छोड़कर केवल पाँच सौ रक्षकोंके साथ शिवाजी थके-माँदे (२२ नवम्बरको) पट्टादुर्गमे पहुँचे। यह क़िला नासिक शहरसे २० मील पूर्वमे है। यहाँ कुछ दिन आराम करनेके बाद ही वे चलने-फिरने योग्य हुए, इसीलिए पट्टादुर्गका नाम 'विश्रामगढ़' रख दिया गया।

इसके बाद दिसम्बर महीनेके शुरूमें उन्होने रायगढ़ जाकर तीन सप्ताह बिताये। शम्भूजीके (४ दिसम्बरको) पनहाला लौट आनेपर शिवाजी खुद जनवरीके आरम्भमे उस क़िलेमे गये। पिछले नवम्बरके आखिरी सप्ताहमे मराठी फ़ौजके एक दलने खानदेशमें प्रवेश कर धारणगाँव, चोपरा आदि बड़े बड़े बाज़ार लूटे।

परिवारकी अन्तिम व्यवस्था

बड़े लड़केके दुश्चरित्र और दुर्बुद्धिकी बात सोचकर शिवाजी अपने

राज्य और वंशके भविष्यके सम्बन्धमें बहुत हताश हो गये थे। उनके उपदेशों और मीठी बातोंका कुछ भी फल न हुआ। शिवाजीने पुत्रको अपने विशाल राज्यके सब महल, किले, धन-भाण्डार, हाथी, घोड़े और फौजकी सूची दिखाई, और सज्जन और उच्चाकांक्षी राजा बननेके लिए उसे अनेक उपदेश दिये। शम्भूजीने पिताकी बातें चुपचाप सुनीं और अन्तमे कहा—"आपकी जैसी इच्छा है, वही हो।" अपनी मृत्युके बाद महाराष्ट्र राज्यकी क्या दशा होगी, यह बात शिवाजीको स्पष्ट मालूम हो गई थी। इसी दुर्भावना और चिन्ताने उनकी आयुका ह्रास किया। शम्भूजी फिर पनहाले-किलेमे कैद रखे गये। शिवाजी (फरवरी १६८० ई० में) रायगढ़ लौट आये। अन्त निकट आ गया है, यह समझकर शिवाजीने जल्दी जल्दी अपने दस वर्षके छोटे लड़के राजारामका उपनयन और विवाह (७ और १५ मार्चको) कर दिया।

शिवाजीकी मृत्यु

२३ मार्चको शिवाजीको बुखार और रक्त-आमाशय मालूम हुआ। बारह दिन तक तकलीफ कम न हुई। धीरे धीरे उनके बचनेकी कोई आशा न रही। उन्होने भी अपनी दशा समझ कर्मचारियोंको बुलाकर उपदेश दिया। उन्होने अपने रोते हुए स्वजन, प्रजा और सेवकोंसे कहा—"जीवात्मा अविनाशी है। हम युग युगमे फिर भी पृथ्वीपर आवेगे।" उसके बाद चिरयात्राके लिए प्रस्तुत हो, अन्तिम समयके उपयुक्त क्रियाकर्म दान-पुण्य आदि कर्म करवाये।

आखिरमे चैत्र-पूर्णिमाके दिन (रविवार, ४ अप्रैल, १६८० ई०को) सबेरे उनकी चेतनाका लोप हो गया, वे मानो सो गये। दोपहरको

यह बेहोशी अनन्त निद्रामें परिणत हो गई। मराठा-जातिके नवजीवनदाता कर्मक्षेत्र शून्य कर वीरवांछित धामको चले गये! मृत्युके समय शिवाजीकी उम्र पूरे ५३ वर्षकी भी नहीं हुई थी, छः दिन तब भी बाकी रहे थे।

सारा देश स्तम्भित और वज्राहत हो गया। हिन्दुओंकी अन्तिम आशा भी लोप हो गई!

तेरहवाँ अध्याय

शिवाजीका राज्य और उनकी शासन-प्रणाली

शिवाजीके राज्यका फैलाव और विभाग

तीस वर्षके लगातार परिश्रम और कठिन उद्योगके द्वारा शिवाजीने जो राज्य निर्माण किया था, उसका सत्तेपमें विवरण देना असम्भव है। कारण यह है कि भिन्न भिन्न स्थानोमे उनका अधिकार भिन्न भिन्न प्रकारका था, और उनका प्रभाव भी विभिन्न परिमाणमे था।

पहले लीजिए उनका अपना देश। इसको मराठीमे 'शिव-स्वराज' और फारसीमे 'पुराना राज' (मुमालिक-ए-क़दीमी) कहते थे। यहाँ उनका अधिकार और क्षमता स्थायी रूपसे थी, और उसको सब मानते थे। उसका फैलाव सूरत शहरसे साठ मील दक्षिणमे कोली देशसे लेकर गोआके दक्षिणमे कारवार शहर तक था। इस बीचमें पश्चिमी किनारेपर केवल पुर्तुगालियोके दो शहर, गोआ और दमन, छूट जाते थे। इस देशकी पूर्वीय सीमाकी रेखा बगलाना होती हुई दक्षिणकी ओर नासिक और पूना जिलेके मध्य-भागको भेदती, सतारा और कोल्हापुर ज़िलोंमे घूमकर उत्तर कर्णाटकके किनारे गंगावती नदी-पर जाकर समाप्त होती थी। अपनी मृत्युके दो वर्ष पहले शिवाजीने पश्चिमी कर्णाटकमे बेलगाँवसे पूर्वमे तुंगभद्रा नदीके तटवर्ती कोपल आदि ज़िलोंपर भी अधिकार कर लिया था। ये भी उनके स्थायी अधिकारमे आ गए थे।

यह ‘ शिव-स्वराज ’ तीन सूबेदारोंके अधीन तीन प्रदेशोंमें विभक्त था—

(१) देश, अर्थात् खास महाराष्ट्र; पेशवाके अधीन था।

(२) कोकण, अर्थात् सह्याद्रिसे पश्चिमका प्रदेश; अण्णाजी दत्तोके अधीन था।

(३) दक्षिण-पूर्व-विभाग, अर्थात् दक्षिणी महाराष्ट्र और पश्चिमी कर्णाटक; दत्ताजी पन्तके अधीन था।

द्वितीयतः, यद्यपि पूर्वीय कर्णाटक यानी मद्रासकी (१६७७-७८ ई०) दिग्विजयके फलस्वरूप जिंजी, बेलूर आदि ज़िले उनके हाथमें आ गये थे, परन्तु वहाँ उनकी सत्ता स्थायी नहीं हो पाई थी। जितनी ज़मीनपर उनकी फौज कब्ज़ा कर सकती थी अथवा जहाँ राजस्व वसूल कर सकती थी, उतनेहीसे उनको सन्तोष करना पड़ता था। अन्यत्र सब जगह अराजकता और पुराने छोटे छोटे सामन्तोंके झगड़े थे। मैसूर प्रदेशमे जीते हुए कई स्थानोंकी भी यही दशा थी। उनकी मृत्युके पहले तक कर्णाटक-अधित्यकामें, यानी वर्तमान बेलगाँव और धारवार ज़िलोमे, तथा सोन्दा और बिदनौर राज्योमे लड़ाई जारी थी। वहाँ उनकी सत्ता डाँवाडोल अवस्थामे ही थी।

तृतीयतः, इन सब स्थानोंसे बाहर आसपासके समीपस्थ प्रदेशोंमें उनकी सेना हर साल शरदऋतुमें छः महीने रहकर चौथ वसूल किया करती थी। यह कर राजाका प्राप्य राजस्व नहीं था। यह डाकुओंको खुश रखनेका उपाय-मात्र था, इसके मराठी नाम ‘ खंडनी ’ (‘ यह रुपये लेकर हमे रिहाई दो, बाबा ! ’) से ही यह बात स्पष्ट मालूम हो सकती है। और चौथ वसूल करनेपर भी मराठे लोग

दूसरे शत्रुओंके आक्रमणसे उस देशकी रक्षा करना अपना कर्तव्य नहीं मानते थे, इससे भी यही बात प्रकट होती है। चौथके बदलेमें स्वयं उस देशको न लूटनेका ही वे अनुग्रह दिखाते थे।

राजस्व और धन-भांडार

शिवाजीके सभासद कृष्णाजी अनन्तने सन् १६९४ ई० मे लिखा था कि उनके मालिकके राजस्वका परिमाण प्रतिवर्ष एक करोड़ होण और चौथ अस्सी लाख होण तक थी। होण सोनेकी बहुत छोटी मुद्रा होती थी। उसका दाम पहले चार रुपयेके बराबर था, और बादमे पाँच रुपयेके बराबर हो गया था। इस हिसाबसे इन दोनों मदोंसे शिवाजीकी आय प्रतिवर्ष सातसे लेकर नौ करोड़ रुपयो तककी होती थी; परन्तु वास्तवमे वसूल बहुत कम होता था, और वह भी प्रतिवर्ष समान रूपसे प्राप्त नहीं होता था। उनकी मृत्युके बाद उनके भांडारमे जो धन-दौलत मिली, उसका परिमाण मराठी भाषाके 'सभासद बखर' और फारसी इतिहास 'तारीख-ए-शिवाजी' में विस्तृत रूपसे दिया गया है। इसमे सोनेके सिक्कोकी तादाद थी छः लाख मोहर और प्रायः पचास लाख होण। इसके अतिरिक्त साढ़े बारह खंडी वज़नके सोनेके डले थे। चाँदीके ५७ लाख रुपये थे और ५० खंडी वज़नकी चाँदी थी। इनको छोड़कर हीरा, मणिमुक्ता आदि रत्न लाखो मूल्यके थे। (एक खंडी कलकत्तेके सात मनसे कुछ कम, ६·८ मनके बराबर होती थी)।

अष्ट प्रधान

सन् १६७४ ई० मे राज्याभिषेकके समय शिवाजीके आठ मन्त्री थे। राज्याभिषेकके उपलक्षमे उनके पदोंकी उपाधियाँ फारसीसे संस्कृतमें

बदल दी गई थीं ।

(१) मुख्य प्रधान (फारसी, पेशवा); यही प्रधान मन्त्री, राजाके प्रतिनिधि और दाहने हाथ थे । नीचेके पदके कर्मचारियोंमे मतभेद होनेपर ये ही उसका फैसला करके राज-काजको सुविधापूर्वक चलाते थे, परन्तु अन्य सात प्रधान उनके अधीन अथवा उनकी आज्ञामें नहीं थे । उनमेसे प्रत्येक अपने अपने विभागमें केवल राजाको छोड़कर और किसीको अपना प्रभु नहीं मानता था ।

(२) अमात्य (फारसी, मजमुआदार) या हिसाब जाँचनेवाले (आडिटर या एकाउण्टेण्ट-जनरल); उनके हस्ताक्षरके विना राज्यके आय-व्ययके हिसाबके कागज़-पत्र ग्राह्य नहीं होते थे ।

(३) मन्त्री (फारसी, वाक़ियानवीस); ये राजाके रोज़मर्राके काम-काज और दरबारकी घटनाओंको लिखते थे । गुप्त रूपसे कोई राजाकी हत्या करने अथवा उनपर विष प्रयोग करनेकी चेष्टा न करे, इसलिए राजाके संगियो, दर्शन चाहनेवाले आगन्तुको और खाने-पीनेकी चीज़ोंके ऊपर इस मन्त्रीको सतर्क दृष्टि रखनी पड़ती थी ।

(४) सचिव (फारसी, शुरूनवीस); इनका काम था कि वे देखे कि सरकारी चिट्ठी-पत्रीकी भाषा ठीक हुई या नहीं; जाली राजपत्रकी सृष्टि न हो, इसलिए सचिवको हर एक फर्मान और दान-पत्रकी पहली पंक्ति स्वयं अपने हाथोंसे लिखनी पड़ती थी ।

(५) सुमन्त (फारसी, दबीर) या परराज्य-सचिव (फ़ारेन सेक्रेटरी); ये विदेशी दूतोंकी खातिरदारी और विदाई करते थे; और गुप्तचरोंकी सहायतासे दूसरे राज्योंकी खबरें मँगाते थे ।

(६) सेनापति (फारसी, सर-ए-नौबत) ।

(७) दानाध्यक्ष;—इसका मराठी भाषामें पुकारनेका नाम "पंडितराव' था (फारसी, सदर और मुहतासिबका पद मिलाकर था); ये राज्यकी ओरसे ब्राह्मण-पंडितोकी दक्षिणा तय करते, धर्म और जाति-सम्बन्धी झगड़ोका विचार करते, पापाचार एवं धर्मभ्रष्टताकी सज़ा देते और प्रायश्चित्त-विधिकी आज्ञा देते थे।

(८) न्यायाधीश (फारसी, काज़ी-उल-कुजात्) या प्रधान विचारपति (चीफ-जस्टिस); धर्म-सम्बन्धी मामलोको छोड़कर और सब विवादोके विचारका भार इनके हाथमे था।

इन लोगोमेंसे सेनापतिको छोडकर और सबके सब प्रधान जातिके ब्राह्मण थे; किन्तु ब्राह्मण होनेपर भी दानाध्यक्ष और न्यायाधीशको छोड़कर अन्य पाँचो मन्त्रियोंको समय समयपर फौजका नेता बनकर लड़ाईमे जाना पड़ता था, और वे क्षत्रियोकी अपेक्षा किसी अंशमे भी कम वीरत्व अथवा रणचातुरी नहीं दिखाते थे। फ़र्मान, दानपत्र, सन्धिपत्र इत्यादि सम्पूर्ण बड़े बड़े सरकारी कागज़ोपर पहले राजाकी मोहर, उसके बाद पेशवाकी छाप और सबके नीचे अमात्य, मन्त्री, सचिव और सुमन्त—इन चार प्रधानोके हस्ताक्षर रहते थे।

वर्तमान युगमे विलायतकी मन्त्री-सभा (केबिनट) ही सचमुच सारे देशपर शासन करती है। वे सब विभागोंमें अपनी आज्ञा चलाते हैं, और लड़ाई, सन्धि, राजस्व, शिक्षा इत्यादि सब बातोंमें राज्यकी नीति स्थिर करते है। बादशाहको भी उनका मत मानना ही पड़ता है, क्योंकि देशके अधिकांश लोग उनका समर्थन करते हैं। यदि बादशाह उनकी सम्मतिके अनुसार काम न करे तो मन्त्रीगण अपने पद त्याग देंगे, साधारण जनता बिगड़ उठेगी और दबना

पड़ेगा।—सम्भव है कि बादशाहको सिंहासन भी छोड़ना पड़े; परन्तु शिवाजीके ऊपर मराठें अष्ट प्रधानोंका ऐसा कुछ भी अधिकार न था। वे राजाके मुहर्रिर या मुंशी (सेक्रेटरी) मात्र थे। उनका कर्तव्य होता था राजाकी आज्ञाओंका पालन करना। अष्ट प्रधानोंका कोई उपदेश सुनना या न सुनना, राजाकी इच्छापर निर्भर था। प्रधान लोग किसी विषयमें भी राज्यकी नीति निर्धारित नहीं कर सकते थे,—यहाँ तक कि उनके निम्न कर्मचारी भी अपने विभागके मन्त्रीके विरुद्ध राजाके पास अपील कर सकते थे। फिर इन अष्ट प्रधानोंमेंसे प्रत्येक खुदमुख़्तार था। वे अँग्रेज़ोंकी कैबिनेटके सदस्योंकी तरह एक सुसंगठित शृंखला अथवा दलमे बँधे हुए न होते थे।

मुहर्रिर लोग और बहुतसे स्थानोंमें हिसाब-किताब रखनेवाले भी प्रायः सबके सब ही जातिके कायस्थ थे (चिटनवीस, फ़ईनवीस इत्यादि)। फ़ौजका हिसाब लिखता था 'सबनीस' उपाधिधारी श्रेणीका एक कर्मचारी। इन लोगोंका पद सामान्य होनेपर भी प्रभाव बहुत अधिक था। शिवाजीके कर्मचारीगण (विशेष करके सूबेदार, थानेदार आदि) बड़ी निर्लज्जताके साथ लोगोंको कष्ट देकर घूँस लेते थे और राजस्वको अपना धन बनाकर जमा करते थे।

शिवाजीकी सेनाकी संख्या

अँग्रेज़ोंके आनेके पहले हमारे देशमें दो प्रकारके घुड़सवार फौजमें भर्ती किये जाते थे। एक तो वे जो राजाके नौकर होते थे और जो सरकारकी ओरसे हथियार, कवच और घोड़े आदि साज-सामान पाते थे। उनका नाम था 'पागा'। दूसरे किरायेके घुड़सवार होते थे जो अपने निजके हथियार, कवच और घोड़ा आदि सामान रखते थे

और बुलाये जानेपर अनेको राज्योमे वेतन लेकर लड़ा करते थे। वे 'सिलेदार' कहलाते थे। पागा सैन्यको फारसीमे 'बारगीर' (भारवाही) कहते थे। इसीसे बंगाली भाषाके 'बर्गी' शब्दकी उत्पत्ति हुई है। जिस साल अथवा जिस चढ़ाईमें जितने लोगोंकी आवश्यकता होती थी, उसीके अनुसार राजा कम या अधिक सिलेदार किरायेपर बुला लेते थे।

राज्य-स्थापनके आरम्भमें शिवाजीके अधीन एक हज़ार (अथवा बारह सौ) पागा और दो हज़ार सिलेदार घुड़सवार थे। उसके बाद राज्य फैलने और दूर दूरके देशोपर आक्रमण करनेके कारण उनका सैन्य-दल क्रमशः बढ़ते बढ़ते उनके जीवनके अन्तिम कालमे निम्नलिखित-संख्या तक पहुँच गया थे—

४५,००० पागा—२९ सेनापतियोके अधीन, २९ दलोमे विभक्त था।

६०,००० सिलेदार—३१ सेनापतियोके अधीन थे।

१,००,००० मावले सिपाही—३६ सेनापतियोके अधीन थे।

ये सिपाही आजकलके सभ्य संसारके सिपाहियोकी तरह बारहों महीने कूच या कवायद नहीं किया करते थे। वे खेती-बारीके समय अपने गाँवोमें जा जाकर खेती करते थे और विजयादशमीके दिन विदेश-आक्रमणके लिए अथवा युद्धकी आशंका होनेपर उससे पहले ही छावनीमें आकर इकट्ठे हो जाते थे। तब उनको हथियार, कवच आदिसे सुसज्जित करके नेताओंके अधीन दलोमें बाँटकर फ़ौजका संगठन किया जाता था। क़िलेकी रक्षा करनेवाले सिपाही इनसे भिन्न होते थे। उन लोगोंको खेती करनेके लिए क़िलेके नीचे

ज़मीन मिलती थी, और वे अपने परिवारको क़िलेमें और कभी कभी क़िलेके नीचेके गाँवोंमे रखते थे। वे बारहों महीने नौकर रहते थे। उन्हें घर छोड़कर दूर जाना नहीं पड़ता था।

शिवाजीके पास अपने निजके १२६० (किसी किसीके मतानुसार तीन सौ) हाथी, ३००० ऊँट और ३७००० घोड़े थे।

सैन्य-विभागकी शृंखला

राजाके निजी घुड़सवारोंके दल (पागा) का संगठन इस प्रकार था—पचीस साधारण सिपाहियों (बर्गी) के ऊपर एक हवलदार (सार्जेन्ट), पाँच हवलदारोंके (१२५ साधारण सवारोंके) ऊपर एक जुमलादार (कप्तान), और दस जुमलादारोंके (१२५० सवारोंके) ऊपर एक हज़ारी (कर्नल) होता था। उसके ऊपर पाँच हज़ारी (ब्रिगेडियर-जनरल) और सबके ऊपर सर-ए-नौबत (कमाण्डर-इन-चीफ़) होता था। हर पचीस घुड़सवारोंके लिए एक भिश्ती और एक नालबन्द नियत रहता था।

पैदल सिपाहियोंके विभागमें नौ सिपाहियों अथवा 'पाइक' के ऊपर एक नायक (कार्पोरल), पाँच नायकोंके (४५ पाइकोंके) ऊपर एक हवलदार, दो अथवा तीन हवलदारोंके ऊपर एक जुमलादार और दस जुमलादारोंके ऊपर (९००–१३५० पाइकोंके) ऊपर एक हज़ारी होता था।

राजाके शरीर-रक्षक (गार्ड ब्रिगेड) दो हज़ार चुने हुए मावले प्यादा थे। ये लोग चमक-दमकवाली पोशाकों और अच्छे अच्छे हथियारोंसे सजे रहते थे।

हरएक सैन्य-दल (रेजिमेन्ट) के साथ एक एक हिसाब जाँचने-

वाला (मजमुआदार), सरकार (कारभारी) और आमदनी लिखनेवाला (जमानवीस) रहता था।

पागा जुमलादारका वार्षिक वेतन ५०० होण
,, मजमुआदारका ,, ,, १०० से १२५ होण
,, हज़ारीका ,, ,, १००० होण
,, जमानवीस आदि तीन
मनुष्योका कुल ,, ,, ५०० होण
पागा पाँच हज़ारीका प्रति वर्ष वेतन २००० होण
प्यादा जुमलादारका ,, १०० ,,
,, ,, सबनीसका ,, ४० ,,
,, हज़ारीका ,, ५०० ,,
,, हज़ारी सबनीसका ,, १०० से १२५ होण

शिवाजीकी रण-नीति

शिवाजीकी फौज वर्षाकालमे अपने ही देशमे छावनीमे चली जाती थी। वहाँ घास, घोड़ोका चारा, औषध, फूसकी कुटियाँ, घोड़ोके अस्तबल आदिका बन्दोबस्त रहता था। विजयादशमीके दिन फौज छावनीसे कूच कर बाहर निकलती थी। उसी समय फौजके छोटे-बड़े सब आदमियोकी सम्पत्तिकी तालिका लिखकर रख ली जाती थी। उसके बाद वे देश लूटने जाते थे। आठ महीने तक फौज पराये देशोमें पेट भरती और चौथ वसूल करती रहती थी। औरते, दासियाँ और नाचनेवाली स्त्रियाँ फौजके साथ नहीं जा सकती थीं। जो सिपाही इस नियमको भंग करता था उसका सिर काटनेका हुक्म था। " शत्रुओके देशकी स्त्रियों और बच्चोको मत पकड़ो; केवल मर्दोको ही

क़ैद करो। गाय मत पकड़ो। हाँ, बोझा ढोनेके लिए बैल ले सकते हो। ब्राह्मणोंके ऊपर अत्याचार मत करो। चौथके लिए किसी ब्राह्मणकी जमानत मत लो। कोई भी कुकर्म मत करो। आठ महीने तक परदेशोंपर चढ़ाई करनेके बाद वैशाख मासमें लौटकर छावनीमें चले आओ। अपने देशकी सीमापर पहुँचते ही फौजकी सब चीज़ोंकी तलाशी ली जायगी। पहलेकी तालिकासे मिलान करनेपर जो माल अधिक निकलेगा, उसका दाम उनके वेतनसे काटा जायगा। क़ीमती चीज़ होनेपर उसे सरकारमें जमा कराना पड़ेगा। अगर कोई सिपाही धन, रत्न आदि छिपाये और उसके सरदारको यह मालूम हो जाय, तो उसे सज़ा मिलेगी।

"छावनीमें फौजके पहुँचनेपर हिसाब करके लूटका सोना, चाँदी, रत्न, वस्त्रादि लेकर सब सरदार राजाके दर्शनके लिये जायँगे। वहाँ वे हिसाब समझकर सारा माल राज-भांडारमें जमा करके फौजकी तनख़्वाहका जो हिसाब पाना होगा, उसे राजकोषसे लेंगे। अगर नक़द रुपयेके बदले कोई चीज़ लेनेकी इच्छा हो, तो हुज़ूरसे माँग कर लेंगे। पिछली चढ़ाईमें जिसने जैसा काम किया अथवा कष्ट सहन किया होगा, उसीके अनुसार उसको इनाम दिया जायगा। किसीने यदि नियम-विरुद्ध काम किया होगा, तो उसकी खुलेआम जाँच होगी और उसके ऊपर विचार कर उसे निकाल दिया जायगा। उसके बाद चार महीने (दशहरे तक) फौजोंको छावनीमें रहना पड़ेगा।"—(सभासद-बखर)

क़िलेका बन्दोबस्त

शिवाजीने हरएक क़िले और थानेको तीन श्रेणियोंके हाकिमोंके

हाथमें रखा था। इनमेंसे हरएक अपने अपने विभागमें स्वतन्त्र था। प्रत्येक व्यक्ति अन्य दो आदमियोंके ऊपर ईर्ष्याभाव और सतर्क दृष्टि रखता था, इसीलिए उन लोगोंका एक साथ मिलकर मालिकका किला और सम्पत्ति नाश करनेका षड्यन्त्र रचना असम्भव था। ये तीन व्यक्ति थे—(१) हवलदार, (२) सर-ए-नौबत और (३) सबनीस। इनमेंसे पहले दो जातिके मराठा होते थे और तीसरा ब्राह्मण, इसलिए जाति-भेदके झगड़ेसे भी उन तीनों आदमियोंके गुप्त दल बननेका भय न था। किलेका रसद-पानी एक कायस्थ लेखक (कारखाना-नवीस) के जिम्मे रहता था। प्रत्येक बड़े किलेकी दीवारें चार-पाँच टुकड़ोंमें बाँट दी गई थीं। हरएक टुकड़ा एक रक्षक (तटसर-ए-नौबत) के हाथमें रहता था। किलेके बाहर पारवारी और रामुशी (वंशगत चोर), इन दो जातियोंके लोग पहरा देते थे।

किलेका हवलदार अपने नीचेके अमलदारोंको बरखास्त कर सकता था। सरकारी चिट्ठी-पत्री उसीके नाम आती थी, और सरकारी पत्रोंपर वह अपनी मोहर लगा कर भेजता था। उसका काम था रोज़ शामको किलेके फाटकका ताला बन्द करना और सवेरे उसे खोलना। फाटककी चाबियोंको वह हमेशा साथ रखता था। रातको भी उन्हें अपने तकियेके नीचे रख कर सोता था। वह बराबर चारों ओर घूम घूम कर यह देखता था कि किलेके भीतर-बाहर सब ठीक है कि नहीं। वक्त-बेवक्त बिना खबर दिये हुए सहसा चुपकेसे पहुँच-कर वह यह देखता था कि पहरेदार सो रहे हैं अथवा खबरदारीसे पहरा दे रहे हैं। सर-ए-नौबत रातको चौकीदारोंका काम देखता था।

ज़मीनकी मालगुज़ारी और शासन-प्रणाली

" देशकी सारी ज़मीन नापकर खेतोका भाग किया जायगा। अट्ठाईस अंगुलका एक हाथ; पाँच हाथ और पाँच मुट्ठीका एक कट्ठा; बीस कट्ठा लम्बा और बीस कट्ठा चौड़ाईका एक बीघा; १२० बीघोका एक चावर। इसी नापसे हरएक गाँवमें ज़मीन नापी जायगी। हरएक बीघेकी पैदावार निश्चित करके उसके दो भाग राजा लेगे और तीन भाग प्रजाको मिलेगा।

" नई रिआयाको बसाकर उसके खानेके लिए और गाय, बैल तथा बीज खरीदनेके लिए पेशगी रुपया दिया जायगा जो दो-चार वर्षके भीतर वापस वसूल कर लिया जायगा। रिआयासे फसल-काटते समय पैदावारके अनुसार राज-कर लिया जायगा।

" प्रजा ज़मींदार, देशमुख और देसाइयोंके अधीन न रहेगी। ये लोग प्रजाके ऊपर कोई अधिकार न चला सकेंगे। दूसरे राज्योंमे ये सब पुश्तैनी भूस्वामी लोग (मिरासदार) धन, क्षमता और सैन्य-बल बढ़ाकर प्रायः स्वाधीन हो उठे थे। बेचारी असहाय प्रजा उनके हाथमे थी। वे देशके राजाको नहीं मानते थे और प्रजासे जो राज-कर वसूल करते थे उसे खुद खा जाते थे; राज्य-कोषमे बहुत कम रुपया जमा करते थे। शिवाजीने इस श्रेणीके ज़मींदारोका दर्प चूर्ण कर दिया। मिरासदारोंके किले तोड़कर, केन्द्रस्थानोमे अपनी फौजका थाना स्थापित करके ज़मींदारोंके हाथसे सब अधिकार छीन लिये और उनकी प्राप्य आयकी एक दर निश्चित कर दी। इस प्रकार उन्होंने ज़मींदारोंके प्रजापीड़न और राजस्व लूटनेका रास्ता ही बन्द कर दिया। ज़मींदारोको अपने गढ़ बनानेकी मनाई कर दी गई।

हरएक गाँवके कर्मचारीको अपने कर्म एवं परिश्रमके अनुसार उचित हिस्सेके सिवा (अन्नके अंशके सिवा) और कुछ न मिलेगा।" (सभासद)।

उसी प्रकार जागीरदार लोग भी अपनी अपनी जागीरके महालोंमें खाली मालगुजारी वसूल करते थे। प्रजाके ऊपर भूस्वामी अथवा शासनकर्ताकी तरह उनको किसी भी प्रकारके अधिकार नहीं थे। किसी भी सिपाही, अफ़सर या रैयतको ज़मीनपर स्थायी स्वत्व (मोकासा) नहीं दिया जाता था: क्योंकि ऐसा होनेपर वे स्वाधीन होकर विद्रोह करते थे और देशमें राजाकी सत्ता ही लोप हो जाती थी।

"लगभग एक लाख होण वसूल होनेवाले महालके ऊपर एक सूबेदार (वार्षिक वेतन चार सौ होण) और एक मजमुआदार (वार्षिक वेतन १०० से १२५ होण) रखे जाते थे। पालकी-खर्चके लिए सूबेदारको चार सौ होण और मिलते थे। ये सब सूबेदार जातिके ब्राह्मण होते थे और पेशवाके निरीक्षणमे रहते थे।" (सभासद)।

धर्म-विभाग

"राज्यमे जहाँ जहाँ देव-मंदिर थे, शिवाजी वहाँ वहाँ दीप, नैवेद्य नित्य, पूजा-पाठ, इत्यादिका बन्दोबस्त करते थे। मुसलमान पीरोंके स्थानों और मसजिदोंमे प्रदीप इत्यादि जलानेके लिए उन स्थानोंके नियमानुसार धनकी सहायता देते थे। उन्होने बाबा याकूत नामके एक पीरको भक्तिपूर्वक अपने खर्चसे केलशी नामक शहरमे बसाकर ज़मीन दान की थी। प्रत्येक ग्रामके वेद-क्रियामें निपुण ब्राह्मणोंके योग-क्षेमके लिए और विद्यावन्त, वेदशास्त्र जाननेवाले ज्योतिषी, अनुष्ठानी, तपस्वी तथा सत्पुरुष ब्राह्मणोंको चुन चुन कर उनके परि-

वारकी संख्याके हिसाबसे जितना अन्न-वस्त्र आवश्यक होता था, उसीके अनुकूल आमदनीवाले महाल गाँव गाँवमे दिये जाते थे। हर साल सरकारी हाकिम लोग यह सहायता उनके यहाँ पहुँचा देते थे।" (सभासद)

"लुप्त वेदचर्चा शिवाजीके अनुग्रहसे फिर जाग उठी। जो ब्राह्मण विद्यार्थी एक वेद कंठस्थ करता, उसे हर साल एक मन चावल; जो दो वेद कंठस्थ करता था, उसे दो मन; इस प्रकार दान होता था। हर साल उनके पंडितराव श्रावणके महीनेमें छात्रोंकी परीक्षा ले उनकी वृत्तिको घटा-बढ़ा देते थे। विदेशी पंडितोंको सामग्री और महाराष्ट्र देशके पण्डितोको खानेकी चीज़ें दक्षिणा-स्वरूप दी जाती थीं। बड़े बड़े पंडितोको बुलाकर उनकी सभा करके उन्हे बिदाईमे नक़द रुपये दिये जाते थे।" (चिटनीस बखर)।

चौदहवाँ अध्याय

शिवाजीके गुरु और शिव-परिवार

शिवाजीके गुरु रामदास स्वामी (जन्म १६०८ ई०, मृत्यु १६८१ ई०) महाराष्ट्र देशके बड़े प्रसिद्ध और सर्वमान्य साधु पुरुष थे। उनकी भक्तिरसपूर्ण शिक्षाकी वाणी अत्यन्त सरल, सुन्दर और पवित्र है। शिवाजीने सन् १६७३ ई०मे सताराका क़िला जीतकर उससे चार मील दूर पारली-दुर्गपर अधिकार कर लिया। इसी पारली-दुर्गको सज्जन-गढ़ (साधुओंका गढ़) नया नाम देकर शिवाजीने वहीं अपने गुरुके लिए एक आश्रम बना दिया, और रामदास स्वामीको वहीं लाकर रखा तथा उनके लिए मन्दिर, मठ आदि बनवा दिये। संन्यासियों और भक्तोंके भरण-पोपणके लिए नज़दीकके गॉवमे देवोत्तर ज़मीन दी। अब भी लोग कहते है कि सताराके फाटकके ऊपरकी चोटीके एक पत्थरपर बैठकर शिवाजी पारली-स्थित गुरुके साथ देवबलसे बात-चीत किया करते थे। रामदास अन्य संन्यासियोंकी भाँति रोज़ भिक्षाको निकलते थे। शिवाजी इससे हैरान थे। उन्होने सोचा— "गुरुजीको हमने इतना धन और ऐश्वर्य दान दिया, तब भी वे भिक्षाटन क्यों करते है? क्या करनेसे उनके मनकी तृष्णा मिटेगी?" इसी खयालसे उन्होने दूसरे दिन एक काग़ज़पर महाराष्ट्रका अपना सारा राज्य और समस्त राजकोषका दानपत्र रामदास स्वामीके नाम लिखकर उसपर अपनी मोहर लगा दी, और भिक्षाके रास्तेपर गुरुको पकड़कर उस दानपत्रको उनके चरणोमे अर्पित कर दिया।

रामदास उसे पढ़कर मन्द मुसकानके साथ बोले—“अच्छी बात है। यह सब हमने ले लिया। आजसे तुम हमारे गुमाश्तामात्र रहे। अब यह राज्य तुम्हारे लिए अपने भोग-विलास और मनमानी करनेकी वस्तु न रहा। तुम्हारे ऊपर एक बड़ा मालिक है। उसीकी यह ज़मीदारी है जिसे तुम उसके विश्वासी नौकरके रूपमें चला रहे हो, इसी दायित्वके विचारसे आगे राज-काज चलाना।”

राज्यके मालिक संन्यासी होनेके कारण उनका गेरुआ वस्त्र ही शिवाजीकी राज-पताका हुई जिसका नाम रक्खा गया ‘भगवा झंडा’। यह मनोरम दन्तकथा महाराष्ट्र देशमे खूब प्रचलित है।

‘समर्थ’ रामदासका जीवन-चरित और उनके उपदेश

सन् १६०८ ई० के चैत्र मासके शुक्लपक्षकी नवमीको एक सूर्योपासक ब्राह्मण-वंशमे रामदासका जन्म हुआ था। उनके पिता उन्हे ‘नारायण’ कहकर पुकारते थे। बचपनसे ही वे बड़े धर्मप्रेमी थे। बड़े भाईके मन्त्र ग्रहण करनेके समय उन्होने भी मन्त्र लेनेके लिए बहुत ज़िद की। पितृहीन बालकने माताके अत्यन्त अनुरोध करनेपर बारह वर्षकी आयुमे विवाह करना तो स्वीकार किया, परन्तु मन्त्र पढ़ते समय विवाह-मंडपसे भागकर संसार त्याग दिया। उसके बाद नासिक शहरके पास गोदावरी नदीके किनारे पंचवटीमे आश्रय ले बारह वर्ष तक धर्म-शिक्षा ग्रहण करनेपर ‘रामदास’ नामसे दीक्षा ली। महाराष्ट्रके लोगोंका विश्वास हैं कि वे पूर्व जन्ममे हनुमान् थे। लोग उनके आजानुलम्बित बाहुको इसका प्रमाण मानते थे। तुकाराम और दूसरे साधु लोग विष्णुके अन्य अवतार ‘विठोवा’ की पूजाका प्रचार करते थे, लेकिन रामदास हनुमान्की तरह श्रीरामचन्द्रके

परम भक्त थे, और उसी अवतारको उन्होंने अपने धर्मके उपास्य देवताके रूपमें माना था।

दीक्षाके बाद रामदास भी और और साधुओंकी तरह बारह वर्ष तक भारतके सब तीर्थोंमें घूमे। लोग कहते हैं कि स्वयं भगवान रामचन्द्रने प्रकट होकर उनसे कहा—"संसारमें प्रवेश करो और एक नया भक्त-सम्प्रदाय चलाओ।" तीर्थाटन समाप्त कर ३६ वर्षकी उम्रमें (१६४४ ई० मे) स्वामी रामदास अपनी जन्मभूमिको लौटे, और सतारा ज़िलेके चाफल ग्राममे कुटी बनाकर वहाँ उन्होने राम और हनुमान्के दो मन्दिर (१६४९ ई० में) बनवाये। असाधारण चातुरीसे उन्होने बड़ी जल्दी 'रामदासी' नामका एक नया सम्प्रदाय खड़ा कर दिया। उनके अनेको शिष्य हुए जिनके लिए स्थान स्थानपर मठ स्थापित हुए। इस प्रकार दस वर्ष बीत गये।

उसके बाद फिर दस वर्ष तक उन्होने रायगढ़ किलेके पास शिवतर गॉवमे एकान्तवास किया। बहुत कुछ चिन्तन और मनन करनेके बाद उन्होंने 'दासबोध' नामक (२० सर्गका) ग्रन्थ तैयार किया। उसमें उन्होंने अपने धर्मके उपदेश लिपिबद्ध किये। वे संस्कृत और प्राचीन मराठी साहित्यके बड़े पंडित थे, इसलिए यह ग्रन्थ बहुत उपादेय हुआ है।

रामदासके पुण्यके प्रभावसे मोहित होकर शिवाजीने उनसे 'श्रीराम, जय राम, जय जय राम', इस मन्त्रकी दीक्षा ली। गुरुने उन्हे बहुत संक्षेपमे महान् उपदेश दिया, परन्तु जब शिवाजीने भक्तिके आवेशमें कहा, "मै आपके चरणोके समीप रहकर आपकी सेवा करूँगा।" तब रामदासने उनको धमकाकर मना किया, और कहा, "क्या

इसीलिए तुम हमारे पास प्रार्थी होकर आये हो ? तुम हो कर्मवीर क्षत्रिय; तुम्हारा काम है देश और प्रजाको विपदसे बचाना और देव-ब्राह्मणोंकी सेवा करना। तुम्हारे करने योग्य बहुत-सा काम पड़ा है। म्लेच्छोंने देशपर पूरा आधिपत्य जमा लिया है। तुम्हारा काम है उनके हाथसे देशका उद्धार करना। यही श्रीरामचन्द्रका अभिप्राय है। भगवद्गीतामें अर्जुनको श्रीकृष्णने जो उपदेश दिया था, उसको याद करो, 'योद्धाके कर्त्तव्य मार्गसे चलो, कर्मयोगकी साधना करो'।"

रामदास शिवाजीको उत्तम कर्मयोगी कहकर सर्वदा उनकी प्रशंसा करते थे। उनको सबके सामने आदर्श राजाके रूपमें उपस्थित करते थे। रामदास द्वारा कवितामें लिखी हुई शिवाजीके नामकी एक चिट्ठी महाराष्ट्र देशमें खूब प्रचलित है। उसमें गुरुने राजाको सम्बोधन करके कहा है, "निश्चयके हे महामेरु, अनेक लोगोंके सहायक, दृढ़प्रतिज्ञ, जितेन्द्रिय, दानवीर, अतुल गुणसम्पन्न, नरपति, अश्वपति, गजपति, समुद्र और पृथ्वीके अधीश्वर, सदा प्रबल विजयी, प्रसिद्ध धर्मवीर, पृथिवी डावाँडोल हो रही है, धर्म लोप हो गया है। गो, ब्राह्मण, देवता और धर्मकी रक्षाके निमित्त नारायणने तुमको भेजा है। धर्म-संस्थापनके निमित्त अपनी कीर्ति अमर करो।"

वृद्धावस्थामें भी शिवाजी स्वामीजीसे राजकाजके विषयमें सदा उपदेश लेते थे। रामदासकी शिक्षामें भक्तियोग और कर्मयोगका बहुत अच्छा सम्मिश्रण हुआ है। उन्होंने जीवनके दृष्टान्तों और जटिल राजनीतिक समस्याओंपर शिवाजीको जो उपदेश दिये थे, उन उपदेशोंने महाराष्ट्रवासियोंकी स्वाधीनताकी साधनाके पथको सुगम कर दिया था। रामदासकी धर्म-शिक्षाको 'फलित भगवद्गीता' कहा जा

सकता है। उनके शिष्य गीताके एक जीवित उदाहरण थे।

शिवाजी और रामदासके सम्बन्धमें विभिन्न मत

स्वामी रामदास शिवाजीके आध्यात्मिक गुरु तो थे ही, परन्तु आजकल कई लोगोंका कहना है कि उन्हींकी सलाहसे शिवाजीने स्वराज्य-स्थापना की थी; लेकिन इस बातको साबित करनेके लिए जो प्रमाण पेश किये जाते हैं, वे संशयमूलक हैं। मतलब यह कि राजकाजके बारेमें रामदास स्वामीका शिवाजीके साथ कोई भी सम्बन्ध नहीं दीख पड़ता है। काम-क्रोधादि षड्रिपुओंको जीतना और इस लोकके सुख-दुखके विषयमें उदासीन रहना, यही हिन्दू साधुओंके मुख्य लक्षण होनेके कारण रामदासका किसी भी राज-काजमे प्रत्यक्ष रूपसे भाग लेना सम्भव न था, और न इस प्रकार उनके भाग लेनेकी बात ही सिद्ध होती है। इतना ही नहीं, बल्कि उनके शिष्य-सम्प्रदायमें भी राज-काजकी परम्परा नहीं दिखाई देती जिससे यह बात साबित होती है कि रामदास स्वामी राजनीतिक साधु न थे।

रामदासका राजनीतिक उपदेश

शिवाजीके बाद जब नवयुवक शम्भूजी राजा हुए, तब वृद्ध गुरु रामदासने अपनी मृत्यु निकट देखकर नये राजाको अनेक उपदेश देते हुए एक पत्र पद्यमें लिखा था। उसमें उन्होंने लिखा है—

"अनेक लोगोंको इकट्ठा करो,
विचार करके लोगोंको काममें लगाओ,
परिश्रमपूर्वक आक्रमण करो,
म्लेच्छके ऊपर। १४
जो है (पहले) उसका यत्न करो,

बादमें और भी (राज्य) बढ़ाना,
महाराष्ट्र-राज्य (विस्तार) करना
यत्र-तत्र। १५

लोगोंको साहस दो,
बाजी रखकर तलवार चलाओ,
'बढ़-चढ़'के (धीरे धीरे) अधिक नाम
पैदा करो। १६

शिव राजाको याद रखो,
जीवनको तृणवत् समझो,
इस लोक और परलोकको पार करना
कीर्तिरूपमें। १७

शिव राजाके रूपको याद रखो,
शिव राजाकी दृढ़ साधनाको याद रखो,
शिव राजाकी कीर्तिको स्मरण करो
भूमंडलमे। १८

शिव राजाकी बोलचाल कैसी थी,
शिव राजाका चलना कैसा था,
शिव राजाकी मैत्री करनेकी क्षमता कैसी थी,
ठीक वैसे ही हो। १९

सब सुख त्यागकर,
योग साधकर,
राज्य-साधनामें जैसे वे
जल्दी आगे बढ़े थे। २०

तुम उनसे भी अधिक करना ;

तभी तो तुम पुरुष कहकर जाने जाओगे । २१ ”

शिवाजीका परिवार

शिवाजीके आठ विवाह हुए थे:—

१ सईबाई (निम्बालकरकी कन्या)—मृत्यु ५ सितम्बर १६५९। शम्भूजी इन्हींके पुत्र थे ।

२ सोयराबाई (शिर्केकी कन्या)—शिवाजीको विष पिलाकर मार डालनेका अपवाद लगाकर शम्भूजीने इनकी हत्या की थी (अक्टूबर १६८१ ई०) । इनके पुत्र थे राजाराम ।

३ पुतलाबाई (मोहितेकी कन्या)—इन्होंने स्वामीके साथ जल कर चितामें प्राण विसर्जन किये ।

४ साकोवारबाई (गायकवाड़की कन्या)—इनका विवाह सन् १६५६ ई० में हुआ था । सन् १६८९ ई० में मुगलोंके रायगढ़पर अधिकार करनेके बाद ये क़ैद हो गई थीं, और इन्हें कई वर्ष तक औरंगज़ेबके शिविरमें क़ैद रहना पड़ा था ।

५ काशीबाई—सन् १६७४ ई० के मार्चमें मृत्यु ।

६-७ दो स्त्रियाँ—सन् १६७४ ई० के मई महीनेमें अभिषेकके पहले इन दोनोंके साथ वैदिक विधिसे उनकी शादी हुई थीं ।

८ एक स्त्री—८ वीं जून सन् १६७४ ई० को इनके साथ शिवाजीका विवाह हुआ था ।

शिवाजीके दो पुत्र और तीन कन्याएँ थीं—

१ शम्भूजी—जन्म १४ मई १६५७ ई० । ये २८ जून १६८० ई० को राजा हुए । औरंगज़ेबने इन्हें ११ मार्च सन् १६८९ ई०

को मरवा डाला।

२ राजाराम—जन्म २४ फरवरी १६७० ई०। ये ८ फरवरी १६८९ ई० को राजा हुए, और इनकी मृत्यु २ मार्च १७०० ई० को हुई।

३ सखुबाई—महादजी निम्बालकरकी स्त्री।

४ अम्बिकाबाई—हरजी महाडिककी स्त्री।

५ राजकुमारीबाई—गणोजीराज शिर्केकी स्त्री।

शिवाजीकी शकल-सूरत

३७ वर्षकी उमरमें (सन् १६६४ मे) शिवाजीको देखकर सूरतके कुछ अँग्रेज़ोंने लिखा था—" वे मझोले कदके आदमी थे, परन्तु उनका शरीर खूब गठीला था। उनके चलने-फिरनेमें तेज़ी और फुर्ती थी। मुँहपर हमेशा मुसकराहट दिखाई देती थी। दोनो आँखे बड़ी तेज़ थीं, और चारों ओर घूमती रहती थीं। उनका रंग साधारण दक्षिणियोकी अपेक्षा कुछ गोरा था।"

सन् १६६६ ई० मे जब शिवाजी औरंगज़ेबके दरबारमें आगरा गए थे तब उनको पाससे देखनेवाले आम्बेर राज्यके एक कर्मचारीने उनकी शकल सूरतका वर्णन यों किया था,—" शिवाजीका शरीर दिखनेमे तो तुच्छ छोटा-सा ही जान पड़ता है, परन्तु उसकी सूरत बहुत ही विलक्षण गोरे रंगकी है। बिना पूछे यह स्पष्ट हो जाता है कि यह एक राजवंशीय व्यक्ति है। हिम्मत और मरदानगी तो उसकी रग रगमे झलकती है। वह बहुत ही मरदाना, भारी हिम्मतवाला आदमी है। शिवाजीके डाढ़ी है।" शिवाजीको देखकर राजपूतोंने भी स्वीकार किया कि—" शिवाजी बहुत सयाना है। जो बात कहता है सो

ठीक ही होती है; कोई क्या कहे, क्योंकि तब कोई बात कहनेकी जरूरत ही नहीं रह जाती है। सचमुच ही वह भला राजपूत है; जैसा सुना था वैसा ही उसे देखा। राजपूतपनेकी ऐसी बातें कहता है कि यदि याद रहें तो समय पड़ने पर काम आवें।"

फ्रेंच यात्री तेव्हेनोंने भी उसी साल लिखा था, "इस राजाका क़द छोटा है, रंग गोरा, आँखें ख़ूब तेज़ और चंचल।"

शिवाजीकी विश्वास करने योग्य तीन तसवीरें उपलब्ध हैं। इस बातका प्रमाण भी मिलता है कि ये तसवीरें उनके जीवन-कालमें ही खींची गई थीं।

(१) लंदनके ब्रिटिश म्यूज़ियममे सुरक्षित तसवीर। इसको एक डच सज्जनने औरंगज़ेबके जीवन-कालमें (सन् १७०७ ई० से पहले) भारतवर्षमें खरीदा था।

(२) हालैंडमें रक्षित प्रतिकृतिको सन् १७१२ ई० में जहाँदार शाहके पास लाहौर जाते समय डच दूतने खरीदा था। सन् १७२४ई०में वैलेण्टाइनने इसका एक एंग्रेविंग अपनी पुस्तकमें प्रकाशित किया था। इसी तसवीरका एक सुन्दर (परन्तु कुछ परिवर्तित) स्टील एंग्रेविंग ओर्मने अपने 'हिस्टोरिकल फ्रेगमेंट्स' (Historical Fragments) नामक ग्रन्थमें सन् १७८२ में छापा था, और वही बादमें अनेकों स्थानोंमें छपकर भारतमें सर्वत्र प्रचलित हुआ है।

(३) शाहज़ादा मुअज़्ज़मके चित्रकार मीर अहमदने शिवाजीकी घोड़ेपर सवार एक तसवीर खींचकर सन् १६८६ ई० में मनुचीको उपहारस्वरूप दी थी। वह तसवीर आजकल पेरिसके राष्ट्रीय पुस्तकालयमें सुरक्षित है। इसकी सुन्दर प्रतिलिपि अर्विनद्वारा सम्पादित

'Storia do Mogor' नामक ग्रन्थके तृतीय खंडमें है। इसके अलावा अन्य दो चित्र, जो अच्छे नहीं हैं, (सम्भवतः काठपर खुदे ब्लाकसे छापे गये है), सन् १८२१ और १८४५ में दो फ्रेंच ग्रन्थोमें छपे थे, परन्तु चातुरीके अभावसे यह चित्रकार उन चित्रोंमें शिवाजीके मुखपर उनके चरित्रकी विशेषताको स्पष्ट रूपसे अंकित नहीं कर सका।

बम्बई-म्यूज़ियममें और पूनाके इतिहास-संशोधक मंडलके पास भी शिवाजीकी दो तसवीरें है। पहलेमें शिवाजी हाथमे तलवार लिये खड़े हैं। दूसरीमें घोड़ेपर सवार तलवार लिये सिंहके शिकारमें लगे है (मिनिएचर)। यद्यपि ये तसवीरें मुग़ल-समयकी हैं, फिर भी इनके खीचनेका समय ठीक-ठीक निर्णय नहीं किया जा सकता।

सभी तसवीरोंमें शिवाजीका मुख एक ही प्रकारका है, परन्तु पहले दो चित्रोंमें ही उनका तेजपूर्ण व्यक्तित्व ठीक तरहसे अंकित हुआ है।

पन्द्रहवाँ अध्याय

इतिहासमें शिवाजीका स्थान

शिवाजी और औरंगज़ेब

शिवाजीकी कीर्तिके प्रकाशसे भारतका गगनमंडल उज्ज्वल हो उठा था। उत्तर और दक्षिण भारतका चक्रवर्ती सम्राट् शाहंशाह औरंगज़ेब अतुल ऐश्वर्य और विपुल सैन्य-बलका अधिकारी होते हुए भी बीजापुरके एक मामूली जागीरदारके इस त्याज्य पुत्रको किसी भी प्रकार दबा नहीं सका। बीच बीचमे जब कभी उसके खुले दरबारमे दाक्षिणात्यका समाचार पढकर सुनाया जाता था कि 'आज शिवाजीने अमुक जगह लूटी है,' 'कल अमुक फौज़दारको हराया है,' तब औरंगज़ेब उसे सुनकर, निरुपाय हो, चुप रह जाता था। वह बड़ी घबराहटसे मंत्रणागारमे जाकर अपने विश्वस्त मंत्रियोंसे पूछता कि 'शिवाजीको दबानेके लिए अब किस सेनापतिको भेजा जाय; प्रायः सभी महारथी तो दक्षिणसे हारकर लौट आये?' इसी बातपर एक रातको महाब्रतखाँने छेड़कर कहा था—'हुज़ूर, सेनापतिकी क्या ज़रूरत है? काज़ी साहबके एक फ़तवा भेज देनेसे ही शिवाजीका ध्वंस हो जायगा।' यह बात सबको मालूम थी कि धर्मध्वजी बादशाह काज़ी अब्दुल वहाबके कहनेके अनुसार ही उठते बैठते थे।

फारसके राजा द्वितीय शाह अब्बासने औरंगज़ेबको धिक्कारते हुए सन् १६६७ ई० मे एक पत्र लिखा था—"तुम अपनेको राजाओंका राजा यानी शाहंशाह—बादशाह—कहते हो, और शिवाजी जैसे एक

ज़मींदारको दुरुस्त नहीं कर सकते ! हम फ़ौज लेकर भारत आते हैं, और तुमको राज-काज चलाना सिखायेंगे।"

शिवाजीकी याद औरंगज़ेबको जिन्दगी-भर काँटेकी तरह चुभती रही। मरनेके पहले बादशाहने अपने लड़केको जो आखिरी उपदेश दिया था, उसमे लिखा था—"देशकी सब खबरें रखना ही राज-काजका सबसे बड़ा अंग है। एक क्षणकी लापरवाही जिन्दगी-भर मनको तकलीफ़ देती रहती है। देखो, लापरवाहीके ही कारण अभागा शिवाजी हमारे हाथसे निकल गया, और उसका नतीजा यह हुआ कि हमको मरते दम तक यह मेहनत और अशान्ति भोगनी पड़ी।"

अपनी आश्चर्यजनक सफलता और अतुल प्रसिद्धिसे मंडित हो, शिवाजी उस युगमे समूचे भारतवर्षके हिन्दुओंकी दृष्टिमें एक नवीन आशापूर्ण नक्षत्रके समान देख पड़े। केवल वही एक ऐसा व्यक्ति था, जो हिन्दुओंकी जाति, उनके तिलक, उनकी चोटी और उनके जनेऊका रक्षक था। सब लोग उन्हींकी ओर आशासे टकटकी लगाये देखते थे, उन्हींके नामपर समग्र हिन्दू-जाति गर्वसे अपना सिर ऊँचा कर सकती थी। इसी प्रसंगमे कवि भूषणने कहा था।—

"राखी हिन्दुवानी, हिन्दुवानको तिलक राख्यौ,
स्मृति-पुरान राखे, वेद-विधि सुनी मैं;
राखी रजपूती, रजधानी राखी राजनकी,
धरामे धरम राख्यौ गुन राख्यौ गुनीमैं।
'भूषन' सुकवि जीति हद्द मरहट्ठनकी,
देस-देस कीरति बखानी तब सुनी मैं;
साहके सपूत सिवराज, समसेर तेरी,
दिल्ली दल दाबिकै दिवाल राखी दुनीमैं।"

शिवाजीकी राजनीति कहाँ तक पुरानी थी ?

शिवाजीकी राजनीति उनकी राज्य-व्यवस्थाकी तरह कुछ नई नहीं थी। पुराने ज़मानेसे ही हिन्दुओंकी यह सुनिश्चित राजनीति रही है कि राजागण दशहरा समाप्त होते ही अपनी सीमा लाँघकर, पड़ोसी राजाओंके देशपर चढ़ाई कर अपना राज बढ़ावे। क्षत्रिय राजाओंके लिए मनु आदि स्मृतिकारोंने यह बात स्थिर कर दी थी। अर्वाचीन कालमें उत्तर भारत और दक्षिणके मुसलमानोंने भी यह क्रम जारी रखा, परन्तु मुसलमानोंके लिए तो पड़ोसी राजाके ऊपर चढ़ाई करना उनके धर्मके अनुकूल ही है। कुरान शरीफके अनुसार मुसलमान राजा अपने पड़ोसके काफ़िर राजाको शान्तिसे नहीं रहने दे सकता है। ऐसे राजाको कुरानमे दारुलहर्ब (लड़ाईका पात्र) कहा गया है। ऐसे राजाको मारना और उसके देशको छीनना मुसलमान राजाका धर्म है। पड़ोसी राजा जब मुसलमान हो, तो वह दारुल-इसलाम होगा, तब उनमें मेल और बचावकी बात आ जाती है और उस हालतमें युद्ध नहीं करना चाहिए। यह उनके धर्मका नियम है।

मुसलमानी धर्ममे बताई हुई पर-राष्ट्रनीति और शिवाजीकी पर-राष्ट्रनीतिमें आश्चर्यजनक समानता है। इस नीतिके लिए दोनोंके इतिहासमें एक शब्द ‘ मुल्कगीरी ’ का प्रयोग किया गया है। भेद सिर्फ इतना ही है कि मुसलमानी धर्मशास्त्रके अनुसार एक मुसलमान राजा दूसरे मुसलमान राजाका प्रदेश न लूटे और न रक्तपात करे। यद्यपि सब मुसलमान राजा इस नियमके अनुसार नहीं चलते थे, परन्तु उनका शास्त्र ऐसा ही कहता है, यह बात निर्विवाद है। शिवाजीकी मुल्कगीरीमे ऐसा कोई भी नियम न था। क्या हिन्दू, क्या मुसलमान

—सबसे कठोरताके साथ-समान भावसे धन वसूल किया जाता था। कट्टर मुसलमान काफ़िर राजाको जीतकर उसे मुसलमान बनाना अपना धर्म समझता था, और लड़ाई समाप्त होनेके बाद वह पराजित राजा मुसलमानी राज्यका एक अंग होकर शान्तिपूर्वक राज्य करता था, परन्तु शिवाजीका उद्देश्य इस प्रकार राज्य बढ़ानेका नहीं था। उनका ध्येय तो केवल लूट-पाट करना ही रहता था, अथवा 'सभासद'के शब्दोंमे—"मराठी फौज हर साल आठ महीने तक पराये मुल्कोंमे लूट-पाट करके पेट भरे और कर वसूल करे, उगाहे।" सारांश यह कि शिवाजीकी राजनीति हूबहू मुसलमानोंकी राजनीतिसे मिलती थी। अन्तर सिर्फ इतना ही था कि शिवाजी अपने राज्यमे सब जातिकी प्रजाको समान भावसे देखते थे, सबके लिए एक-सा न्याय था और सबकी रक्षा एक ही प्रकारसे होती थी। इन बातोंमे उनकी राजनीति उदार थी, इस बातको हम पहले ही कह आये हैं।

मराठा-राज्यके पतनके कारण

शिवाजी जब ऐसे वीर, पराक्रमी और न्यायी थे, तब उनका राज्य स्थायी क्यो न हुआ? उनकी सृष्टि उनकी मृत्युके आठ ही वर्षके भीतर क्यो नष्ट होने लगी? मराठे एक राष्ट्र (नेशन) क्यो न बन सके? भारतके अन्य राजाओं और जातियोकी भॉति वे भी विदेशियोके विरुद्ध क्यों खड़े न रह सके? इतिहासकी छान-बीन करनेसे इन प्रश्नोंका निम्न-लिखित उत्तर मिलता है:—

पहला कारण—जाति-भेदका विष

जिस समय मराठे शिवाजीके नेतृत्वमें स्वाधीनता-प्राप्तिके लिए खड़े हुए, उस समय वे विजातियोके अत्याचारसे पीड़ित, गरीब और

परिश्रमी थे। वे सीधे-सादे ढंगपर अपना व्यवहार चलाते थे, उनके समाजमे एकता थी और उनमें जात-पाँतका भेद तथा झगड़ा न था; परन्तु शिवाजीके अनुग्रहसे राज्य मिलने तथा अन्य देशोंकी लूटके धनसे धनी होनेपर उनकी स्मृतिसे उस अत्याचारकी याद और उनके समाजसे उस सरलता तथा एकताका लोप हो गया। साहसके साथ साथ घमण्ड और खुदगरज़ीकी भी प्रवृत्ति हुई। धीरे-धीरे समाजमें जाति-भेदका झगड़ा उठ खड़ा हुआ।

बहुत दिनोंसे कम उपजाऊ, महाराष्ट्र देशके अनेकों ब्राह्मण शास्त्र-चर्चा और यजन-याजन छोड़कर, हिन्दू-मुसलमान राजाओंके यहाँ नौकरी करके धन-मानका उपभोग करते आते थे। मराठा जाति निरक्षर थी। वह अपनी जीविका तलवार अथवा हलसे चलाती थी, परन्तु कायस्थोंकी जाति सदासे ही 'लेखकों'की जाति थी। वे लोग लिखा-पढ़ीका काम करके सरकारी नौकरी पाने लगे, और उनका धन-मान बढ़ने लगा। इस बातसे ब्राह्मण लोग ईर्ष्यासे जलने लगे। उन लोगोंने कायस्थोंको शूद्र और अन्त्यज कहकर घोषणा कर दी। वेजनेऊ ग्रहण करनेके अपराधमें (प्रभुओं) कायस्थोंकी निन्दाका प्रचार करने लगे। उनके नेताओंको एक दरजेका 'गँवार' भी घोषित कर दिया।

यहाँ तक कि शिवाजीके अभिषेकके समय भी ब्राह्मणोंने एक स्वरसे मराठा-जातिके क्षत्रियत्वको अस्वीकार कर दिया और कहा कि शिवाजीको वैदिक क्रिया और मन्त्र-पाठ आदि करनेका कोई अधि-कार नहीं है। उनके इस गर्व और कट्टरपनसे आजिज़ आकर शिवाजीने एक बार (सन् १६७४ मे) कहा था—"ब्राह्मण-जातिका

अपना पेशा शास्त्र-चर्चा और पूजा है। भूखे रहना और दरिद्रता झेलना ही उनका व्रत है। सरकारी नौकरी करना उनके लिए पाप है, इसलिए समस्त ब्राह्मण मन्त्रियो, हाकिमों, सेनापतियो और दूतोको नौकरीसे छुड़ाकर शास्त्रविहित कामोंमे लगाना हिन्दू राजाका कर्तव्य है। हम भी वैसा ही करेगे।" तब तो ब्राह्मणोंने रो-गाकर बडी मुश्किलसे उनसे क्षमा प्राप्त की।

इस प्रकार ब्राह्मण लोग अधिकार पाकर अब्राह्मणोके ऊपर सामाजिक अत्याचार और अन्याय करने लगे। उधर ब्राह्मणोंमें भी आपसमे मेल नहीं था। उनमे भी श्रेणी-विभाग और कुलीनताको लेकर घोर दलबन्दी और झगड़ा शुरू हो गया। पेशवा लोग कोंकण-निवासी ('चितपावन' शाखाके) ब्राह्मण थे। जिस समय पेशवा देशके शासक थे, उस समय भी पूना-प्रान्तके ('देशस्थ' शाखाके) ब्राह्मण कोंकणस्थ ब्राह्मणोंको नीच और अशुद्ध ब्राह्मण कहकर घृणा करते थे। उनके साथ एक पंगतमें बैठकर भोजन नहीं करते थे। इसी प्रकार चितपावन ब्राह्मण 'कहाड़े' शाखाके ब्राह्मणोंसे खिंचे रहते थे। पेशवा लोगोने अपर श्रेणीके ब्राह्मणोका गौरव नष्ट करनेमे अपनी राजशक्तिका उपयोग किया था। गोआ प्रदेशके निवासी गौड़ और सारस्वत (शेणवी) शाखाओंके ब्राह्मण अत्यन्त तीक्ष्ण बुद्धिवाले और कार्यकुशल थे, परन्तु अन्य श्रेणीके ब्राह्मण प्रायः बंगालके बंगाली ब्राह्मणोंकी तरह उनकी उपेक्षा करते और उन्हें कष्ट देते थे। इस प्रकार एक जातिका दूसरी जातिके साथ, और एक ही जातिके भीतर भी एक शाखाका दूसरी शाखाके साथ झगड़ा चलता था। इसका फल यह हुआ कि समाज छिन्न-भिन्न हो गया, राष्ट्रीय एकता

लोप हो गई और शिवाजीका किया-कराया सारा प्रयत्न धूलमें मिल गया।

मराठोंने राज्य खोया। उनका भारतव्यापी प्राधान्य लोप हो गया। उन्हें फिर विजातियोंके पैरोंतले पड़ना पड़ा, तब भी उन्हें चैतन्य नहीं हुआ। उनमें जात-पाँतका झगड़ा अब भी जारी है। जाति-भेदका विष कितना भयंकर होता है!

श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुरने ठीक कहा है—"शिवाजीने जिस समाजको मुगल-आक्रमणके विरुद्ध विजयी बनानेकी चेष्टा की थी, उस समाजकी जड़मे आचार-विचारगत विभाग-विच्छेद थे। ऐसे विभाग-मूलक समाजको ही उन्होंने सारे भारतमे विजयी बनानेकी कोशिश की थी। इसीको कहते है बालूकी भीत—यही है असाध्य साधन।

"शिवाजीने ऐसी किसी भावनाको न तो आश्रय दिया और न उसका प्रचार ही किया, जिससे हिन्दू-समाजके मूलमें पड़े हुए ये छिद्र दुरुस्त हो सकते। अपना धर्म बाहरसे पीड़ित और अपमानित हो रहा है, इसी क्षोभसे प्रेरित होकर उन्होंने सारे भारतवर्षको विजयी बनानेकी इच्छा की थी, जो स्वाभाविक होनेपर भी सफल होनेवाली न थी। क्योंकि जहाँ धर्म भीतरहीसे पीड़ित हो रहा है, जहाँ उसके भीतर ही ऐसी बाधाएँ है, जो मनुष्यको केवल छिन्न-भिन्नकर अपमानित कराती है, वहाँ उनकी ओर कुछ विचार ही न करके, बल्कि उस भेद-बुद्धिको ही खास धर्म-बुद्धि समझकर, उस शतधा विदीर्ण समाजका स्वराज्य इस विशाल भारतमे स्थापित करना किसी भी आदमीके लिए असम्भव था। क्योंकि ऐसा होना विधाताके विधानके विरुद्ध होता।"

दूसरा कारण—राष्ट्रीय संगठनकी चेष्टाका अभाव

मराठोंके प्राधान्यके समय राष्ट्र (नेशन) की शिक्षा और अर्थबल, एकता और संघबद्ध उद्यम वृद्धि करनेकी बातोंपर स्थिर होकर कोई विचार नहीं करता था। उसके लिए कड़ी कोशिश नहीं की जाती थी। सब कोई बिना विचारे लकीरके फकीर बने काम करते थे। जहाँ हिन्दू-संसार मानो आँख मूँदकर काल-स्रोतमें बहा चला जाता था, वहाँ उसके विपरीत यूरोपकी जातियाँ शताब्दियोंसे विचार करके, मेहनत करके और प्रचार करके अविश्रान्त रूपसे उन्नतिकी ओर आगे बढ़ रही थीं। इस प्रकारकी लगातार उन्नतिपर चढ़ती हुई संघबद्ध जातिके साथ भिड़ते ही विशाल मराठा-साम्राज्य चूर-चूर हो गया। यही है प्रकृतिकी कृति।

यूरोपके साथ भारतकी यह विभिन्नता आज भी है। भारत दिन-पर-दिन पीछे पड़ रहा है—रणमे, वाणिज्यमें, शिल्पमे। मिलकर कोशिश करनेमें यूरोपकी अपेक्षा दिनोदिन अधिकतर हीन और असमर्थ होता जा रहा है। मराठोंके इतिहाससे साफ यह मालूम होता है—

"दिन-पै-दिन बनि सब भाँति दीन,
भारतभुवि ह्वै रही पराधीन।"

यह हम लोगोंकी जातीय दुर्दशाका कारण नहीं है—यह तो केवल नैतिक अवनतिका दुष्परिणाम है।

तीसरा कारण—सुशासनकी स्थायी व्यवस्थाका अभाव

मराठा-शासनमे समय-समयपर कहीं-कहीं सुन्दर राज्य-व्यवस्था और प्रजाकी सुख-समृद्धिका परिचय मिलता है, परन्तु इस प्रकारके उदाहरण व्यक्तिगत और यदा-कदा ही मिलते थे। किसी खास राजा

अथवा मन्त्रीकी योग्यतासे या यत्नसे ही यह सुफल देख पड़ता था; पर उसके आँख मूँदते ही पहलेका सब कुशासन और सारी अराजकता एकबारगी लौटकर सारे जीवन-कार्यको नष्ट कर देती थी। शिवाजीके बाद शम्भूजी, और माधवराव पेशवाके बाद रघुनाथ राव इसके दृष्टान्त ह। इसी कारण मराठोंके शासनमें चातुरीका अभाव, घूसका दौरदौरा और आकस्मिक आमूल परिवर्तन दिखाई पड़ते हैं। इसी अव्यवस्थाके कारण ही बुन्देलखंडकी ओर 'मराठी घिस-विस' का मुहावरा प्रचलित हो गया है। इससे प्रजाकी सुख-सम्पतिका नाश हुआ, और समस्त जातिके नैतिक बलका भी लोप हो गया।

चौथा कारण—स्वदेशकी अपेक्षा स्वार्थके प्रति अधिक प्रेम

उस जमानेमे समाजकी हालत और लोगोंके मनकी प्रवृत्ति जिस प्रकारकी थी, उससे लोग जातिके हितोंकी अपेक्षा अपने वंशको, और स्वदेशकी अपेक्षा अपने बाप-दादोंकी जायदाद (मराठी भाषामें 'वतन') को कहीं बढ़कर समझते थे। देशमें राजाओं और राजवंशोंके जल्दी जल्दी बदलनेके कारण अनेक जगहोंमें ज़मीनका अधिकार बहुत अनिश्चित और गड़बड़-सा हो गया था। एक ही गाँवपर तीन-चार भूस्वामी अपने अपने अधिकारका दावा करते थे—जैसे, देसाई, दलवी, सावन्त और इन सबपर देशका राजा। ये लोग आपसमे लड़कर, अथवा विदेशी आक्रमणकारियोंको अपने पक्षमें मिलाकर, अपना अधिकार जमानेकी कोशिश करते थे। यदि अपनी जातिका राजा अथवा देशका विचारालय इनके व्यक्तिगत स्वार्थोंके प्रतिकूल होता था तो ये लोग फौरन उनकी उपेक्षा कर देशके शत्रुओंको बुला लाते थे। बात यह थी कि 'वतन' ही मराठोंका प्राण था,

और जन्मभूमि उनकी कुछ न थी। 'वतन'की रक्षा या वृद्धि करनेके लिए मराठे कोई भी पाप करनेसे न हिचकते थे। उस युगके हिन्दू अपनी जाति या श्रेणीसे बढ़कर किसी बड़ी राष्ट्रीय एकताके बन्धनकी कल्पना भी नहीं कर सकते थे। अपने वंश या जातिके स्वार्थसे देशका हित बड़ा और श्रेय है, इस बातको राजा-प्रजा, ऊँच-नीच कोई भी न समझता था, और न कोई ऐसा विचार ही करता था। अपने राज्यमे हो, अथवा पराये राज्यमें हो, सब लोग इसी कोशिशमें थे कि समाजमे अपना व्यक्तिगत धन और बल, मान और मर्यादा बढ़े।

इतना बड़ा लोकसमूह अपने स्वार्थसे बढ़कर किसी बड़े उद्देश्यको, और अपनी इच्छासे बढ़कर किसी बड़ी संचालन-शक्तिको नहीं मानता था। अपने जीवनको शृंखलाबद्ध करनेको लोग दु:ख, और नियम-पालनको गुलामी समझते थे। जब देशका प्रत्येक व्यक्ति अपने अपने स्वार्थोंको दबाकर, एक सर्वव्यापी सत्ता और सबसे बड़े एक मालिकको माने, तब ही जाकर कहीं जाति एकतामें बँधकर, अजेय और शक्तिसम्पन्न तथा सभ्यतामें शीघ्रतासे उन्नति कर सकती है। इसी प्रकार जिस जातिकी सम्पूर्ण जनता एक ही अनुशासन और नियमसे (जिसे अँग्रेज़ीमें ' डिसिप्लिन ' या ' रेन आफ् ला ' कहते है) नहीं चलती, वह जाति कभी स्वाधीन नहीं हो सकती। अपनी अपनी मनमानी करके, अनाचारी बन और अराजकता बढानेसे आख़िरमे लोग किसी न किसी बड़ी जातिकी गुलामी स्वीकार करनेको बाध्य होते है, और यो अपनी पराधीनताकी ज़ंजीर आप ही तैयार करते है। संसारका इतिहास युग-युगसे इसी

सत्यका प्रचार करता आया है। अनेकों बड़े बड़े मराठा नेता इसी प्रकार उच्छृंखल, स्वार्थी, लम्पट और जातीयताके कर्तव्य-ज्ञानसे रहित थे। इसी कारण शिवाजीके समस्त परिश्रमका फल, उनके न रहनेपर एकबारगी नष्ट हो गया। उन्होने जिस महान् कार्यका सूत्रपात किया था, उसको स्थायी बनाना और एक सुसंगठित जातिका जन्म देना सम्भव न हो सका।

पाँचवाँ कारण—अर्थनीतिकी अवनति

मराठा-शासनका प्रधान दोष अर्थनीतिकी उपेक्षा थी। खेती और व्यापारकी उन्नति, प्रजा और दूकानदारोको अत्याचारसे बचाना और घूसखोरी बन्द करना, सड़को, घाटो और आमद-रफ्तके लिए रास्तोको बनाना और उन्हे अच्छी हालतमे रखना, कचहरीमें झगड़ोंका चटपट फैसला करना, स्थायी रूपसे देशकी धन-वृद्धि और उसके द्वारा राजशक्तिकी उन्नति करना, इत्यादि महत्त्वपूर्ण विषयोमेसे किसी भी विषयपर राजा अथवा मन्त्रियोकी दृष्टि न जाती थी। उन लोगोका एकमात्र ध्यान था 'मुल्कगीरी' के ऊपर, अर्थात् दूसरोके राज्यको लूटकर धन-दौलत लानेपर। उसीमे उन लोगोकी सारी चिन्ता, समूचा यत्न और तमाम लोक-बल खर्च होता था। इस कारण मराठे अन्य सब जातियोके—हिन्दू, मुसलमान, राजपूत, जाट, कनाड़ी, बंगाली—और दक्षिणसे लेकर उत्तर तकके सारे भारतके राजा तथा प्रजाके पीड़क* और शत्रु समझे जाने लगे। उन्होने संसारमे किसीको भी अपना मित्र बनाकर न रखा।

* एक बंगाली कविने सस्कृतमें बर्गियोंको 'कृपामे कृपण, गर्भवती स्त्रियों और बच्चोका पीड़क' कहकर वर्णन किया है (सन् १७४३ ई०)।

इस अंधी और असत् राजनीतिका फल यह हुआ कि सभी लोग मराठोके पतनके लिए ईश्वरसे प्रार्थना करने लगे। उनकी लगातारकी लूट-पाटके कारण देशमें सब ओर धनागम बन्द हो गया, खेती और व्यापारका काम शीघ्र ही शिथिल पड़ने लगा, अनेको उपजाऊ खेत जंगलमें परिणत हो गये, और फलते-फूलते शहर जलकर तथा लुटकर तहस-नहस हो गये। लोगोने धन संचय करनेकी और बढ़ानेकी कोशिश छोड़ दी। अन्तमे दशा यहाँ तक पहुँची कि मराठे पहलेकी चौथका दसवाँ हिस्सा भी न पाते थे। सिर्फ राज्यकी लूटके बलसे जो जाति बलवती होनेका यत्न करती है, उसका अर्थ-बल इसी प्रकारकी मरीचिकामात्र है।

छठा कारण—सत्यप्रियता तथा राष्ट्रीय बलका अभाव

यद्यपि मराठोंमें वीर और योद्धा बहुत थे, परन्तु उनके नेतागण राजनीतिके क्षेत्रमे चालाकी और भुलावोंपर ही ज्यादा भरोसा रखते थे। उन लोगोको यह मालूम न था कि झूठी बात दो एक वार चल सकती है—हमेशा नहीं चला करती। बात न रखनेसे, विश्वासघाती होने और सच्चा व्यवहार न करनेसे कोई भी राज्य कभी टिक नहीं सकता। मराठोंके सेनापति और मंत्री फायदेका मौका देखनेपर सन्धि भंग करते थे, अपने वादोके विरुद्ध चलते थे, और इसमे वे लेशमात्र भी लज्जित न होते थे। कोई भी उनकी बातका जरा भी भरोसा या विश्वास नहीं कर सकता था।

राज्य बचानेके लिए लड़ाई और चालाकी (डिप्लोमेसी) दोनोंकी जरूरत होती है। लड़ाई भी समयका विचारकर और पहलेसे तैयारी करके करना उचित है, लेकिन मराठा-नीति तो हरसाल किसी न किसी

देशपर चढ़ाईके लिए फौज भेजनेकी थी। इस सालाना युद्धमें कुछ धन तो अवश्य मिलता था, परन्तु सेनाके नाश और शत्रुओंकी वृद्धिसे लाभके बदले हानि ही अधिक होती थी। इन सब अदूर-दर्शितापूर्ण चढाइयों, कुटिल पर-राष्ट्रनीति और षडयंत्रोंके अनुसरणके कारण मराठोंकी राजशक्ति धीरे-धीरे निर्बल होने लगी। दूसरी ओर उसी समय चालाक, दृढ संकल्पवाले विदेशी बनिये स्थिर बुद्धिसे धीरे-धीरे आगे बढ़ने लगे। क्रमशः अपनी शक्ति और प्रभाव बढाकर अठारहवीं शताब्दीके अन्तमें वे भारतके सार्वभौम प्रभु बन बैठे, और मराठा-जाति अंग्रेजोंके अधीन हो गई। यह प्रकृतिकी अपरिहार्य कृति थी।

शिवाजीका चरित्र

मराठोंके गौरवका अन्त चाहे जब हुआ हो, परन्तु उसके लिए शिवाजी जिम्मेवार नहीं। इस जातीय पतनने उनकी कीर्तिको मलिन नहीं किया बल्कि उलटा दृष्टान्त दिखाकर, उसे और भी अधिक धवल कर दिया है। शिवाजीका चरित्र अनेक सद्गुणोंसे भरा था। उनकी मातृ-भक्ति, सन्तान-प्रीति, इन्द्रिय-निग्रह, धर्मानुराग, साधु-सन्तोंके प्रति भक्ति, विलासवर्जन, श्रमशीलता और सब सम्प्रदायोंके ऊपर उदार भाव उस युगके अन्य किसी राजवंशमें ही नहीं, अनेक गृहस्थोंके घरोंमें भी अतुलनीय था। वे अपने राज्यकी सारी शक्ति लगाकर स्त्रियोंकी सतीत्व-रक्षा करते, अपनी फौजकी उद्दंडताका दमन करके सब धर्मोंके उपासना-घरों और शास्त्रोंके प्रति सम्मान दिखलाते और साधु-सन्तोंका पालन पोषण करते थे।

वे स्वयं निष्ठावान् भक्त हिन्दू थे, भजन और कीर्तन सुननेके लिए अधीर रहते थे, साधु संन्यासियोंकी पद-सेवा करते थे और

गो-ब्राह्मणके प्रतिपालक थे। युद्ध-यात्रामें कहीं 'कुरान' मिलनेसे उसे नष्ट या अपवित्र न करते, बल्कि बड़े यत्नसे रख देते और पीछे किसी मुसलमानको दान कर देते थे। मस्जिद और इसलामी मठ (ख़ानका) पर वे कभी आक्रमण न करते थे। कट्टर मुसलमान इतिहासकार ख़फ़ीख़ाँने भी शिवाजीकी मृत्युका उल्लेख करते समय लिखा था—"काफ़िर जहन्नुममें गया"। परन्तु उसने भी शिवाजीके सच्चरित्र, पर-स्त्रीको माताके समान मानना, दया, दाक्षिण्य और सब धर्मोंको समान प्रतिष्ठासे देखना, आदि दुर्लभ गुणोंकी मुक्तकंठसे प्रशसा की है। शिवाजीका राज्य था 'हिन्दवी स्वराज', पर अनेक मुसलमान उनके अधीन नौकरी पाते थे, और ऊँचे पदोंपर प्रतिष्ठित होते थे। [दृष्टान्तके लिए अँग्रेजी भाषामें लिखे हुए हमारे ग्रन्थ शिवाजीके तृतीय सस्करणका पृष्ठ ४०२ देखिए।]

उनके राज्यमे सब जातियाँ और सब धर्म-सम्प्रदाय अपनी अपनी उपासनाकी स्वाधीनता और संसारमें उन्नति करनेका समान सुयोग पाते थे। देशमें शान्ति और सुविचार, सुनीतिकी जय और प्रजाके धन-मानकी रक्षाके एकमात्र कारण वे ही थे। भारतवर्षके समान नाना वर्ण और धर्मके लोगोसे भरे हुए देशमे शिवाजी द्वारा संचालित इस राजनीतिसे बढ़कर उदार और कल्याण करनेवाली किसी भी दूसरी नीतिकी कल्पना नहीं की जा सकती।

शिवाजीकी प्रतिभा और मौलिकता

आदमीको देखते ही उसके चरित्र और ताक़तको ठीक समझकर हरएकको उसकी योग्यताके अनुसार काममें लगाना प्रकृत राजाके गुण हैं; शिवाजीमें भी यह आश्चर्यजनक गुण था। उनके चरित्रकी

है; कहाँपर रुकना चाहिए; किस समय कैसी नीतिका अवलम्बन करना चाहिए; इतने आदमी और इतने धनसे ठीक-ठीक कौन-कौन काम करना सम्भव है—ये सब बाते वे एक क्षणमे ही समझ जाते थे। यही सब बातें उनकी ऊँची राजनीतिक प्रतिभाकी परिचायक थीं। यही कार्यकुशलता और अनुभवपूर्ण बुद्धि उनके जीवनकी आश्चर्यजनक सफलताके मुख्य कारण थे।

शिवाजीका राज्य लोप हो गया। उनके वंशके लोग आज ज़मींदारमात्र है, परन्तु मराठा-जातिको नवजीवन प्रदान करनेके कारण उनकी कीर्ति अमर है। उनके जीवनव्यापी परिश्रमके कारण ही एक छितराई हुई पराधीन जाति दृढ़ हुई, उसने अपनी शक्तिको समझा और वह उन्नतिके शिखरपर पहुँची। इस सब कारणोसे हम शिवाजीको हिन्दू जातिका अंतिम मौलिक संगठनकर्ता और राजनीति-क्षेत्रका श्रेष्ठ कर्मवीर कह सकते है। उनकी शासन-पद्धति, सैन्य-संगठन और कार्यकलाप सब अपना ही उत्पन्न किया हुआ था। रणजीत-सिंह अथवा महादजी सिन्धियाकी नाई उन्होने फरासीसी सेनापतियो अथवा शासनकर्ताओकी सहायता नहीं ली थी। उनकी राज्य-व्यवस्था बहुत दिन तक स्थायी रही, और पेशवाओके समयमे भी आदर्श गिनी जाती रही।

निरक्षर गॅवार बालक, शिवाजीने कितना मामूली मसाला लेकर, चारों ओरके कैसे भिन्न-भिन्न प्रतापी शत्रुओसे लड़कर अपनेको—साथ ही साथ उस मराठा-जातिको—स्वाधीनताके आसनपर बैठाया था, यह कहानी भारतके इतिहासमे अमर रहेगी। उस आदि युगके गुप्त और पाल साम्राज्यके बाद शिवाजीको छोड़कर और किसी दूसरे

हिन्दूने इतना बड़ा पराक्रम नहीं दिखाया।

बिखरे हुए, अनेको राज्योमे बँटे हुए, मुसलमान शासकोंके अधीन और दूसरोके नौकर मराठोंको बुला कर शिवाजीने पहले अपने कामके द्वारा यह दिखा दिया कि वे स्वयं अपने मालिक होकर लड़ सकते हैं। उसके बाद स्वाधीन राज्यकी स्थापना कर, उन्होंने यह सिद्ध कर दिया कि वर्तमान समयके हिन्दू भी राष्ट्रके सब विभागोंके काम चला सकते है; राज-काजके बन्दोबस्त करनेमे, जल या स्थल युद्ध करनेमें, साहित्य और शिल्पकी पुष्टि करनेमे, व्यापारी जहाज तैयार करके संचालन करनेमे और अपने धर्मकी रक्षा करनेमे वे समर्थ है और देशकी राष्ट्रीयताको पूर्णता प्रदान करनेकी शक्ति अब भी उनमें विद्यमान् है।

शिवाजीके चरित्रके ऊपर विचार करनेसे हमे यह शिक्षा मिलती है कि प्रयागके अक्षयवटकी तरह हिन्दू-जातिका प्राण अमर है। सैकड़ों वर्ष तक बाधाओ और विपत्तियोको झेलकर भी पुनः सिर ऊँचा करनेकी और नये शाखा-पल्लव फैलानेकी ताक़त उसमे छिपी है। धर्म-राज्य-स्थापन करनेसे, चरित्रको दृढ रखनेसे, नीति और नियमके ऊपर चलनेकी विधिको अन्तरात्मासे मान लेनेसे, जन्मभूमिको अपने स्वार्थसे बढ़कर समझनेसे, बातूनी होनेके बजाय चुपचाप कार्य करनेका लक्ष्य रखनेसे ही—जाति अमर और अजेय होती है।

परिशिष्ट

घटनावली और महत्त्वपूर्ण तारीखें

[इस ग्रन्थमें सब तारीखें पुराने ईसवी केलेण्डरके अनुसार ही दी गई हैं । यह पुराना केलेण्डर इंग्लैण्डमें सन् १७५२ ई० तक जारी रहा । शिवाजीके समय नये केलेण्डरकी तारीखे प्रायः दस दिन आगे रहती थीं । फरासीसी, पुर्तगाली और डच ग्रन्थोमे तारीखे नए केलेण्डरके अनुसार ही दी गई हैं, उन्हें मैंने पुराने केलेण्डरकी तारीखोमे बदल दिया है । परन्तु हिजरी या हिन्दू संवतोंको ईसवी सन्की तारीखोमे परिणत करनेके कई एक तरीके हैं जिनसे कहीं कहीं एकाध दिनका फर्क पड़ जाता है । मैंने तो स्वामी कन्नू पिल्लाई कृत 'इण्डियन एफ़ीमरीज़' में दी गई तालिकाओंका ही उपयोग किया है ।]

शि०—शिवाजी, ल०—लगभग ।

१६२६

१४ मई—मलिक अम्बरकी मृत्यु; फतहखॉ निजामशाहीका वजीर बना।

१६२७

१० अप्रेल—शिवाजीका जन्म ।

१२ सितम्बर—इब्राहिम अदिलशाहकी मृत्यु; मुहम्मद अदिलशाहका गद्दीपर बैठना ।

२९ अक्टूबर—जहॉगीर बादशाहकी मृत्यु ।

१६२८

४ फरवरी—शाहजहॉका तख्तपर बैठना ।

ल० नवम्बर—शाहजीका मुग़ल खानदेशपर आक्रमण; वहॉसे उनका खदेड़ा जाना ।

१६३०

ल० दिसम्बर—शाहजीका मुग़लोंसे आ मिलना; जून १६६२ ई० में शाहजीने मुगलोका साथ छोड़ दिया ।

१६३३

१७ जून—मुगलोंका दौलताबाद लेना (दौलताबादमें हुसैन निजामशाहका पकड़ा जाना)।
अगस्त—शाहजीका नाममात्रके एक निजामशाहको गद्दी बिठाना।

१६३५

जनवरी-फरवरी—मुगल-सेनापति खानदौरानका शाहजीका पीछा करना।
ल० अक्टूबर—बीजापुरमें वजीर खवासखाँकी हत्या।

१६३६

जुलाई-अक्टूबर—बीजापुरियोंकी मदद लेकर खान ज़मानका माहुली तक शाहजीका पीछा कर उन्हें बुरी तरह हराना। नाममात्रके निजामशाहको छोड़ कर शाहजीका बीजापुरकी नौकरी स्वीकार करना।

१६३७

शिवाजी एवं उनकी माताका शिवनेरसे पूना लाया जाना।

१६३९

शिवाजी अपने पिताके पास बंगलौर गए, परन्तु वहाँसे पीछे पूना भेज दिए गए।

१६४६

मुहम्मद अदिलशाह सख्त बीमार हो गया एवं अपनी मृत्यु तक (१६५६ ई०) असहाय बना रहा।
? शिवाजीका तोरना किला लेना।

१६४७

मई या जून—दादाजी कोण्डदेवकी मृत्यु।
? शिवाजीका कोण्डाना (किला) लेना।

१६४८

१५ जुलाई—मुरादबख्शका मुगलोंके दक्षिणी सूबेका सूबेदार नियुक्त होना।

२५ जुलाई—अदिलशाही सेनापतिका जिंजीके सामने शाहजीको कैद करना।

१६४९

१६ मई—शाहजीका बीजापुरी कैदसे छुटकारा।

सितम्बर—मुरादबख्शके बजाय शायस्ताखाँका मुगलोंके दक्षिणी सूबेका सूबेदार नियुक्त होना। मुराद दिसम्बर महीनेमें दक्षिणसे लौटकर दिल्ली पहुँचा।

१६५६

१५ जनवरी—शिवाजीका जावली लेना।

६ अप्रेल—शि०का रायगढ आकर उस किलेको लेना।

२८ अगस्त—बाजी चन्द्रराव मोरेका शिवाजीके पाससे भाग जाना।

२४ सितम्बर—शि०ने मोहितेको कैद कर सूपापर दखल किया।

४ नवम्बर—मुहम्मद अदिलशाहकी मृत्यु; अली (द्वितीय) का गद्दी बैठना।

१६५७

२८ फरवरी—औरंगजेबका बीदरके पास पहुँचना। २ मार्चको घेरा डाला एवं २९ मार्चको बीदरका किला ले लिया।

२७ अप्रेल—औरंगजेबका कल्याणीके लिए रवाना होना; वहाँके अधिकारियोंने १ अगस्तको आत्मसर्पण कर दिया।

ल० २७–२८ अप्रेल—अहमदनगर लूटनेका शि०का विफल प्रयत्न।

३० अप्रेल—शिवाजीका जुन्नर लूटना।

१४ मई—शम्भाजीका जन्म।

४ जून—अहमदनगरके पास नासिरीखाँका शिवाजीको हराना।

२४ अक्टूबर—शिवाजीका कल्याण-भिवण्डी लेना।

११ नवम्बर—वजीर खाँ मुहम्मदकी बीजापुरमें हत्या।

१६५८

८ जनवरी—शिवाजीका माहुली लेना।

१४ जनवरी—शि०का राजगढ जाना।

२५ जनवरी—शाही तख्तके लिए आपसी युद्धमें भाग लेनेके लिए औरंगाबादसे औरंगजेबका रवाना होना। २० मार्चको वह बुरहानपुरसे आगे बढा।

२१ जुलाई—औरंगजेबकी प्रथम तख्तनशीनी।

३० अगस्त—शि०का दूत सोनजीको दिल्ली भेजना।

१६५९

१० मार्च—शि०का राजगढसे शिवपाटन जाना।

ल० अप्रेल—अफजलखाँकी सहायता करनेके लिए अदिलशाहका मावलके देशमुखोंको हुक्म देना।

११ जुलाई—शि०का जावली जाना।

५ सितम्बर—शिवाजीकी पत्नी, साईबाईकी मृत्यु।

११ नवम्बर—अफ़ज़लखाँका मारा जाना, एवं उसकी सेनाकी हार।

२८ नवम्बर—शि० पन्हालाके लिए रवाना हुए और २ दिसम्बरको वहाँ पहुँच गये।

?—शिवाजीका दण्डा शहर लेना।

२८ दिसम्बर—रुस्तमखाँ और फज़लखाँकी कोल्हापुरके पास शि० के हाथो हार।

१६६०

ल० ५ जनवरी—शि०का डाभोल पर धावा।

ल० १० जनवरी—शि०का राजापुर बन्दरपर पहला धावा।

१४ जनवरी—शि०का गदगकी ओरके बीजापुरी प्रदेशपर धावा।

२५ फरवरी—शायस्तखाँ अहमदनगरसे रवाना हुआ।

२ मार्च—शि०का पन्हालामें प्रवेश एवं सिद्धी जौहरका पन्हालाका घेरा डालना।

९ मई—शायस्ताखाँका पूना पहुँचना।

६ जून—शि०का वसोता लेना।

२१ जून—शायस्ताखाँका चाकण पहुँचना, वहाँ घेरा डाल कर १५ अगस्तको उसे लेना।

१३ जुलाई—शि०का पन्हालासे निकल भागना।

ल० २६ अगस्त शायस्ताखाँका चाकणसे पूना लौटना।

२२ सितम्बर—जौहरका पन्हाला लेना।

२० नवम्बर—बीजापुरी किलेदार ग़ालिबका रुपया लेकर परेण्डाके क़िलेको मुग़लोंको सौंप देना।

१६६१

३ फरवरी—शि० का कारतलबखाँको उम्बरखिंडमे हराना।

फरवरी—शि०का निजामपुर लूटना एवं डाभोल प्रभावलीको लेना।

ल० ३ मार्च—शि० का राजापुरपर दख़ल करना एवं वहाँ अँग्रेजी व्यापारियोको कैद करना। ये व्यापारी ल० ५ फरवरी, १६६३को छूटे।

२९ अप्रेल—शि०का शृंगारपुरमे प्रवेश।

ल० मई—मुगलोंका शि०से कल्याण ले लेना।

ल० ३ जून—शि०का महाड़मे दो दिन ठहरना। शिवाजीने गर्मीका मौसिम वर्धनगढ़में ही बिताया।

२१ अगस्त—बुलाकीद्वारा देहरीपर डाले गए घेरेका कावजी कोंघलकर द्वारा उठवाया जाना।

१६६२

जनवरी-मार्च (?)—शि०का मिर्यां डोंगरमें नामदार खाँको हराना; और पेन पर शि०का धावा।

१६६३

मार्च—मुग़लोंने बहुत दूर तक नेताजीका पीछा किया।

३० मार्च—शि० का रायगढ़ (या राजगढ, जो अधिक सम्भव है) में निवास।

५ अप्रेल—रातके समय पूनाके डेरेमें शि० का शायस्ताखाँपर धावा।

मई—शि०का कुडाल होता हुआ वेंगुर्ला (ल० १८ मईके) जाना और वहाँसे शीघ्र ही लौटना।

नवम्बर—जसवंतका कोण्डानाका घेरा डालना।

१६६४

६–१० जनवरी—शिवाजीका पहली बार सूरत बन्दर लूटना।

ल० १५ जनवरी—शायस्ताखाँका औरंगाबादसे बदली होकर रवाना होना एवं उसके बजाय शाहजादा मुअज्जमका सूबेदार बनाया जाना।

२३ जनवरी—शाहजीकी मृत्यु।

५ फरवरी—शि०का राजगढको लौट जाना।

ल० फरवरी—बेदनूरके राजा, भद्राप्पाकी हत्या।

२८ मई—जसवंतका कोण्डाना किलेका घेरा उठा लेना, और ३० मईको शिवाजीका कोण्डाना किलेमें जाना।

जुलाई—शि०का अहमदनगरपर धावा।

अक्टूबर—शि०का मुधोलके घोरपड़ोको मरवाना।

ल० २५ अक्टूबर—बीजापुरी खवासखाँका शिवाजीको हराना, और जल्द ही शि०का अपनी शक्ति फिर बढ़ा लेना।

नवम्बर—शि०का सावन्तवाडी जीतना।

ल० ५ दिसम्बर—शि०का वेंगुर्ला लूटना।

ल० १० दिसम्बर—मरहठोंका पहली बार हुबलीको लूटना।

१६६५

८ फरवरी—मालवणसे जहाजमें बैठकर शि०का जाना और बसरूर लूटना; लौटते समय गोकर्णमें स्नान करना। २२ फरवरीको कारवार पहुँचना और २३ फरवरीको भीमगढके लिए रवाना हो जाना।

३ मार्च—जयसिंहका पूना पहुँचना।

१४ मार्च—शि० भीमगढ़में (यह स्थान कारवारसे २५ मील उत्तरमें है)।

३० मार्च—दिलेरखाँका पुरन्दरके पास डेरा डालकर उस किलेका घेरा डालना।

१४ अप्रेल—रुद्रमालका मुगलोंके हाथ आना।

११ जून—पुरन्दरके सामने शि०की जयसिंहसे भेंट; १२ जूनको शि०की दिलेरखाँसे भेंट।

१२-१३ जून—पुरन्दरकी सन्धि ।

१४ जून—शि०का लश्करसे राजगढके लिए रवाना होना ।

१८ जून—शम्भूजीका जयसिंहके पास पहुँचना ।

जून-जुलाई—बीजापुरके मन्त्री, बहलोल (प्रथम), की मृत्यु ।

२७ सितम्बर—शि०का पुरन्दरके पास जयसिंहके लश्करमे लौट आना, और ३० सितम्बरको उनका शाही फरमान पाना ।

अक्टूबर-नवम्बर—शि०का बीजापुरियोंके पाससे कुडाल और वेंगुर्लाके सिवाय सारे दक्षिणी कोंकणको पुनः जीत लेना ।

२० नवम्बर—बीजापुरपर आक्रमणके लिए जयसिंह और शि०का रवाना होना ।

२५ दिसम्बर—बीजापुरियोंके साथ प्रथम युद्ध; २८ दिसम्बरको दूसरा युद्ध ।

५ जनवरी—बीजापुरके पाससे जयसिंहका पीछे हटना ।

१६६६

११ जनवरी—पन्हालापर आक्रमणके लिए जयसिंहका शि०को भेजना ।

१६ जनवरी—पन्हालापर शि०के आक्रमणका विफल होना ।

फरवरी-मार्च—फोण्डा किले पर शि०के प्रथम आक्रमणका विफल होना ।

५ मार्च—शि०का आगराके लिए रवाना होना ।

२० मार्च—बीजापुरियोंको छोडकर नेताजी पालकरका पुनः जयसिंहके साथ आ मिलना ।

१२ मई—शि०का आगरेके पास जा पहुँचना ।

१३ मई—शि०का औरंगजेबके दरबारमें हाजिर होना ।

१८ अगस्त—शि०का आगरासे भागना ।

२० अगस्त—रघुनाथ कोर्डेका आगरामे कैद होना ।

ल० १३ सितम्बर—शि०का लौटकर राजगढ पहुँचना ।

दिसम्बर—देवरुखमें मराठोंने पीर मियाँ और ताजखाँकी हत्या की ।

१६६७

२३ मार्च—जयसिंहका दक्षिणसे वापिस बुलाया जाना, और उसकी जगह मुअज्जमको सूबेदार बनाकर भेजना।

अप्रेल—शिवाजीका पत्र लिखकर औरंगजेबकी अधीनता स्वीकार करना।

३ अप्रेल—त्र्यम्बक और रघुनाथका आगरासे भाग निकलना।

ल० १–८ मई—बीजापुरकी तरफसे बहलोल और व्यंकोजीका रांगनाके किलेका घेरा डालना; शिवाजीका उस घेरेको उठवाना।

२८ अगस्त—जयसिंहकी बुरहानपुरमें मृत्यु।

अगस्त—शि०का अदिलशाहसे संधि करना।

२७ अक्टूबर—शम्भूजीका औरंगाबाद पहुँचना, २८ अक्टूबरको जसवंतसे और ४ नवम्बरको मुअज्जमसे मिलकर ५ नवम्बरको औरंगाबादसे वापिस रवाना हो जाना।

१६६८

९ मार्च—मुअज्जमका शि० को लिखना कि बादशाह औरंगजेबने शि० को राजाकी उपाधि प्रदान की है।

५ अगस्त—औरंगाबादमे शाही सेनाके साथ रहनेको प्रतापरावका मराठी सेना लेकर जाना।

अक्टूबर—गोए (Goa) पर अचानक धावा करनेके शिवाजीके इरादेका जाहिर और विफल हो जाना।

ल० २० अक्टूबर—चौलके नजदीक अष्टमी नगरमें शिवाजीका निवास।

नवम्बर—रत्नागिरी प्रदेशके किलोंकी देख-भाल कर दिसम्बरके प्रारम्भमे शिवाजीका रायगढ़ लौट आना।

१६६९

ल० १ मार्च—शिवाजीका शान्तिपूर्वक रायगढ़मे निवास।

अप्रेल—सिद्दियोंका शिवाजीके कुछ किलोंका घेरा डालना।

९ अप्रेल—सारे मुग़ल साम्राज्यमे मन्दिर तोड़नेके लिए औरंगजेबका एक आम हुक्म जारी करना। बनारसका विश्वेश्वरका मंदिर अगस्त १६६९ ई॰ में तोड़ा गया; मथुरामे केशवरायका मन्दिर १६७० ई॰ मे तोड़ा गया।

मई-अक्टूबर—जंजीराके सिद्दियोंपर शिवाजी पूरे बलके साथ आक्रमण करते रहे।

अक्टूबर—लूदीखॉका कल्याणकी रक्षा करना।

ल॰ १ नवम्बर—शि॰का पुर्तुगाली जहाजोको जीतना, एवं पुर्तुगालियोका शि॰ से बदला लेना।

१६७०

ल॰ १ जनवरी—शिवाजीका मुग़लोंके साथ फिर युद्ध छेड़ना। प्रतापरावका औरंगाबादसे देशको लौटना।

४ फरवरी—तानाजीका कोण्डाना (सिंहगढ) जीतना व मृत्यु।

२४ फरवरी—राजारामका जन्म। शिवाजीका पुनः पुरन्दर जीतना—४ मार्च; कल्याण जीतना—ल॰ १५मार्च; लोहगढ जीतना—१३ मई; माहुली जीतना—१६ जून; करनाला जीतना—२२ जून; रोहिडा जीतना—२४ जून।

अगस्त—शिवाजीका मुग़ल प्रदेशपर आक्रमण, शिवनेरपर आक्रमणका विफल होना; जंजीरापर पूरे बलके साथ आक्रमण।

३-५ अक्टूबर—शिवाजीका दूसरी बार सूरतको लूटना।

१७ अक्टूबर—डिण्डोरीका युद्ध।

ल॰ २५ अक्टूबर—मोरोपंतका त्र्यम्बक किला लेना।

ल॰ २४ नवम्बर—शि॰का सेना लेकर बम्बईके उत्तरमे जाना एवं २६ नवम्बरको पीछा लौट पड़ना।

दिसम्बर—शिवाजीका अहिवन्त, आदि किलोंको लेना, खानदेश एवं बरार और करिंजाको लूटना।

१६७१

ल॰ ५ जनवरी—शि॰का साल्हेर लेना।

ल॰ १५ फरवरी—सिद्दी कासिमका दण्डा वापिस ले लेना।

शुरू फरवरी—महाबत और दिलेरखाँने अहिवन्तका घेरा डाला।
मई—महाबतका अहिवन्त आदि किलोंको छीन लेला।
जून ?—बहादुर और दिलेरका साल्हेरका घेरा डालना। अक्टूबरमें उन्होंने घेरा उठाया।
सितम्बर—शि०के दूतका बम्बई जाना।
अक्टूबर—शि०का रायगढमे ठहरना।
दिसम्बर—दिलेरखाँका पूना लूटना व कत्ले-आम करना।

१६७२

ल० १० जनवरी—दिलेर खाँका सामना करनेके लिए महाडमें शि०का सेना इकठ्ठी करना।
ल० १-७ फरवरी—इखलासखाँ, मुहकमसिंह आदि मुगल सेनापतियोंको हरा कर मोरोपंतका साल्हेरके तले (मराठीमे 'माची') का घेरा उठाना, और बादमें मुल्हेर लेना।
ल० १५ फरवरी—शि० रायगढमे।
ल० १५ मार्च ८ मई—लेफ्टिनेण्ट उस्टिकका दूत बनकर शि०के पास रायगढ जाना, और उसका मनोरथ विफल होना।
२१ अप्रेल—अब्दुल्ला कुतुबशाहकी मृत्यु;अबुल हसनका गद्दीपर बैठना।
जून—मुअज्जमका दक्षिणसे लौट जाना। अगस्त १६७७ तक बहादुर खाँ ही सूबेदारीका काम करता रहा।
५ जून—मोरोपन्तका जौहर शहर और रामनगर (ल० १९ जूनके) लेना।
जुलाई—मोरो पन्तकी नासिक प्रदेशपर चढाई।
२४ नवम्बर—अली (द्वितीय) की मृत्यु; सिकन्दर अदिल शाहका गद्दीपर बैठना और खवासखाँका (तीन वर्षके लिए) वजीर बनना।
नवम्बर-दिसम्बर—बरार और तेलिंगानेपर मराठोंके आक्रमणोंको मुगलोंका विफल बना देना।
२९ दिसम्बर—बीजापुरके साथ शि०की संधिका अन्त, और शि०की बीजपुरपर चढ़ाई।

१६७३

६ मार्च—शि० द्वारा भेजे गए अनाजीका पन्हाला किला ले लेना।

९ मार्च—शि०का रायगढसे रवाना होकर ल० १६ मार्चको पन्हाला पहुँचना।

१ अप्रेल—शि०का पार्ली किला ले लेना।

ल० १५ अप्रेल—उमराणीका युद्ध।

शुरू मई—प्रतापरावका दूसरी बार हुबलीको लूटना। बहलोलका मराठे आक्रमणकारियोंको कनाड़ा बालाघाटसे बाहिर करना, और फिर कोल्हापुरमें अपना अड्डा जमाकर जूनसे अगस्त तक मराठोंको खूब दबाना।

२ जून—तीर्थयात्रा करके शि०का रायगढ लौट आना।

२७ जुलाई—शि०का सतारा ले लेना।

१० अक्टूबर (दशहरा-विजयादशमी) शि०का स्वयं कनाड़ापर चढ़ाईके लिए रवाना होना; १३ अक्टूबर (शिवपुर यादीके अनुसार ७ अक्टूबर) को पाण्डवगढ लेना और बंकापुर लूटना।

ल० १५ अक्टूबरके १२ दिसम्बर—शि० कनाड़ापर चढ़ाईमें लगे रहे। नवम्बर—युद्धमें शर्जाखाँका विठोजी शिंदेको मारना।

४-८ दिसम्बर—शि० काडरामे, अदिलशाही सेनाके हाथों उनकी सेनाकी दो बार हार।

१६ दिसम्बर—शि०का कनाड़ासे लौटना।

१६७४

ल० २०जनवरी—कोंकणपर चढाई करनेका दिलेरखाँका विफल प्रयत्न।

२४ फरवरी—नेसरीमें प्रतापरावका मारा जाना।

ल० १ मार्च—शि०की पत्नी काशीबाईकी मृत्यु।

२३ मार्च—आनन्दरावका सॉपगॉवके बाज़ारको लूटना और बादमे खिज़िरखॉसे युद्ध।

मार्च—दौलतखॉका मुचकुण्डी खाड़ीमे सिद्दियोंके जहाज़ी बेड़ेको हराना।

३ अप्रेल—नारायण शेणवीकी रायगढमे शिवाजीसे भेट।

८ अप्रेल—शिवाजीका चिपळूणमें अपनी सेनाका निरीक्षण करना; २२

अप्रेलको कारवारके पास पहुँचना; और २४ अप्रेलको केलंजा लेना।

७ अप्रेल—खैबरघाटीके विद्रोहको दबानेके लिए हसन अब्दल जानेको औरंगजेबका दिल्लीसे रवाना होना। २७ मार्च १६७६ को वापिस दिल्ली लौट आना।

१२ मई—चिपलूणकी यात्रा कर शिवाजीका रायगढ़ लौटना।

१६ मई—शि०का तीर्थयात्राके लिए प्रतापगढ़ जाना और वहाँसे लौटकर २१ मईको रायगढ पहुँचना।

२८ मई—शिवाजीका जनेऊ पहनना; ३० मईको वैदिक रीतिसे शि०का विवाह हुआ।

६ जून—शिवाजीका राज्याभिषेक, राज्याभिषेक शकका प्रारम्भ।

८ जून—शिवाजीका पुनः विवाह, इस बार कोई भी वैदिक विधि न हुई।

१८ जून—जीजाबाईकी मृत्यु।

ल० १५ जुलाई—शिवाजीका पेडगॉवमे बहादुरखाँके लश्करको लूटना।

ल० २६ अगस्त—अनाजीका कुडाल जा पहुँचना, एवं मुहम्मदखाँका अनाजीके इरादोंको विफल करना।

२४ सितम्बर—शिवाजीका द्वितीय राज्यारोहण।

नवम्बर—१५ दिसम्बर—बगलाना और खानदेशपर शिवाजीका आक्रमण।

१६७५

आखिर जनवरी—कोल्हापुर प्रदेशपर दत्ताजीका आक्रमण।

४ फरवरी—शम्भूजीको जनेऊ पहिनाना।

ल० १५ फरवरी—मुगलोंका कल्याण लूटना।

६ मार्च—शिवाजीका आक्रमणके लिए रवाना होना, कोल्हापुर लेना, २२ मार्चको राजापुर पहुँचकर वहाँ चार दिन ठहरना; अंग्रेज व्यापारियोंकी शि० से भेंट; बादमे शि०का कुडालकी और बढ़ना।

८ अप्रेल—शिवाजीका फोण्डा किलेका घेरा डालना, और ६ मईको उसे ले लेना। शि०के सेनापतिका २६ अप्रेलको कारवार शहर जलाना।

मई—शिवाजीका शिवेश्वर, अंकोला, कारवार किला, आदि ले लेना।

मार्च-मई—सन्धिके बाबत झूठे प्रस्तावो द्वारा शिवाजीका बहादुरखाँको बेवकूफ बनाना।

१२ जून—रायगढ लौटते समय राजापुरके पाससे शिवाजीका गुजरना।

जून-अगस्त—सुन्डा प्रदेशपर मरहठोंकी चढ़ाई।

जुलाई-दिसम्बर—जंजीरापर बड़ी चढ़ाई एवं उसका विफल होना।

७ सितम्बर—शिवाजी रायगढमें; आस्टेनका अँग्रेज दूत बनकर वहाँ जाना।

नवम्बर—बहादुरखाँकी उत्तरी कोकणपर चढ़ाई।

११ नवम्बर—बहलोलका खवासखाँको पकड़कर कैद करना और (आगामी दो वर्षोंके लिए) बीजापुरका वज़ीर बनना।

१६७६

१८ जनवरी—बहलोलका खवासखाँकी हत्या करना। बीजापुरमे गृह-युद्ध।

जनवरी-मार्च—शिवाजीका सख्त बीमार पड़ना; उनके पूरी तरह चंगे हो जानेका उल्लेख अप्रेलमे लिखे सूरतके पत्रमें है।

मई—मोरोपन्तका रामनगर ले लेना; मई महीनेके अन्तमें रायगढ़ वापिस लौट आना।

३१ मई—बहलोलपर आक्रमण करनेके लिए हलसंगीके पास बहादुर खाँका भीमाको पार करना।

१ जून—हलसंगीमें बहलोलका बहादुरखाँको हराना; इस्लामखाँका मारा जाना (मासीर-इ-आलमगीरीके अनुसार १३ जूनको ये घटनाएँ घटीं।)

१९ जून—प्रायश्चित करवाकर नेताजी पालकरको पुनः हिन्दू बनाना।

जून-दिसम्बर—जंजीरापर पुनः आक्रमण।

शुरू अक्टूबर—नारायण शेणवीका रायगढ़में होना।

१ नवम्बर—शम्भूजीका शृंगारपुर जाना।

दिसम्बर—सिद्दी सम्बालका जैतापुर जलाना।

१६७७

जनवरी—येलबुर्गाके पास हम्बीररावका हुसैनखाँ मियानाको हराना।

फरवरी—शि०का हैदराबाद पहुँचना· वहाँ एक मास तक ठहर कर मार्चमें कर्नाटक जानेके लिए वहाँसे रवाना होना।

ल० २४ मार्च-१ अप्रेल—शिवाजी श्रीशैलमें।

४ मई—तिरुपतिमें पूजाके लिए एक ब्राह्मणको शिवाजीने दान पत्र दिया।

ल० ५ मई—मद्रासके पास पेड्डापोलम नामक स्थानपर शि०का पहुँचना· उनके घुडसवारोंका ९ मईको काजीवरम होते हुए जिंजी जाना।

ल० १३ मई—रुपया पाकर जिंजीके किलेदारका शिवाजीको किला दे देना. ल० १५ मईके शिवाजीका जिंजी पहुँचना।

ल० २३ मई—शिवाजीका वेलूर पहुँचकर वहाँका घेरा डालना।

२६ जून—शिवाजीका तिरुवडी पहुँचना, शेरखाँ लोदीको हराना; शेरखाँका भागकर २७ जूनको बोनगिरपटमको जाना और शिवाजीका उस किलेका भी घेरा डालना।

५ जुलाई—शेरखाँका सन्धिकर शिवाजीको अपने प्रदेश दे देना।

ल० १२ जुलाई—कोलेरुण नदी किनारे तिरुमलवाड़ी स्थानपर शिवाजीका पहुँचना।

ल० २३ जुलाई—व्यंकोजीका शिवाजीके लश्करसे भागना।

ल० २७ जुलाई—शेरखाँका तिरुमलवाड़ीसे लौट कर ३१ जुलाईको तुंदुमगुर्ती, १–३ अगस्तको वृद्धाचलम, २२ सितम्बरको वणिकम्-वाड़ी और ३ अक्टूबरको मद्राससे दो मंजिलकी दूरीतक जा पहुँचना।

ल० २ सितम्बर—दमनके पुर्तगालियों और मरहठोंकी मुठभेड़।

अक्टूबर—अर्नी किलाका शिवाजीके हाथमें आना।

ल० ५ नवम्बर—कोंकणको लौटते समय शिवाजीका मैसूरके पठारपर चढ़ना।

१६ नवम्बर—अहिरीके पास व्यंकोजीका संताजीपर आक्रमण।

नवम्बर—दत्ताजीका तीसरी बार हुबलीको लूटना ।

दिसम्बर—शिवाजीके दूत, पीताम्बर शेणवीका गोआ पहुँचना ।

२३ दिसम्बर—लम्बी बीमारीके बाद बहलोलखाँकी मृत्यु ।

७ जुलाई—बहादुरखाँका कुलबर्गा लेना, और २ अगस्तको (मासीर-इ-आलमगीरीके अनुसार १४ मईको) नलदुर्ग लेना ।

अगस्त—बहादुरका दक्षिणसे वापिस बुलाया जाना; सूबेदारीका काम दिलेरखाँको सौंपा जाना ।

सितम्बर—दिलेरकी गोलकोण्डापर चढाई; मालखेड़मे हराया जाकर नलदुर्ग तक खदेड़ा जाना ।

नवम्बर—बीजापुरकी ओरसे मसूदका दिलेरके साथ लज्जाजनक सन्धि करना ।

१६७८

जनवरी—मोरोपन्त त्र्यम्बकका नासिक आदि लूटना ।

ल० १६ जनवरी—शि० लक्ष्मीश्वरमे ।

ल० २३ जनवरी—२३ फरवरी—शिवाजीका बेलवाड़ीका घेरा डालना ।

२१ फरवरी—सिद्दी मसूदका बीजापुरका वज़ीर बनना ।

ल० ४ अप्रेल—शिवाजीका पन्हाला पहुँचना ।

ल० २५ अप्रेल—मराठोंका मुंगी-पट्टण लूटना ।

मई (?)—शिवनेर जीतनेको शिवाजीके दूसरे प्रयत्नका विफल होना ।

मई—शिवाजीका रायगढ लौटना ।

२१ जुलाई—वेलूरका शिवाजीके अधीन होना ।

ल० १ सितंम्बर—पीताम्बर शेणवीकी गोआमे मृत्यु ।

१८ सितम्बर—मुअज्जम (बहादुरशाह) की दक्षिणकी सूबेदारीपर पुनः नियुक्ति ।

अक्टूबर—दौलतखाँका जंजीरापर गोले बरसाना ।

दिसम्बर—रघुनाथ शेणवी कोठारीका गोआसे दूत बनाकर शिवाजीके

पास भेजा जाना।

१३ दिसम्बर—शम्भूजीका भागकर दिलेरखाँसे जा मिलना।

१६७९

२५ फरवरी—शाह आलमका औरंगाबाद पहुँचना।

३ मार्च—मोरोपन्तका कोपल किला लेना।

२ अप्रेल—दिलेरखाँका भूपालगड लेना।

२ अप्रेल—औरंगजेबका हिन्दुओंपर पुनः जज़िया कर लगाना।

९ अप्रेल—आनन्दरावका बालापुर लेना।

१८ अगस्त—बीजापुरपर आक्रमण करनेके लिए दिलेरखाँका भीमा पार कर १६ सितम्बर तक वहीं मुकाम करना।

सितम्बर—मुगलोंका मंगलबीड़ा लेना।

ल० १० सितम्बर—शि०का खाण्डेरी टापूको लेकर वहाँ किला बनाना।

१९ सितम्बर—अँग्रेजों और शि०की नौसेनाओंके बीच पहली लड़ाई; दूसरी लड़ाई १८ अक्टूबरको हुई।

७ अक्टूबर—दिलेरका बीजापुर किलेके पास पहुँचना; १४ नवम्बरको वहाँसे वापिस रवाना होना।

३० अक्टूबर—आदिलशाहकी मदद करनेके लिए शि०का सेलगुर आना।

४ नवम्बर—मुगल-प्रदेशपर आक्रमण करनेके लिए शि०का सेलगुरसे रवाना होना।

ल० १५-१८ नवम्बर—शि०का जालना लूटना, रणमस्तखाँके साथ तीन दिन तक युद्ध।

ल० २१ नवम्बर—शि०का पट्टा पहुँचना; और वहाँ पन्द्रह दिन तक मुकाम करना।

२० नवम्बर—दिलेरका अथनी लूटना; २१ नवम्बरको शम्भूजीक उसके लश्करसे निकल भागना।

३० नवम्बर—शम्भूजीका बीजापुरसे भागना, और ल० ४ दिसम्बरके पन्हाला पहुँचना।

ल० ४-२५ दिसम्बर—शि०का रायगढ़में निवास (?)

१६८०

ल० १ जनवरी—शि०का पन्हाला पहुँचना।

१३ जनवरी—पन्हालामे शि०की शम्भूजीसे भेंट।

२६ जनवरी—उंदेरी टापूपर दौलतखाँके आक्रमणका विफल होना।

फरवरी (?)—शि०का पन्हालासे रायगढको लौटना।

७ मार्च—राजारामको जनेऊ पहनाना।

१५ मार्च—राजारामका विवाह।

२२ मार्च—शि०की आखरी बीमारीका आरंभ।

४ अप्रेल—शि०की मृत्यु।

परन्तु इसमे सिर्फ तारीखें और सन्-संवत् दिये गये हैं, जिनमेंसे बहुत-से गलत भी साबित हुए हैं। तथापि यह शकावली इतिहासकारके लिए काफी उपयोगी है।

इतने वर्षोंकी खोजके बाद मैंने पाया है कि शिवाजी-सम्बन्धी सबसे अनमोल और सच्चा सच्चा समकालीन वृत्तान्त एवं उनकी सही तारीखे तथा उनकी विस्तृत कहानी हमे फारसी तथा अँग्रेजी भाषामें प्राप्य सामग्रीमें मिलती है। ऐतिहासिक महत्त्वके लम्बे लम्बे खत और हाथका लिखा हुआ शाही दरबारकी कार्यवाहीका दैनिक विवरण (जो अखबारात-इ-दरबार-इ-मुअल्ला कहा जाता था) हमें फारसी भाषामे बहुत-सा मिलता है। उधर सूरत, राजापुर, वेंगुर्ला, कारवार और पश्चिम तटके बंदरोमे स्थित अँग्रेजोंकी कोठियोंके बनियोंके लिखे हुए पत्र, डायरी और सूचियाँ आज भी लंदनके इंडिया आफिसमे सुरक्षित हैं।

साथ ही जहाँ जहाँ मराठोका गोआके पुर्तगाली लोगोसे कोई सम्पर्क आया, या उनके बीच कोई झगड़ा उठ खड़ा हुआ, वहाँ वहाँका सब ठीक ठीक विवरण हमें पुर्तगाली भाषामे लिखा मिलता है। पुर्तगाली भाषामे प्राप्त इस सारी सामग्रीको ग्राण्ट डफने एक नजर भी न देखा था। केवेलियर पाडुरंग पिस्सुरलेकर नामक भारतीय विद्वानने इन सब कागजोंको खोजकर निकाला है और 'Portuguesas e Maratas' नामक ग्रंथमें उन्हें प्रकाशित किया है।

शिवाजीकी 'दाक्षिण-दिग्विजय'की सच्ची सच्ची हकीकत और तत्सम्बन्धी ठीक ठीक तारीखें पण्डिचरीके तत्कालीन गर्वनर मार्टिन साहिबकी डायरीमें हमें मिलती हैं। इसके शिवाय एक-दो और ग्रंथ भी हमे फ्रेंच भाषामें लिखे मिलते हैं जिनसे मराठोंके इतिहासपर प्रकाश पड़ता है।

राजस्थानी भाषामें उन्हीं दिनों लिखी गई कई एक चिट्ठियोका जयपुर-दरबारके दफ्तरखानेमे गत साल पता लगा था। शिवाजीके इतिहासके लिए ये सब अनमोल हैं। शिवाजीसम्बन्धी ऐतिहासिक सामग्रीकी खोजमें किस प्रकार सौभाग्य हमेशा मेरा साथ देता रहा, और कैसे दूर दूर प्रदेशोमे बिखरी हुई इस अज्ञात सामग्रीको मैंने ढूँढ निकाला, इसका पूरा पूरा हाल और इधर पिछले दिनोंमें प्राप्त महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक सामग्रीका अँग्रेजी अनुवाद मैंने अपने नवीन ग्रन्थ 'House of Shivaji: Documents and Studies in Marathā History' में प्रकाशित किया है।

हिन्दीमें हमें 'भूषण-ग्रंथावली' मिलती है, परन्तु ऐतिहासिक दृष्टिसे वह

किसी भी कामकी नहीं। इतिहासकारोंने खोजके बाद यह निश्चित कर दिया है कि शिवाजीके मृत्युके कोई दो वर्ष बाद भूषणका जन्म हुआ था!!!

संस्कृत भाषामे भी समकालीन लिखे हुए कमोबेश ऐतिहासिक महत्त्वके तीन ऐतिहासिक ग्रन्थ हमें मिलते हैं:—

(१) 'शिव-भारत'—शिवाजीके कवीन्द्र परमानन्दने इस ग्रन्थकी रचना की थी।

(२) जयरामकृत 'पर्णाल-पर्वतग्रहणमाख्यानम्'।

(३) 'शिवराज-राज्याभिषेक-कल्पतरु'।

इन सब ग्रथोंके ठीक ठीक ऐतिहासिक महत्त्वकी विवेचना, और अन्य ग्रन्थोकी सूची तथा उनका विस्तृत वर्णन मेरे अंग्रेजी ग्रन्थ 'शिवाजी' के तीसरे संस्करणमें विस्तारपूर्वक दिया गया है। इन आधार-ग्रन्थोकी पूरी जानकारी आदिके लिए उसे देखिए। विस्तारके भयसे उन सबका विवरण यहाँ नहीं दिया गया है।

अनुक्रमणिका

अकना १५८

अकबर (बादशाह) २३,२०७-२०८

अकोला १९३

अँग्रेज (व्यापारी)

उनकी सूरतकी कोठीकी रक्षा ६७-७१, ७३-४,१२०-२ कारवारमें शिवाजीका विरोध १९३-५

खान्देरीके लिए शिवाजीके साथ समुद्री युद्ध १८६-१८९

राजापुर कोठीकी नुकसानीका मामला १७२-१७७

अज्ञानदास (कवि) ५१

अडोर्नी २०२

अण्णाजी दत्तो २१९

अनन्तपुर १६१, १६३

अन्नाजी दत्त १५६

अफजलखाँ (उर्फ़ अब्दुल्ला भटियारा) ३०

—का शिवाजीके विरुद्ध जाना ४१-४३

—का शिवाजीसे भेंट और मृत्यु ४३-५१

—सम्बन्धी दन्तकथाएँ ५१-५२

अफजलपुरा ५२,

अबुलफतह (शायस्तखाँका पुत्र) ६३

अब्दुल अजीजखाँ १३२, १३३, २०४

अब्दुल्लाखाँ सुलतान १२१

अब्दुल्लाखाँ हब्शी १६४

अबेकरे (फ्रेंच यात्री) ५२

अमरसिंह चन्द्रावत १२८, १२९

अम्बिकाबाई (शिवाजीकी स्त्री) २३९

अरविन २४०

अर्काट १५२, १५३

अली आदिलशाह—आदिलशाहके नीचे देखो

असदखाँ ९९

अहमदखाँ ३१

अहमदनगर २, १४, १८, २६, ३७, ९३, १२५, १२९, १३०

निजामशाहीके नीचे भी देखो।

अहिवन्तगढ़ १२६, १२९

आकिल खाँ १०१

आक्सू नदी ७६

आगरा ६, ९७, ९८, १००, १०३, १०८, ११२, ११३, ११६, २३९

आग्रे घराना १८२

आथर्नी २१३

आदिलशाह—

अली आदिलशाह ३६, १३३

इब्राहिम आदिलशाह १८

मुहम्मद आदिलशाह २६, २७, ३०-१, ३६

सिकन्दर आदिलशाह १३३, २०२

आनन्दराव १२४, १२९, १३६-७, २१२

आन्ध्रराज शातकर्णी १४१

आबाजी सोनदेव ४०

आमिनखाँ १०३
आम्बेर ९७, १०५, २३९
आरणी (अरणी) १५३, १६९
आसिरी किला ४०
इखलासखाँ मियाना १२४, १२९
इनायतखाँ ६७, ७२, ७३
इन्दापुर २८
इब्राहिम आदिलशाह—आदिलशाहके नीचे देखो
इब्राहिमखाँ १६७
उग्रसेन कछवाहा ८४
उदयभान ११७, ११८
उदयराज ८४
उन्देरी १८९
उनराणीकी लड़ाई १३४–५
उम्बरखिंड ५८
उस्टिक १७४ फु०
एण्टनी स्मिथ ७१–२
ओर्मे २४०
औरंगजेब
—और खैबरवाटके अफगान १३०, १३८
—और बीजापुर ३८, १७०
—और शंभूजी—शंभूजीके नीचे देखो
—और शिवाजी—शिवाजीके नीचे देखो
—जजिया कर लगाना २०६–२११
—दक्षिणका सूबेदार ३६–३८
—सिंहासनके लिए युद्ध ३९
औरंगाबाद ६५, ७५, ७९, ९६, ११५, १३२, १४९, २१३, २१४
कडापा १५२
कड्डालोर १६६,१६७
कनकगिरि १९
कनाड़ा (कन्नड़) २,१७२,१९०-१
—बीजापुरका आक्रमण १९१-२
—में युद्ध ५२,१३५,१३७,२०३
—शिवाजीद्वारा विजय १९२-१९७
कंदर्पी (किला) ३१
कंदहार ७६,११५
कयना नदी ५१
कर्नाटक (कर्णाटक) २४,२१८,२१९
—उसके राजनैतिक विभाग १५१-२
—बीजापुरी सरदारोंके आपसी झगड़े १५३-४
—वहाँकी परिस्थिति १५२
शिवाजीका आक्रमण १५४-७,१६३-७, १६९-१७१,२०१,२०३
कल्याण ३९,४०,६०,११९,१२०,१४९,१७८,१८०
कस्तूरी रंग (राजा) ४४
कन्होजी जेधे ४२
काबुल १०४
कारंजा १२६
कारवार १७२,१९०,२१८
—की लूट १९३-५
कारतलबखाँ उजबक ५८
कावेरी (नदी) १५२,१५३,१६५
काशी (बनारस) १०९
काशी (मराठा सरदार) ३७
काशीजी त्रिम्बासराव ११२
काशीबाई (शिवाजीकी स्त्री) २३८
कासिमखाँ मियाना २०३

कीरतसिह ८५,८९

कुडाला १९२,१९५

कुतुबशाह अबुल हसन १५२,१५४

शिवाजीसे भेंट और सधि १५७–१६१, १७०

शिवाजीसे विरोध १६५

कुतुबुद्दीनखाँ ८१

कुर्नूल (शहर) १६२

कुलबर्गा २०४

कृष्णदेव राय (सम्राट् विजयनगर) १६२

कृष्णा (नदी) २, १५१, १६१, १६२

कृष्णाजी अनन्त सभासद १४८, २२०

कृष्णाजी भास्कर ४३, ४५, ४६

कृष्णाजी मोरे (चन्द्रराव)–मोरेके नीचे देखो।

कृष्णाजी विश्वासराव ११२

केसरीसिंह २१४–५

कोंकण २, ८, ३३, ७८,

—पर शिवाजीका आक्रमण और अधिकार, ३९–४०, ४३, ६०, ११५, १७८–९, १९०, १९५

—में युद्ध ५१, ५४, ७९, १२५, १३७

कोंडाजी फ़र्जन्द १३३

कोंडाना (सिंहगढ़) २६, २८, ३१, ११७–११९

कोपल प्रदेश २०३, २१८

कोलाबा २, ४०, १७७, १७८, १९०

कोली—

—जाति २४

—प्रदेश १४९, २१८

कोलेरुण १६७, १६९, १७०, १७१

कोल्हापुर ३४, ५१, ५३, ५४, १३६, १४९, २१८

खण्डोजी खोपड़े ४२, ४३, ५१

खफ़ीखाँ (इतिहासकार) २५५

खवासखाँ (प्रथम) ४०

खवासखाँ (द्वितीय) १३३, १३४, १५०, १५३

खसरुपुरा २०५

खाटाव (किला) ९१

खानदेशमें लूटमार १८, ११०, १२७, १४९, १७२

खान मुहम्मद ३९, ४४

खान्देरी १८६, १८७, १८८, १८९

खारेपाटन ५९, १९०,

खालपुरा २०५

खिजिरखाँ १३७

खेलना (किला) ९१

खैबर घाटी १३०, १३९

गंगावती नदी १९७,२१८

गजपुर ५५

गणोजीराज शिर्के २३९

गदग महाल २०३

गया १०९

गागा भट्ट (विश्वेश्वर भट्ट) १४०,१४३, १४४,१४६,१४७

गायकवाड़ २३९

गिरिजाबाई (यादवरावकी स्त्री) १५,१६

गोआ ७७,१५१,१७२,१८१,१९०,१९५,१९७, २०३,२१८

—पर शिवाजीका अधिकार १६३–४, १६५, १७१, २१९
जीजाबाई
प्रारम्भिक जीवन १५, १७
मृत्यु १४८
राजप्रतिनिधि नियुक्त होना
राज्याभिषेकके समय १४१–२
शिवाजीको आशीर्वाद ४५, ४८, १४१
संतान १९–२०
जीवमहला हज्जाम ४७, ४९
जुन्नर १९, ३७
जौहर सिदी–जौहरके नीचे देखो
डिओगो डि मेली (कप्तान) ७७
डिंडोरीकी लड़ाई १२३
तंजोर (राज्य) १५३, १५४, १६७–९, १७१
तानाजी मालसुरे २८
—कोण्डाना-विजय और उनकी मृत्यु ११७-११८
तिरुपति १६३
तिरुमलवाड़ी १६७, १६८, १६९
तिरुवाड़ी १६६
तुकाबाई मोहिते (शाहजीकी दूसरी स्त्री) १९
तुकाराम (संत) ८, २३३
तुजुक गाजी बेग (मीर) ८५
तुलजापुर ३५, ४२
तेलिंगाना १३२
तेव्हेंनो (फ्रैंच यात्री) २४०
तोरणा २८
त्र्यम्बक सोनदेव दबीर १०८
थाथवड़ा (किला) ८९
थाना (जिला) २, ३९, १७८, १९७
दण्डा - राजपुरी १७५, १७७, १८०, १८४, १८५, १८६
दत्ताजी त्र्यम्बक १०६, २०३
दत्ताजी पंत २१९
दरिया सारंग १८२
दाऊदखाँ ७६, ८१, ८३, ११९, १२४-५ १२८, १२९
दादाजी कोण्डदेव २१, २२, २४, २५, २६, २८
दाभोल ६०
दामन ४१, १९७, २०३, २१८
दिलेरखाँ ९०, ९१,
—का बीजापुरपर आक्रमण २०४, २११-१३
—का भूपालगढ़ लेना २०६
—का मुअज्जमसे झगड़ा ११९, १२४
—का शिवाजीके विरुद्ध जाना १२४, १२९–३०, १३७–८
—की शिवाजीसे भेंट ८७
—पुरंदर किलेके सामने ७६, ८०–७
—शंभूजीका उससे आ मिलना २०५, २१५
दिल्ली ६, १८, ३९, ६५, ७९, ९४, ९५, ९७, १३८
देवलगॉंव १४
दौलतखाँ १८२, १८६, १८८-९
दौलताबाद १९

धरमपुर (राज्य) १३०
धारणगॉंव १७२,१७४,१७५
धारवाड़ २०१,२१९
धूलखेड गॉंव २११
धोडप १२७,१२८
धौलपुर १०८
नखरगॉंव १०८
नागोजी पण्डित १३४
नागोठाणा १८८,१८९
नारायण शेणवी १४७
नासिक २,१२४,१२५,१२९,१३०,१३२,२०३, २१५,२१८,२३३
नासिर मुहम्मद खॉं, १५३,१५४,१६३
नासिरीखॉं, ३७,३८,३९
निकोल्स १७४ फु.
निजामशाही राज्य, १४,१५,१८–१९
निम्बालकर घराना १७,१३९,२३८
निवृत्तिसंगम १६१
नीराजी राव १०६,१०८,१०९,११०,११५, १४७,१५६
नीलप्रभु (पारसनीस) १४७, २०६
नीलोजी (नीलकण्ठ नायक) ३१–३२
नीलो सोनदेव ९५
नेताजी पालकर ४५,५८,६१,८९,९२,९५,११३
नेसरी १३६
पट्टादुर्ग (विश्रामगढ़) २१५
पण्ढरपुर ७,४२
पन्ताजी गोपीनाथ ४५,४६
पनहाला ५६, १७२, २०२, २०५, २१३, २१५, २१६
—उसमे शिवाजीका घिर जाना ५४,५८
—शिवाजीका उसे पहली बार जीतना ५१, ५३
—शिवाजीका उसे दूसरी बार जीतना १३३–४
परमानन्द कवीन्द्र १०५
परशुराम क्षेत्र ५९
परेण्डा ९०
पलार नदी १५२
पल्लीवन ५९
पवनगढ़ ५४, ५५
पाण्डीचेरी १५४, १६६
पारगॉंव ४६
पारनेर १२९
पारली १३४, २३३
पिलाजी (नीलकण्ठ नायक) ३२
पिलाजी शिर्के ५९, २३८
पुतलाबाई (शिवाजीकी स्त्री) २३८
पुरन्दर किला—
—का घेरा ७९–८५, १९५
—की सन्धि ८५–८७, ९३, ११७
—शिवाजीका उसे पहली बार जीतना ३१–३२
—शिवाजीका उसे दूसरी बार जीतना ११९
पूना २, २८, ३२, ५७, २१८
—पर मुग़लोंका आक्रमण १२९–३०
—मुग़लोंके अधिकारमें ५७, ५८, ६१, ७८, ७९, ८३
—शाहजीकी जागीरमें १४,१८,२१-३

पेडगॉव १३२, १४९

पेड्डापोलम १६३

पेड्ने १९७ फु०

पेशवा (श्यामराज नीलकठ रांचेकर) २७

पेशावर ११४

पोलीगर ३१

प्रतापगढ ३५, ४३, ४५, ४६, ४७, ४८, ४९, १४२

प्रतापराव ११५, १२४, १२९, १९६

—उमरणीका युद्ध और मृत्यु १३५–१३७

प्रयाग १०९

प्रह्लादजी नीराजी (दूत) १५४, १५७

फजलखॉ ५१, ५३, ५४–५५, ७८

फतहखॉ (मलिक अम्बरका पुत्र) १८

फलटन १७, ८९

फारस (ईरान) ११४

फिरंगजी नरसाला २८, ५७–८

फोण्डा किला १४९, १९५–६

फौलादखॉ १०७

फ्रान्सिस थार्प १८७

फ्रासिसको ७७

फ्रासोयी मार्तिन १६५, १६६

बंकापुर १३७

बंगलोर ३१, ३२

बंगाल ६५

बगलाना १२३, १२५, १२६, १२७, १२९, १३०, १४९, २१८

बम्बई १, १०, २१, ६९, १३०, १७२, १७४, १७७, १८०, १८१, १८५, १८६, १८७, १९०, १९५, १९७, १९८, २४१

बरार ११६,१२६,१२७,१३२

बलिकन्तपुरम् १५३,१६९

बसई १९७

बसरा (बदर) १८३

बसरूर १९३–१९५

बह्मनी सामाज्य १४

बहरजी बोहरा ६६, ६९–७०

बहलोलखॉ १५३,२०३,२०४

—का वजीर बनना १५०,१५५

—का शिवाजीसे संधि करना १५०

—के युद्ध १३४–१३७

—की मृत्यु २०२

बहादुरखॉ १०४,१२९,१३०,१३२,१३३, १३८,१४९,१५०,१५५,१५६

बहिरजी २१५

बाजी पासलकर २८

बाजी प्रभु ५५–५६

बाजी मोरे (चन्द्रराव)–मोरेकी नीचे देखो

बाजीराव बोरपड़े २९–३०, १९१

बाबाजी बापूजी ६२

बाबाजी भोंसले १४

बारामती २८

बार्देश १९७, १९८

बालकृष्ण दीक्षित (मजमुयेदार) २७

बालम भट्ट १४०

बालाजी आबाजी १४०

बालाजी आवजी १४७

बिचोली १९७

बिदनौर ७७, १९०, १९१, १९३, १९७ २१९
बिसाजी नीलकंठ २११
बीजापुर १९, २१, ३२, ३५, ४०, ७३, ७८ ९२, ११३ १३३, १५१, १९१, १९३
—और शिवाजी २७–२९, ३१, ४१–२, ५४, १३४, १३७
—पर औरंगजेबका आक्रमण ३६, ३८
—पर जयसिंहकी चढ़ाई ८३, ८८–९०, ११३,
—पर दिलेरका आक्रमण २०४,२११–३,
बीदर (जिला) ३६
बुन्देलखण्ड ११०
बेलगाँव २०१,२१८,२१९
बेलवाड़ी २०१
बेलारी दुर्ग २०३
बेलूर—बेलूरके नीचे देखो
बोलगिरगढ़ १६६
भरुकच्छ (भड़ौंच) ६५
भवनाशी (नदी) १६१
भिवंडी ३१,४०,११९
भीमगढ़ १९५
भीमा नदी ३७,११०,१३२,२११,२१२
भूपालगढ़ २०६
भूषण (कवि) २४३
भेवार नदी १६६
भोंसले वंश—
—परिचय १३–१४,१५,१८
—समाजनें स्थान १३९,१४३
मंगलविडे ८९
मक्का-मदीना ६६,१२१,१८३
मथुरा १०६,१०८,२३१
मदुरा १५३,१६७
मद्रास ३९, १५०, १५१, १५२,१५३,१६३, १६९,२१९
मनुची, निकोलो ३८
मवा नायक १८२,१८७
मराठा
—चरित्रके दोष ११–१२
—जाति १०–११
—जातीय चरित्र ४–८
—भाषा और साहित्य १, २, ८–१०, २४ फुटनोट
—राज्यके पतनके कारण २४०–२५४
मलबार २,१८१
मलिक अम्बर १८
मलिक रिही ९४
महादजी निम्बालकर २३९
महादेव पर्वत १७,४२
महाबतखाँ १२८,१२९,१३०,२४२
महाराष्ट्र देश (विवरण) २–४
मानिकेश्वर ४२
मादन्ना १५४,१५५,१५७,१५८,१६०
माधवराव (पेशवा) २५०
मालवन ११०
मालोजी भोंसले १४–१७
मावल
—देश २४,२५
—मराठे २३,२४,३३,३५,८१,८५,८७,८८
माहुली ४०, ११९

मिरजान १९०
मिर्ज़ा अहमद १६०
मीनाजी भोंसले ३७
मीर अहमद २४०
मीर जुमला ३९,५७
मुअज्जम (शाहज़ादा शाह आलम) २४०
—दक्षिणकी सूबेदारी ६५, ७५, ७९, १२७, १३०
—दिलेरके साथ झगडा ११९–२०, १२४
—शिवाजीके साथ संधि ११५–११६
मुंगेर ७६
मुखलिस खॉ १००, १०१
मुजफ्फरखॉ १९६
मुधोल
—का घोरपड़े वंश २९–३०, १९१–१९२
मुरादबख्श (शाहज़ादा) ३१
मुरार बाजी प्रभु ८२, ८३
मुल्तफित खॉ ३७, १०१
मुल्ला अहमद ४०
मुल्हेर १२४, १२७, १२९
मुंशी गिरधरलाल ९८
मुस्तफ़ा खॉं २९–३०
मुहकमसिंह १२९
मुहम्मद आदिलशाह—आदिलशाहके नीचे देखो
मुहम्मद खॉ १९६–७
मूलचंद्र १०५
मैसूर १९, २१, ३१, ७७, १५१, १५२, १५३, १५४, १७१, २०१, २०३, २१९
मोचा (बदर) १८३
मोरे घराना ३२–५, १३९
—कृष्णाजी चन्द्रराव ३३–३४
—बाजी चन्द्रराव ७८
—सूर्यराव ३४
—हनुमन्तराव ३४
मोरेश्वर त्र्यम्बक पिंगले ९५
मोरोपन्त पेशवा ६१,१२७,१२९,१३०, १३१–२, १५६, २१९
मोरोपन्त (संत कवि) ८
यशवन्तराव (असदखानी) ३०
यशवन्तसिंह (जोधपुरके महाराजा) जसवंतसिंहके नीचे देखो ।
यादवराव, लखूजी (अहमदनगरका सेनापति) १४,१५,१७
येशाजी कंक २८,१६१
येसूबाई (शंभाजीकी स्त्री) २०५
रंगो नारायण १७२
रघुनाथ नारायण हनुमन्ते १५६,१७०,१७१
रघुनाथ बल्लाल कोर्डे २७,९६
—का दिल्ली जाना, ३८,१०८
—का मोरेको मारना ३३–४
—की जयसिंहसे भेंट ८३–४
रघुनाथराव (राघोबा) २५०
रणजीतसिंह २३
रणमस्तखॉ २१४
रत्नागिरी २,१०,३४,५१,५४,५९,१७२,१७३, १८०,१८२,१९०,१९२,१९३
रवीन्द्रनाथ ठाकुर (कवि) १९३ फु०
—के शिवाजीविषयक विचार २४८
राघवमित्र १०६

राजकुमारी बाई (शिवाजीकी स्त्री) २३९
राजगढ़ (किला) २८, ११८
राजसिंह (महाराणा) २१०
राजपुरी (दण्डा-) १७७,१७९
राजपुर ६०,१७२,१९०
—की अँग्रेजोंकी कोठी १७३–१७७
राजाराम (शिवाजीका पुत्र) २१६,२३८,२३९
रामगिर १३२
रामदास (स्वामी) ८, १४७
—और शिवाजी १४१, २३२–३,२३६
—का जीवनचरित और उपदेश २३३–२३६
—का राजनीतिक उपदेश २३६–८
रामनगर १३०, १३१
रामसिंह (आम्बेरका) ११४
—और शिवाजी ९४–१०८
रायगढ़ (किला) ३८,८८,९५,११०,१११, ११८, १४१, १४२, १४७, १५७, २१५, २१६, २३४, २३८
रायल एशियाटिक सोसाइटी (लन्दन) २१० फु०
रायसिंह सिसोदिया ८७
रायसीन परगना ३७
राव कर्ण (बीकानेरका) ३७
राह अन्दाज खॉ १०६
रुद्रमाल ८०, ८१
रुस्तम-ए-जमानी ५१,५३,१९०,१९१,१९२
रोहिडाखेरे ४२
लक्ष्मीश्वर नगर २०१
लखम सावंत (सावतवाड़ीका) १९२,१९९
लोदीखॉ ८१
वज्रगढ़ ८०, ८१
वर्णा (नदी) २
वाई गॉव ४२,४३,४६
वामन पंडित (सन्त कवि) ८
वासवपट्टन ७७
विक्रमशाह (जौहरका राजा) १३०
विजयनगर राज्य १५१,१६२,२०३
विठोजी १४,१६,१७
विठोबा २३३
विनायक लक्ष्मण भावे ४२
विरुल १४,१६
विशाजी ११२
विशालगढ़ ५४
विश्रामगढ़ (पट्टादुर्ग) २१५
वृद्धाचलम (तीर्थ) १६९
वेंगुरला १९०,१९५
वेलूर १५३,१६४,१६६,१७०,१७१
वैलेण्टाइन २४०
व्यंकोजी (उर्फ ऐकोजी) १९,८९
—उनका तंजोरपर अधिकार करना १५३, १५६
—उनका शाहजीकी सम्पत्तिपर अधिकार कर लेना ७५–६
—और शिवाजी १६८,१७१
शंकराजी ३१
शम्भाजी या शम्भूजी (शिवाजीके पुत्र) ८४ १४४,१८५,२३८,२५०
—आगरासे लौटना १०६,१०८,१०९,१११
—चरित्र २१६

—जयसिंहसे मिलना ८८
—दिलेरखाँसे जा मिलना २०४-५,२०६
—दिलेरखाँके पाससे लौट आना २१३,२१५
—शाहजादेके पास औरंगाबाद जाना ११५
—स्वामी रामदासका उपदेश २३६–८
शम्भूजी (शिवाजीके भाई) १९
शम्भूजी कावजी ३४,४७,४९
शम्भूजी मोहिते ३५,२३८
शर्जाखाँ १९६
शाष्टि (सालसिट) १९७
शातकर्णी (आंध्रराज) १४१–२
शाताजी १७०–१७१
शायस्ताखाँ ७७,१०४,१५७
—दक्षिणकी सूबेदारी मिलना ३७
—पूना और चाकन लेना ५६–५८
—पर शिवाजीका धावा ६०–६४
—बंगालकी सूबेदारी मिलना ६५
शाह अब्बास (द्वितीय)
—का पत्र २४२–३
शाहजहाँ ३१,७६,९७,२०७
शाहजी भोंसले (शिवाजीके पिता) १९,
—३५,१५६,१६०,१६८,१७०
—और जीजाबाई १५–१६,१७,१९–२०
—और तुकाबाई १९–२०
—और बीजापुर २१–२२,२६,४१
—और शिवाजी १९–२१,२८–३२,४१
—का कैद होकर छूटना २८–३२,१९१
—का प्रारम्भिक विवरण १८–१९
—की मृत्यु ७५,१९२
शाह हाशिम उलुवी २७
शिकाकोल १५२
शिधोजी निम्बालकर २१४
शिवतर गाँव २३४
शिवनेर १९,२२,१३२,२०३
शिवाजी—
—जन्म १९
—बाल्यकाल १९–२०
—चरित्र और शिक्षा २०–२३,२६–२७,
२५४–५५
—उनके मावले बन्धु २४–२५
—उनका स्वाधीन जीवन-प्रेम २५
—प्रथम राज्यविस्तार २७–२८
—बीजापुरको तीन किले समर्पण करना ३१
—राज्य विस्तार बढ़ाना ३२–३५
—मुगल-राज्यपर पहली चढ़ाई ३६–३९
—औरंगजेबके साथ संधि ३८
—उत्तर-कोंकण जीतना ३९–४०
—और अफजलखाँ ४०–५१
—दक्षिण महाराष्ट्रमें प्रवेश ५३-५६,५८-६०
—उनका पनहालामें घिर जाना ५५
—और शायस्ताखाँ ५६-५८,६०,६५
—सूरतकी पहली लूट ६५-७३,७५
—पुरन्दरकी संधि ८४-८८
—बीजापुरकी चढ़ाईमें सहायता देना
८८-९१
—शिवाजीका आगरा जाना ९१-९७
—औरंगजेबसे भेंट ९८-१०३

—आगरेमें नज़र बन्द होना १०३-१०४
—आगरेसे भाग निकलना १०४-१०७
—आगरेसे देशको लौटना १०८-११०
—औरंगज़ेबका इरादा ११२-११५
—मुगलोंके साथ पुनः सन्धि होना ११५-११६
—मुगलोंके हाथसे किले छुड़वाना ११७-११९
—सूरतकी दूसरी बार लूट १२०-१२३
—डिंडोरीकी लड़ाई १२३-१२५
—बरार और बगलानाकी पहली लूट १२६-१२७
—छत्रसाल बुन्देलासे भेंट १२७-८
—बगलानापर अधिकार करना १२८-१३०
—कोली देशपर अधिकार १३०-१३२
—बीजापुरके साथ संधिका भंग करना १३२-३
—पनहालेकी विजय १३३-४
—उमराणीकी लड़ाई १३४-१३६
—उनका राज्याभिषेक १३९-१४८
—उनकी बीमारी १५०
—गोलकुण्डाके सुल्तानसे भेंट और संधि १५७-१६२
—श्रीशैल दर्शनके लिए जाना १६२-३
—जिंजीपर अधिकार १६३
—कर्णाटक-विजय १६४—१६७,१६९—१७१
—व्यंकोजीका मामला १६७—१६९,१७१
—और राजापुरमें अँग्रेजोंकी कोठी १७२—१७७
—जंजीरेके सिद्दियोंसे युद्ध १७८-१८०, १८३-८६, १८९
—उनका नौ-दल १८०-८३
—अँग्रेजोंसे खान्देरीके लिए युद्ध १८६-१८९
—कनाड़ामें प्रवेश १९१-१९२
—बसरूर और कारवारकी लूट १९३-१९५
—फोंडादुर्गपर अधिकार १९५-१९७
—पुर्तगालियोंके साथ सम्बन्ध १९७-१९८, १९९-२००
—बेल्वाड़ीमें उनकी विफलता २०१-२
—बीजापुरपर अधिकार करनेमें विफलता २०२
—कोपल देशपर आक्रमण २०३
—और दिलेरखाँ २०४-२०६
—का जजियाके विरुद्ध औरंगज़ेबको पत्र २०६-२१०
—बीजापुरसे मिलकर दिलेरका विरोध करना २११-२१२
—जाल्नाकी लूट २१३
—उनका आफ़तसे बच निकलना २१४-१७
—अन्तिम बीमारी और मृत्यु २१३
—उनके राज्यका विस्तार और राज्य-विभाग २१८-२२०
—राज्यकी आमदनी २२०
—उनका शासन-प्रबन्ध २२०-२३१
—उनके गुरु—रामदास स्वामीके नीचे देखो।
—उनका परिवार—२३८-२३९
—उनकी शकल-सूरत २३९-२४१
—और औरंगजेब २४२-२४३

—उनकी प्रतिभा और मौलिकता २४४-५, २५५-२६०
शृंगारपुर ५९
शेरखॉं लोदी १५३,१५४,१६५–६,१६७ फु०
शेरखॉं हबशी १९४–१९५
शेरशाह २०
शोलापुर २
श्रीदेवी १६
श्रीरंगपत्तन १५१
श्रीरंगरावल १५१
सईद बेग ६६,६८,७०
सईबाई (शम्भाजीकी माता) २३८
संगमेश्वर ६०
सखुबाई (शिवाजीकी स्त्री) २३९
सज्जनगढ़ २३२
सतारा २,१७,२२,२३,२५,१३४,१५०,२३३, २३४
सत्येन्द्रनाथ ठाकुर १९३ फु०
सद्राज (बन्दर) १५२
सफसिकनखॉं ९६
सराय मलूकचन्द ९८
सह्याद्रि २,३,२२,२३,३३,३९,५४,१३०
सॉंकली १९७ फु०
सोकोवार बाई (शिवाजीकी स्त्री) २३८
सातवली नदी १८६
सॉंपगॉंव १३७
सार्जेण्ट मालिहरर १८८
सावन्तवाड़ी २,१९०
—के देसाई १९२,१९९
सावित्रीबाई २०१
सिकंदर आदिलशाह—आदिलशाहके नीचे देखो।
सिद्दी १७७–१७९
—उनके सरदारको 'याकूतखॉं'की उपाधि मिलना १८४
—मराठोंके साथ युद्ध १७८–१८०,१८३–१८६
सिद्दी कासिम १८३,१८६,१८९
सिद्दी खैरियत १८४
सिद्दी जौहर उर्फ सलावतखॉं ५४,५६,१३० १७२,१७३,२०२
सिद्दी फतहखॉं १८३
सिद्दी फौलादखॉं १०३
सिद्दी मसऊद २०२,२०४,२०५,२११,२१३
सिद्दी मिसरी १८२
सिद्दी सम्बल १८२,१८४,१८६
सिंधखेड १४
सिंहगढ़ (कोण्डाना) २६,६१,७५ ११७ कोण्डानाके नीचे भी देखो।
सीना (नदी) २
सुजानसिंह बुंदेला ७६
सुरगढ़ १८८ फु०
सुहाइली ६५,६७,६८,१२०–१२१,१२२–३
सूरत १३०,१७२,१८१,१८३,२०३,२३९
—की दुर्दशा १२२–१२३,१३१
—दूसरी लूट १२०–२,१२५
—पहली लूट ६७,७३,७५
—बंदरगाहकी दशा ६५–६७

सूर्याजी ११८
सेरा (किला) ४४
सेलगुल २१२–२१३
सैयद जान मुहम्मद २१४
सैयद बंदा ४७,४८,४९
सैयद मुर्तजाखाँ १०२
सोणाजी पंत (दबीर) २७,९६
सोनाजी पंडित ३७,३८
सोमसिंह राजा १३०
सोयराबाई (शिवाजीकी स्त्री) १४४,२३८
सौन्दा राज्य १९०, १९७
स्ट्रेन्सहाम १२१
हनुमन्ते घराना १५६
हरजी महाडिक २३९
हंसाजी (हम्बीरराव) मोहिते १३७,१७०
—उनको हम्बीररावकी पदवी मिलना १३७
—मृत्यु २१५
हाजी सैयद ६६,६८,१२३
हिंगनी १४
हिन्दूराव (दूत) २११
हीराजी फर्जन्द १०६-१०७
हुबली १७२,१७४,१९६
हुयान्‌चुयाङ्ग ५
हेनरी आक्सिण्डेन १७४,१७६
हेनरी रेविंग्टन १७२,१७३
हैदराबाद, १५८,१५९,१६१

शुद्धि-पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२७	७	रांचे	रांझे
३५	८	१६५६	१६६५
४४	फुटनोट	१६५६	१६५७
६१	९	तथा सेनापतिके	सेनापतिके
६१	१०	दो दलोंको	दो दल बनाकर
९८	१४	रातको पहरा	पहरा
१००	२	पाँच रुपए	पाँच हजार रुपए
१०३	६	राह	राद
१७२	७	आठ वर्ष	एक वर्ष
१९७	फुटनोट	१६६८	१६६१
२०६	११	१६७६	१६७९
२०६	१३	१३॥।–	१३।–
२१३	१६	१६७६	१६७९
२१५	९	हम्बीरराव काम आये	आनन्दराव घायल हुए
२१८	१३	दो शहर	दो प्रदेश
२१९	१९	शरद ऋतुमें	शरद ऋतुसे
२४४	११	राजाको	राज्यको
२४४	१३	तो वह	तो उनका राज्य
२४६	१७	एक दरजेका गँवार	समाजसे बाहर
२४७	१८	और सारस्वत	सारस्वत
२६५	२२	१२ मई	११ मई
२६५	२३	१३ मई	१२ मई
२७२	१४	बोनगिरपटम	बोनगिरपटन